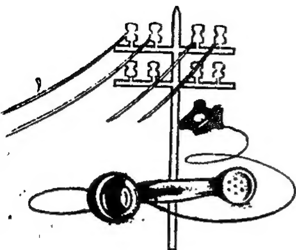
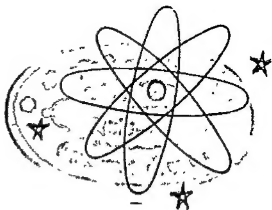
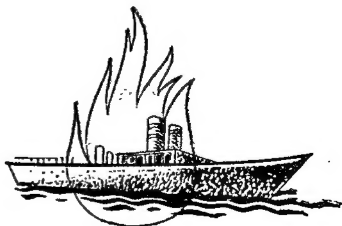




विज्ञान जगत





विज्ञान भारती
36-सी, कनाट प्लेस, नई दिल्ली

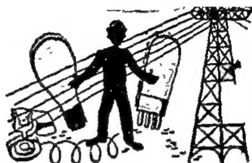
'अंडरस्टैंडिंग साइन्स' का हिन्दी-अनुवाद

अनुवादक : देवेन्द्रकुमार

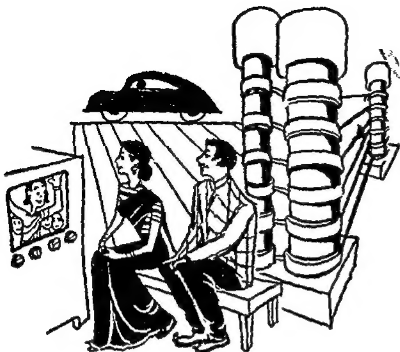
मूल्य : 10.00 रुपये

विज्ञान भारती : 36सी, कनाट प्लेस, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित

मुद्रक : न्यू मदन हाफटोन कम्पनी, दिल्ली



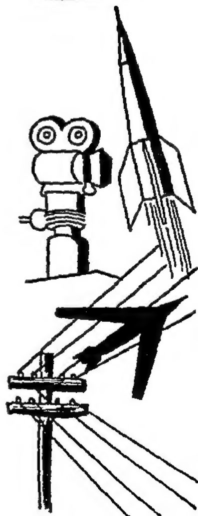
क्रम



अध्याय एक

विज्ञान और विचार

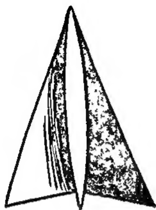




टेलीविज़न पर रंगीन चित्र कैसे दिखाई देते हैं? धरती से हज़ार मील दूर अन्तरिक्ष में घूमता हुआ प्लेटफार्म कैसे बन सकेगा? राकेट-यानों द्वारा चन्द्रलोक कैसे पहुंचा जा सकता है? धूप-बैटरी किसे कहते हैं? 'ट्रांसिस्टर' कैसे काम करता है?

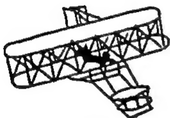
यदि इस तरह के सवाल कभी आपके मन में आते हैं तो आप-में वैज्ञानिक की सी जिज्ञासा मौजूद है। वैज्ञानिक दुनिया के सबसे अधिक जिज्ञासु लोग होते हैं—वे सदा अपने चारों ओर दीखनेवाले जगत् के बारे के तरह-तरह के सवाल पूछते रहते हैं। पर वे सवाल पूछकर ही नहीं रह जाते। इनके जवाब हासिल करने के लिए वे अध्ययन और प्रयोग भी करते हैं।

तो, यदि आप सवाल पूछते रहते हैं और आपको अपने चारों ओर की दुनिया में हो रही घटनाओं के बारे में जिज्ञासा है, तो आप भी उतने अंश में वैज्ञानिक हैं। और आपने पुस्तक को खोल लिया है: इसीसे आपकी वैज्ञानिक वृत्ति का पता चल



जाता है, क्योंकि आप अपने सवालों का जवाब जानना चाहते हैं। आप मोटर, पनडुब्बी, विमान, भू-उपग्रह, अन्तरिक्ष-यान (स्पेस-शिप), परमाणु-शक्ति, टेलीविज़न तथा उन दूसरी अद्भुत वस्तुओं के बारे में जानना चाहते हैं जो वैज्ञानिकों ने बनाई हैं या वे बना रहे हैं।

इन पृष्ठों में आपको वैज्ञानिकों की विधियों और उनके अनेक आविष्कारों के बारे में कुछ जानकारी प्राप्त होगी। हमारे आजकल के आविष्कारों के जन्म की कहानी सुनकर आप चकित रह जाएंगे। कारण यह है कि वैज्ञानिकों के विषय में कभी-कभी हम ऐसी धारणा बना लेते हैं, मानो वे कोई रहस्यमय लोग है जो विचित्र प्रकार की प्रयोगशालाओं में, अकेले ही, जादू की छड़ी घुमाकर चमत्कार कर डालते हैं। यह कहानी पढ़ने पर हमें पता चलेगा कि जिन खोजों के आधार पर हमारे आधुनिक आविष्कार हो सके हैं वे प्रायः अनेक व्यक्तियों के परिश्रम से ही हो सके हैं। हर बड़े आविष्कार या खोज का कहीं बीज या आरम्भबिंदु होता है। किसी आदमी के मन में एक बात आई, और उसने परीक्षण तथा प्रयोग किए। इस तरह एक विचार या मूल विचार पैदा हुआ। दूसरे आदमी ने इस मूल विचार को उठाया, इसपर आगे कार्य किया, इसमें हेर-फेर किया, और दूसरे लोगों को सौंप दिया। कभी-कभी इस सारे प्रक्रम में सैकड़ों वर्ष लगे।



उदाहरण के लिए, बिजली के कुछ प्रभावों की खोज पच्चीस सौ वर्ष पहले हुई थी। भाप का पहला इंजन दो हज़ार वर्ष से भी पहले बनाया गया था। कैमरे के बुनियादी सिद्धांतों का लगभग आठ सौ वर्ष पहले पता लग चुका था। विमान के सिद्धान्तों और हेलिकॉप्टर के एक खाके (डिज़ायन) का सुझाव, तथा पैराशूट या आकाश से उतरने की छतरी का आविष्कार चार सौ वर्ष से भी पहले सामने आ चुका था। फिर भी इन विचारों को ठोस क्रियात्मक आविष्कारों का रूप देने में सैकड़ों वर्ष लग गए।



इन आविष्कारों के विकास में सैकड़ों वर्ष लगने के बहुत-से कारण हैं। इनमें से एक बड़ा और महत्त्वपूर्ण कारण यह है कि पिछली शताब्दियों में लोगों को एक-दूसरे से मिलने-जुलने और विचार-विनिमय करने के लिए बहुत कम मौका मिलता था। न टेलीफोन थे और न भरोसा करने लायक डाक का प्रबन्ध ही था। एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुंचने में बड़ा समय लगता था और अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था क्योंकि न मोटरें थीं, न रेलगाड़ियां, और न इतनी सड़कें ही। पुस्तकें बहुत ही थोड़ी, मंहगी और दुर्लभ थीं। इसलिए जो आदमी कोई विज्ञान-सम्बन्धी खोज करता था, वह दुनिया के दूसरे देशों के लोगों को अपनी खोज के बारे में प्रायः कुछ भी नहीं बता पाता था। इस कारण दूसरे लोग उस खोज से कुछ भी लाभ नहीं उठा पाते थे। इस खोज को आगे बढ़ाने के बजाय दूसरे लोगों को पहले यह सारी खोज स्वयं करनी पड़ती थी।



आप समझ ही सकते हैं कि इन परिस्थितियों में वैज्ञानिक उन्नति की कुछ अधिक आशा नहीं हो सकती थी। जरा सोचिए कि बिजली या ध्वनि (शब्द) के बारे में बिना कुछ जाने टेलीफोन के आविष्कार की कोशिश की जा रही है! सौभाग्य से, टेलीफोन के आविष्कारक अलेग्ज़ेण्डर ग्राहम बेल को ये सिद्धांत स्वयं नहीं खोजने पड़े। उससे पहले के दूसरे लोग पहले ही इनकी खोज कर चुके थे। उन्होंने पुस्तकों में अपनी खोजों का विवरण दे दिया था जिन्हें बेल पढ़ सकता था।

आप समझ सकते हैं कि वैज्ञानिक कार्यकर्ताओं के लिए अपने से पहले की खोजों को जानना कितना महत्त्वपूर्ण है। एक इतालवी ने बिजली की ऐसी बैटरी बनाई जिससे बिजली की धारा (करेंट) का प्रवाह पैदा होता था। एक फ्रांसीसी ने चुंबक और बिजली के आपसी संबंध का पता लगाया। एक जर्मन ने विद्युत् प्रतिरोध (इलेक्ट्रिक रेज़िस्टेंस) के सिद्धांत खोज निकाले। और इन सब खोजों का लाभ उठाकर एक अमेरिकन ने टेलीफोन का



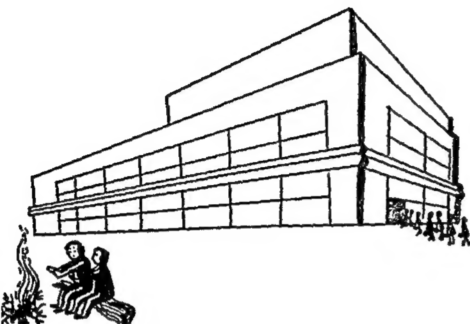


ग्राविष्कार कर लिया ।

पर यह ऐसा अकेला ही उदाहरण नहीं है। ग्राज का एक भी ग्राविष्कार ऐसा नहीं जो सारा किसी ग्रकेले व्यक्ति के प्रयत्नों से हो गया हो । ऐसी सब सफलताग्रों में ग्रनेक राष्ट्रों ग्रौर युगों के उन ग्रनेक नर-नारियों का योग है जिन्होंने मूल खोज की नींव रखी ।

लोग ग्राविष्कारों के साथ व्यक्तियों का नाम जोड़ दिया करते हैं। वे कहा करते है कि वाट ने भाप का इंजन निकाला, एडिसन ने बिजली का लट्टू बनाया, राइट बन्धुग्रों ने विमान का ग्राविष्कार किया। यह सच है कि इन मेधावियों के ग्राश्चर्य-जनक कार्यों के लिए इनकी जितनी प्रशंसा की जाए, थोड़ी है ; पर यह भी सच है कि इनमें से कोई भी ग्रकेला वह कार्य नहीं कर सकता था । उनसे पहलेवाले दूसरे लोगों ने कुछ मूल विचार उन्हें सौंपे थे, जिन्हें लेकर ही वे ग्रपने ग्रद्भुत ग्राविष्कार कर सके।

ग्रगले पृष्ठ पढ़ने पर ग्रापको पता चलेगा कि ग्रनेक राष्ट्रों के ग्रनेक महान पुरुषों के दिमागों से कितने महत्त्वपूर्ण विचार निकले । दिमाग पर किसी एक राष्ट्र का एकाधिकार नहीं है। वैज्ञानिक प्रगति ग्रबाध गति से होने के लिए ग्रनेक राष्ट्रों की महान प्रतिभाग्रों में विचारों का खुला ग्रादान-प्रदान ग्रावश्यक हैं । नये विचारों का प्रवाह सारे संसार के वैज्ञानिकों तक पहुंचता रहने पर ही विज्ञान की प्रगति ग्रौर ग्राविष्कार होते रहने का भरोसा किया जा सकता है ।



अध्याय दो

आग और परमाणु-शक्ति

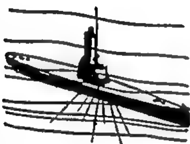
आग मनुष्य की उपयोगी और वफादार सेविका है। इससे आप भोजन पकाते हैं और सर्दियों में अपना घर गर्म करते हैं। इससे ही भाप बनती है, जिससे इंजन चलते हैं जो उद्योगों को शक्ति देते हैं। इसीसे वे इंजन चलते हैं जो बिजली के जेनरेटरों को घुमाते हैं जिनसे हमारी अधिकतर बिजली पैदा होती है। उद्योगों में यह हज़ारों कामों में आती है। आग का एक विशेष रूप, जिसमें ज्वाला जल्दी-जल्दी घटती-बढ़ती रहती है, हमारी *मोटर, ट्रकों, ट्रैक्टरों, डीज़ल गाड़ियों और विमानों के गैसोलीन* तथा तेल से इंजनों के लिए शक्ति पैदा करता है। मनुष्य के उद्योगों से पैदा होनेवाली जितनी भी वस्तुएं हैं—भोजन, कपड़ा, बिजली, मकान बनाने का सामान, पुस्तकें, मोटर बिजलीघर की मशीन—उसमें शायद ही कोई ऐसी हो जिसे बनाने और आप तक पहुंचाने में आग से मदद न ली गई हो।

पर वैज्ञानिक आग के बारे में यह कहते हैं कि हमारी

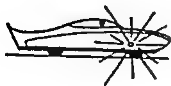


सभ्यता को जीवित रखने के लिए आवश्यक ऊष्मा (गर्मी) और ऊर्जा (शक्ति) प्राप्त करने का यह बड़ा अपव्ययवाला साधन है। कारण यह है कि जलाए जानेवाले ईंधन में जो ऊर्जा या शक्ति जमा होती है, उसके अरबवें हिस्से से भी कम आग जलने में काम आती है।

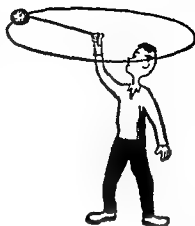
आप कह सकते हैं कि यदि ऐसी बात है तो हम ईंधन में जमा ऊर्जा का और अधिक हिस्सा अपने काम में लाने का तरीका क्यों नहीं निकाल लेते ? सारी ऊर्जा को क्यों न काम में लाया जाए ? अगर हम ऐसा कर सकें तो बड़ा अच्छा रहे, क्योंकि तब एक पौंड ईंधन से इतनी शक्ति प्राप्त हो जाएगी जो बड़े से बड़े जहाज को अमेरिका से यूरोप और वहां से वापस अमेरिका लाने के लिए या बड़े से बड़े विमान को दुनिया का चक्कर लगवा देने के लिए काफी होगी। एक औंस का बहुत थोड़ा-सा हिस्सा सारे जाड़ों में एक मकान को गर्म रखेगा, या एक मोटर को कई महीनों चला सकेगा।



मालूम होता है कि ये अद्भुत बातें अब शुरू ही होनेवाली हैं। कुछ पौंड ईंधन से महीनों चल सकनेवाली पनडुब्बियां समुद्र के भीतर चलनी शुरू हो चुकी हैं। अब ईंधन का प्रयोग करने की यह नई पद्धति बड़े जहाजों और विमानों पर लागू हो सकती है। इसके द्वारा मकान गर्म करने और रेल के इंजन और मोटरें चलाने की चर्चा चल रही है, और बिजली पैदा करने के कुछ नये कारखाने अब इस नई विधि से ही चल रहे हैं। आप समझ गए होंगे कि हम जिस नई पद्धति की बात कह रहे हैं, उसे 'परमाणु ऊर्जा' या 'परमाणु-शक्ति' कहा जाता है। हम सबने परामणु का नाम सुना हुआ है। बीसवीं शताब्दी के वर्तमान युग को हम परमाणु युग कहते हैं। हमें परमाणु के बारे में अवश्य कुछ जानकारी होनी चाहिए। हमारा सारा भविष्य परमाणु का तरह-तरह से प्रयोग करने पर निर्भर होगा। परमाणु की जानकारी हो जाने से हमें टेलीफोन, रेडियो, टेलीविजन, मोटर, विमान



श्रौर श्राज की दुनिया के श्रन्य विज्ञान-सम्बन्धी चमत्कारों की जानकारी प्राप्त करने में सुविधा होती है श्रौर इस प्रकार वैज्ञानिक सत्य को एक पूरी की पूरी नई दुनियां हमारी श्रांखों के श्रागे श्रा जाती है।



परमाणु को समझना कोई कठिन बात नहीं है। इसको तो श्राप ऐसा ही समझिए जैसे श्राप एक डोरी पर गेंद बांधकर श्रपने सिर के चारों श्रोर घुमा रहे हैं। हमारे जगत् की सब वस्तुएं परमाणुश्रों से बनी हुई हैं। श्रापके कपड़े, फर्श श्रौर फर्नीचर की लकड़ी, खिड़कियों का कांच, धातुश्रों की बनी लालटेन, श्रंगीठी की टाइल या ईंट श्रौर श्रन्य सब वस्तुएं लगभग नब्बे विभिन्न प्रकार के परमाणुश्रों से बनी हुई हैं।

एक विशेष प्रकार का परमाणु लोहा कहलाता है; श्रौर दूसरा श्राक्सीजन कहलाता है। इस प्रकार तांबा, चांदी, सोना, नाइट्रोजन, हाइड्रोजन श्रौर गन्धक हैं। ये विभिन्न पदार्थ 'तत्त्व' कहलाते हैं। उदाहरण के लिए, लोहा तत्त्व एक प्रकार के परमाणु का बना हुश्रा होता है। श्राक्सीजन तत्त्व एक दूसरे प्रकार के परमाणु का बना होता है। इन विभिन्न नब्बे प्रकार के परमाणुश्रों के श्रनेक तरह के मेल से, हमें चारों श्रोर दिखाई देनेवाली, लाखों चीजें बन जाती हैं। इसकी तुलना श्राप हमारी वर्णमाला के वर्णों से कर सकते हैं। (रोमन या श्रंग्रेजी) वर्णमाला में छब्बीस वर्ण हैं, पर उन वर्णों को श्रलग-श्रलग तरह से जोड़कर हम हजारों शब्द बना सकते हैं। इसी प्रकार विभिन्न तत्त्वों के परमाणुश्रों को श्रनेक तरह से मिलाकर संसार के श्रनेक पदार्थ बनाए जा सकते हैं। श्रागे चलकर हम इस विषय में कुछ श्रौर बातें बताएंगे। इस समय हम परमाणु के बारे में ही श्रधिक विस्तार से विचार करेंगे श्रौर इसकी बनावट के बारे में कुछ श्रौर बातों की जानकारी प्राप्त करेंगे।

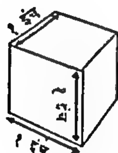
परमाणु

श्रकेले एक परमाणु को देखने की कोशिश करनेवाले श्रादमी


पानी की एक बूंद में
अरबों परमाणु होते हैं

को ऐसा समझना चाहिए कि जैसे वह समुद्र से कई मील ऊँपर उड़ता हुआ समुद्र में पानी की अकेली एक बूंद देखने की कोशिश कर रहा हो। उसे पानी की बहुत सारी इकट्ठी बूंदों का समूह दिखाई देगा, पर वह पानी की एक अकेली बूंद नहीं देख सकता। बहुत कुछ इसी तरह, हम बहुत सारे परमाणुओं के मिलने से बना हुआ रेत का एक कण, या पानी की एक बूंद देख सकते हैं; पर आज विज्ञान के पास ऐसी कोई विधि नहीं है जिसमे वह पानी की बूंद को इतना अधिक फैला दे कि एक अकेला परमाणु दीखने लगे—ये परमाणु बहुत ही अधिक छोटे होते हैं, सिर्फ एक बूंद पानी में लगभग ३३०० शंख परमाणु होते हैं। यह संख्या ३३०० के बाद अठारह शून्य लगाकर लिखी जाती है। सोचिए कि यदि आपको एक परमाणु गिनने में एक सेकंड लगे तो इतने सारे परमाणुओं को दिन-रात गिनते रहने पर कितना समय लगेगा ? इसमें एक सौ हजार अरब वर्ष लगेंगे! यह जानने पर कि एक बूंद पानी के परमाणुओं की संख्या गिनने में इतना लम्बा समय लगेगा, हमें परमाणुओं के छोटेपन का कुछ अन्दाज़ा हो सकता है।

पर इसके छोटा होने पर भी हमारे पास एक ऐसा उपकरण है जो अच्छे से अच्छे माइक्रोस्कोप से भी अधिक शक्तिशाली है। उसका प्रयोग करके हम परमाणु का काफी स्पष्ट चित्र अपने मन में खींच सकते हैं। वह उपकरण है हमारी कल्पना; और इसकी सहायता से हम परमाणु को इतना बड़ा कर सकते हैं कि इसकी बनावट की जांच की जा सके।

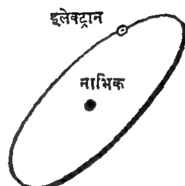


परमाणु की जांच

सबसे पहले सरलतम रूपवाले परमाणु—हाइड्रोजन के परमाणु—की जांच की जाए। हाइड्रोजन एक गैस है जो सब गैसों से हलकी है। सच पूछिए तो संसार का और कोई पदार्थ हाइड्रोजन जितना हलका नहीं है।

हम वायुमंडल के दाब (अर्थात् भूमि के तल पर पड़नेवाला

वायु का दाब) पर एक घनइंच हाइड्रोजन से विचार आरम्भ करेंगे। यदि यह ३२ अंश (डिग्री) फारेनहाइट तापक्रम पर हो तो इस एक घनइंच हाइड्रोजन में लगभग ८८० अरब अरब परमाणु होंगे। अब मान लीजिए कि हम इस घन के आकार को इतना बड़ा कर सकें कि इसमें पृथ्वी समा जाए, तब इसकी प्रत्येक भुजा आठ हज़ार मील लम्बी होगी। यदि घन के परमाणुओं को इतना ही बड़ा कर दिया जाए तो आप देखेंगे कि वे अब आंख से दीखने लगे हैं। क्या अब प्रत्येक परमाणु का व्यास १० इंच होगा।



परमाणु का अधिकांश खाली स्थान होता है

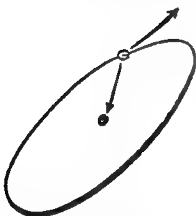
प्रथम तो आपने यह देखा कि परमाणु का अधिकांश खाली स्थान होता है। फिर यदि आप परमाणु के चलते हुए भागों की गति हलकी कर सकें तो आप देखेंगे कि इसमें दो कणों के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है! एक कण केन्द्र में है। दूसरा कण बड़ी तीव्र गति से इस केन्द्रीय कण के चारों ओर घूम रहा है—उसी तरह समझिए जैसे किसी डोरी के सिरे पर बंधी हुई गेंद आपके सिर के चारों ओर घूम रही है।

हाइड्रोजन परमाणु का केन्द्र एक अकेले कण का बना होता है, जो 'प्रोटान' कहलाता है। जो छोटा कण प्रोटान के चारों ओर अंधाधुंध घूम रहा है, वह 'इलेक्ट्रान' कहलाता है। इस प्रकार हाइड्रोजन परमाणु यह हुआ : केन्द्र में एक प्रोटान और इसके चारों ओर घूमता हुआ एक इलेक्ट्रान।

बिजली की पहेली

प्रोटान और इलेक्ट्रान बिजली के दो रूप हैं। प्रोटान पर धनात्मक बिजली का आवेश (चार्ज) होता है। इलेक्ट्रान पर ऋणात्मक बिजली (विद्युत्) का आवेश होता है।

इससे आगे हम कुछ नहीं कह सकते, क्योंकि हमारे सामने जगत् का एक महान रहस्य, अर्थात् बिजली की पहेली आ जाती है। अभी तक कोई यह नहीं बता सका कि बिजली के ये बुनियादी धनात्मक और ऋणात्मक आवेश वस्तुतः क्या



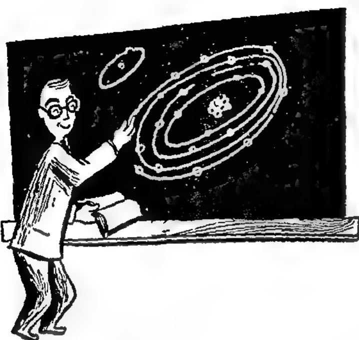
चीज हैं। पर इतनी बात हम अवश्य जानते हैं : वे दो बुनियादी उपादान हैं, जिनसे परमाणु की रचना हुई है।

इन दो क्षुद्र कणों, प्रोटान और इलेक्ट्रान के मध्य एक प्रबल आकर्षण होता है—यह वही आकर्षण है जो ऋणात्मक और धनात्मक विद्युत्-आवेशों के बीच सदा मौजूद होता है। यह आकर्षण इलेक्ट्रान को प्रोटान की ओर भीतर को खींचा करता है। इसके बल को संतुलित करनेवाली इलेक्ट्रान की ऋजु (सीधी) रेखा में गति करने की प्रवृत्ति इसे प्रतितुलित करती है। दूसरे शब्दों में, यदि आकर्षण न हो तो इलेक्ट्रान ऋजु रेखा में चलता हुआ प्रोटान से दूर उड़ जाएगा, पर प्रोटान और इलेक्ट्रान के बीच का आकर्षण इस प्रवृत्ति को रोके रखता है। और इस तरह इलेक्ट्रान प्रोटान के चारों ओर चक्कर काटता रहता है। यह बहुत कुछ उसी तरह के बलों का संयोजन या मेल होता है जो डोरी के सिरे पर बंधी गेंद घुमाने पर गतिमान होते हैं। यदि डोरी टूट जाए, तो गेंद आपके हाथ से छिटककर दूर जा पड़ेगी ; पर यदि वह नहीं टूटती तो डोरी आपके हाथ और गेंद के बीच आकर्षण-बल के रूप में कार्य करती है। डोरी गेंद को आपके सिर के चारों ओर एक गोल चक्कर में चलाती रहती है।

इस अध्याय में हमने जिन दो महत्त्वपूर्ण विचारों की चर्चा की है, वे ये हैं :

(१) संसार की सब भौतिक वस्तुएं छोटे-छोटे कणों की बनी हुई हैं जो परमाणु कहलाते हैं ; और

(२) हाइड्रोजन का परमाणु दो विद्युत्-कणों, एक प्रोटान और एक इलेक्ट्रान का बना होता है।



अध्याय तीन

अधिक संकुल परमाणु

हाइड्रोजन परमाणु सब परमाणुओं से सरल और हलका होता है। अन्य तत्वों के परमाणु इसकी अपेक्षा संकुल और भारी होते हैं। इनका वास्तविक भार बहुत ही थोड़ा होता है। एक पौण्ड में हाइड्रोजन के ७५४० लाख अरब अरब परमाणु चढ़ेंगे।

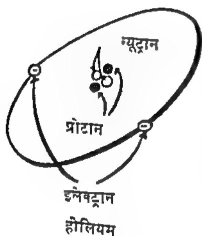
यदि सरलतम तत्त्व से अधिक संकुल तत्त्वों की ओर चलें, तो हाइड्रोजन से ऊपर अगला तत्त्व हीलियम है। हाइड्रोजन की तरह हीलियम भी गैस है। यह हाइड्रोजन से इस कारण भारी होता है कि इसके परमाणुओं में हाइड्रोजन के परमाणुओं की अपेक्षा अधिक कण होते हैं। पर हाइड्रोजन को छोड़कर, यह पृथ्वी का सबसे हलका पदार्थ है।



हाइड्रोजन सरलतम परमाणु
परमाणु भार—१

हीलियम के परमाणु के नाभिक (न्यूक्लियस) में दो प्रोटान होते हैं; और दो ही इलेक्ट्रान इसके चारों ओर घूमते हैं। पर हीलियम के नाभिक में दो प्रोटानों के अतिरिक्त दो अन्य कण भी होते हैं। ये अन्य कण प्रोटानों के समान संहति (मास) या भारवाले होते हुए भी विद्युत्-आवेश से रहित होते हैं। विद्युत्

की दृष्टि से उदासीन (न्यूट्रल) होने के कारण (अर्थात् धनात्मक या ऋणात्मक न होने के कारण) ये 'न्यूट्रान' कहलाते हैं। परमाणुओं के लिए न्यूट्रानों का बड़ा महत्त्व है, क्योंकि वे प्रोटानों की एक-दूसरे से अलग भाग जाने की स्वाभाविक प्रवृत्ति को रोके रखते हैं।



हीलियम

जैसे दो विजातीय विद्युत्-आवेशों के बीच सदा प्रबल आकर्षण होता है, ठीक वैसे ही दो सजातीय विद्युत्-आवेशों के बीच प्रबल प्रतिकर्षक बल, अर्थात् परे ढकेलनेवाला बल होता है। दो इलेक्ट्रान बहुत पास लाए जाएं तो वे एक-दूसरे से दूर जा पड़ेंगे। दो प्रोटान भी एक जगह लाने पर दूर-दूर हो जाएंगे—बशर्ते कि उन्हें एक जगह पकड़े रखने के लिए न्यूट्रान मौजूद न हों। न्यूट्रान एक तरह का बांधनेवाला बल या नाभिकीय 'गोंद' होते हैं जो हीलियम परमाणु के नाभिक में दो प्रोटानों को एक जगह मिलाए रखते हैं।

न्यूट्रान का भार प्रोटान के भार के लगभग बराबर होता है। इस प्रकार दो न्यूट्रानों और दो प्रोटानोंवाला हीलियम परमाणु एक हाइड्रोजन परमाणु से चार गुणा भारी होता है। इस कारण हीलियम का परमाणु भार ४ कहा जाता है। इस गणना में इलेक्ट्रानों का भार छोड़ दिया जाता है, क्योंकि १८४० इलेक्ट्रान एक प्रोटान या एक न्यूट्रान के बराबर भारी होते हैं।

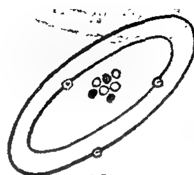
तीन कण जो हमारे जगत् की निर्माण-सामग्री है

- १ इलेक्ट्रान—ऋणात्मक भार में एक प्रोटान का १/१८४०
- २ प्रोटान—धनात्मक
- ३ न्यूट्रान—बिजली की दृष्टि में उदासीन

यदि किसी परमाणु के नाभिक में दो प्रोटानों के स्थान पर तीन प्रोटान हों, तो सामान्यतः उस नाभिक में चार न्यूट्रान होंगे। इस मेल से हमें गैस के स्थान पर एक ठोस वस्तु, लिथियम धातु, प्राप्त होती है। सामान्यतः लिथियम नाभिक के चारों ओर ३ इलेक्ट्रान घूमते हैं। ३ प्रोटानों और ४ न्यूट्रानोंवाले लिथियम परमाणु का परमाणु भार ७ होता है।

इसके बाद आनेवाले तत्त्व हैं बेरीलियम (४ प्रोटान, ५ न्यूट्रान, परमाणु भार ९); बोरन (५ प्रोटान, ५ न्यूट्रान, परमाणु

भार १०); कार्बन (६ और ६, परमाणु भार १२); नाइट्रोजन (७ और ७, परमाणु भार १४); आक्सीजन (८ और ८, परमाणु भार १६) इत्यादि। सामान्यतया प्रत्येक परमाणु में नाभिक के चारों ओर घूमनेवाले इलेक्ट्रानों की संख्या उसके नाभिक में मौजूद प्रोटानों की संख्या के बराबर होती है।

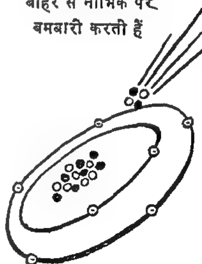


लीथियम

इन तथ्यों से यह स्पष्ट हो जाएगा कि किसी परमाणु में प्रोटानों और न्यूट्रानों की संख्या बदल देने से परमाणु एक तत्त्व से दूसरे तत्त्व में बदल जाएगा। शायद भविष्य में कोई ऐसा अलौकिक प्रतिभावाला आदमी पैदा हो जाए, जो प्रोटान, न्यूट्रान और इलेक्ट्रान लेकर उन्हें इच्छानुसार मिलाकर लोहा या आक्सीजन या सोना या कोई और तत्त्व बना ले।

हमने अभी तक इतनी प्रगति नहीं की है, पर हम एक तत्त्व को प्रोटान या न्यूट्रान 'गोलियों' की बमबारी से दूसरे तत्त्व में बदल चुके हैं। कुछ अवस्थाओं में इस बमबारी से ऐसे सर्वथा नये तत्त्व पैदा हो सकते हैं, जो प्रकृति में पहले कभी नहीं दिखाई दिए। ये विस्मयजनक कार्य उन अद्भुत उपकरणों से किए जा सकते हैं, जो वैज्ञानिकों ने बनाए हैं। ऐसा एक उपकरण प्रोटान या न्यूट्रान गोलियों की एक बौछार या प्रायः प्रोटान-न्यूट्रान मेल की गोलियों की बौछार किसी तत्त्व की कुछ मात्रा के भीतर पहुंचा देता है। जब गोलियां उस तत्त्व के परमाणु नाभिकों पर चोट करती हैं, तब वे प्रायः उस तत्त्व को एक दूसरे तत्त्व में बदल देती हैं।

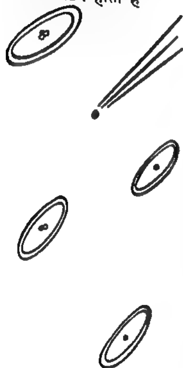
प्रोटान—न्यूट्रान गोलिया बाहर से नाभिक पर बमबारी करती हैं



इस प्रकार नाइट्रोजन को आक्सीजन में बदला जा सकता है; क्योंकि बमबारी से (सात प्रोटानोंवाला) नाइट्रोजन परमाणु एक प्रोटान और प्राप्त कर लेता है, जिससे इसमें आठ प्रोटान हो जाते हैं, और यह आक्सीजन बन जाता है। एक तत्त्व का इस तरह दूसरे तत्त्व में बदल जाना 'तत्त्वांतरण' (ट्रान्सम्यूटेशन) कहलाता है। यद्यपि तत्त्वांतरण कहने में, बिलकुल सरल और सीधा काम लगता है, पर यह कार्य बड़ी कठिनाई से होता है।

इसका कारण यह है कि परमाणु का नाभिक बहुत छोटा

परमाणुओं के बीच इतना खाली स्थान होता है, और नाभिक इतने छोटे होते हैं कि उन पर चोट करना कठिन होता है



होता है, और खाली स्थान में मौजूद परमाणु अपेक्षतः बहुत थोड़े होते हैं। किसी नाभिक पर प्रोटान-न्यूट्रान गोली से चोट करने की कोशिश कुछ-कुछ वैसी कोशिश है जैसेकि वायु में, जिसके एक घनमील में धूल के बहुत थोड़े-से कण हों, बिना लक्ष्य के राइफल की गोली चलाकर धूल के एक कण पर चोट की जाए। पर वैज्ञानिकों ने यह कठिनाई हल कर ली है, जैसाकि हम एक आगे के अध्याय में देखेंगे।

अब फिर आक्सीजन के परमाणु को लीजिए, और इसके नाभिक में कुछ और प्रोटान तथा कुछ और न्यूट्रान मिलाइए, और उस नाभिक के चारों ओर की कक्षाओं में कुछ और इलेक्ट्रान घूमने दीजिए। हम देखते हैं कि जब परमाणु आक्सीजन के परमाणु से क्लोरीन के या नियोन के परमाणु में और इसी प्रकार अधिक परमाणु भारवाले अन्य परमाणुओं में बदलता है, तब वह अधिकाधिक संकुल हो जाता है। होते-होते अंत में, हम इतने प्रोटान और न्यूट्रान उसमें मिला देंगे कि नाभिक में ९२ प्रोटान और १४६ न्यूट्रान हो जाएं, जिससे परमाणु का परमाणु भार २३८ हो जाएगा। यह परमाणु जिसमें सघन और संकुल नाभिक के चारों ओर ९२ इलेक्ट्रान चक्कर काट रहे हैं, यूरेनियम तत्त्व है, जो प्रकृति में प्राप्त परमाणुओं में सबसे अधिक संकुल मालूम होता है।

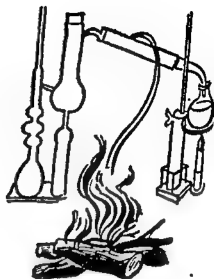
पर मनुष्य ने इस परमाणु से भी अधिक संकुल परमाणुओं की सृष्टि करके प्रकृति से आगे कदम बढ़ा दिया है। यूरेनियम और अन्य भारी तत्त्वों के परमाणुओं पर नाभिकीय गोलियों से बमबारी करके वैज्ञानिकों ने उनके सघन नाभिकों में और अधिक न्यूट्रान तथा प्रोटान ठूंस दिए हैं। इस प्रकार उन्होंने नये 'मनुष्य-कृत' तत्त्वों की एक पूरी श्रेणी की सृष्टि कर डाली है। इन तत्त्वों के नाम और उनके परमाणु नाभिकों में मौजूद प्रोटानों की संख्या नीचे दी हुई है। इन 'कृत्रिम' (सिन्थेटिक) तत्त्वों के परमाणु सामान्यतया बहुत अस्थायी होते हैं, और वे प्रोटानों की अधिक

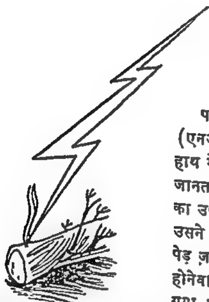
मात्रा को शीघ्र निकाल फेंकते हैं, या एक-दूसरे से अलग होकर उड़ जाते हैं। कुछ प्रकार के परमाणुओं के इस तरह 'अलग होकर उड़ जाने या विखण्डन' (फिशन) का उपयोग परमाणु ऊर्जा (परमाणु-शक्ति) पैदा करने में किया जाता है, जिसका वर्णन आगे किया जाएगा।

नेपटूनियम	९३
प्लूटोनियम	९४
अमेरिसियम	९५
क्यूरियम	९६
रूथेनियम	९७
टेकनीशियम	९८
आइंस्टीनियम	९९
फर्मियम	१००
मेंडेलेवियम	१०१

अध्याय चार

आग और अन्य रासायनिक प्रक्रियाएं







परमाणु शक्ति की कहानी आगे कहने से पहले हम ऊर्जा (एनर्जी) के उस रूप पर विचार करेंगे, जो हजारों वर्ष से हमारे हाथ में रही है। यह आग से उत्पन्न ऊर्जा है। आज कोई नहीं जानता कि हमारे किस प्राचीन जंगली पूर्वज ने सबसे पहले आग का उपयोग करना आरम्भ किया था, पर सम्भावना यह है कि उसने आग आसमान से ली, अर्थात् बिजली गिरने से कोई सूखा पेड़ ज़लने लगा। वह बहादुर जंगली ऐसे अजीब दृश्य से पैदा होनेवाले स्वाभाविक भय और आतंक से न डरकर आग के पास गया, और उसे इसकी गर्मी सुखदायक लगी। उसने यह भी देखा कि जंगल के पशु आग से उसकी अपेक्षा भी अधिक डरते थे और वे इससे दूर रहते थे। इस प्रकार धीरे-धीरे आग न केवल सुविधा देने लगी, बल्कि सुरक्षा का साधन भी बन गई।

बाद में किसी आदिकालीन मनुष्य ने सूखी लकड़ियां रगड़कर या चकमक पत्थरों की चिनगारियों से आग बनाना सीखा। मनुष्य अपना भोजन पकाने लगा, और अंत में उसे आग से लोहे और अन्य धातुओं को साफ करना और इन धातुओं से औज़ार व गहने बनाना आ गया। और इस प्रकार उसने हमारी आधुनिक औद्योगिक

व्यवस्था की आदिम बुनियाद रखी ।

उन्नति की ये मंजिलें थोड़े ही समय में नहीं पार कर ली गईं । मनुष्य को सदियों के परिश्रम से विभिन्न तरीकों से आग को अपने प्रयोग में लाना आया होगा । पर अन्त में मनुष्य ने आग के बहुत-से उपयोग सीख लिए । इस ज्ञान के द्वारा वह आगे की उन्नत सभ्यता बना सका, जिसमें हम आज रहते हैं । क्योंकि, जैसाकि हमने अध्याय दो में कहा था, हमारी सभ्यता की बुनियाद आग पैदा करने और उसका उपयोग करने की हमारी क्षमता ही है ।



रासायनिक प्रक्रियाएं

आग एक रासायनिक प्रक्रिया है, अर्थात् दो भिन्न रासायनिक पदार्थों के बीच होनेवाली क्रिया है । बहुत-से लोग दवाइयों की दुकान में रखे हुए पाउडरों या द्रवों को केमिकल समझते हैं ; पर हमें अपनी दुनिया की हर चीज़ को केमिकल समझना चाहिए । वे उन तत्त्वों से बने हैं, जिन्हें तरह-तरह से इकट्ठा करके लकड़ी या कांच या कपड़ा या पानी या हमारे शरीरों की हड्डियां, खून और मांसपेशियां बनी हुई हैं ।

जब विभिन्न तत्त्वों के परमाणु मिलते हैं या रासायनिक क्रिया करते हैं, तब वे जो वस्तु बनाते हैं उन्हें अणु (मालोक्यूल) कहा जाता है । उदाहरण के लिए, क्लोरीन गैस के एक परमाणु और सोडियम धातु के एक परमाणु के मिलने से सोडियम क्लोराइड (सामान्य नमक) का एक अणु बन सकता है । व्यवहारतः हमारे चारों ओर मौजूद प्रत्येक वस्तु विभिन्न प्राकृतिक तत्त्वों के परमाणुओं के मेल से बने हुए अणुओं से बनी है ।

प्राकृतिक तत्त्वों की संख्या लगभग ९२ है ; पर हमारी दुनिया

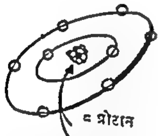
हाइड्रोजन
नाइट्रोजन
आक्सीजन
क्लोरीन
कार्बन
सोडियम
मैगनीशियम
ऐलुमिनियम
सिलिकान
फास्फोरस
गंधक
पोटैशियम
कैलसियम
लोहा

की अधिकतर वस्तुओं का अधिकांश लगभग १४ तत्वों से बना हुआ है, जिनमें हाइड्रोजन, नाइट्रोजन, आक्सीजन और क्लोरीन गैसें और कार्बन, सोडियम, मैगनीशियम, ऐलुमिनियम, सिलिकान, फास्फोरस, गन्धक, पोटैशियम, कैलसियम और लोहा—ये ठोस तत्त्व शामिल हैं।

आग

आग एक रासायनिक प्रक्रिया है, जिसमें आक्सीजन गैस के परमाणु कुछ अन्य तत्वों, जैसे हाइड्रोजन या कार्बन के परमाणुओं, से मिल जाते हैं। आक्सीजन के एक परमाणु की जांच करने के बाद हम इस प्रक्रिया को अधिक आसानी से समझ सकते हैं।

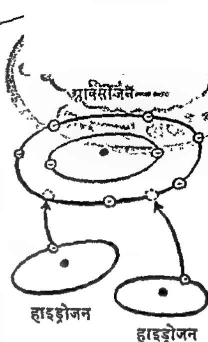
आक्सीजन के एक परमाणु के नाभिक में ८ प्रोटान और ८ न्यूट्रान होते हैं, और ८ इलेक्ट्रान नाभिक के चारों ओर घूमते हैं। ये इलेक्ट्रान नाभिक के चारों ओर दो मार्गों या कक्षाओं में घूमते हैं, जिनमें से एक दूसरी से कुछ छोटी होती है। भीतरी कक्षा में सिर्फ दो इलेक्ट्रान होते हैं, और शेष ६ इलेक्ट्रान बाहरी कक्षा में होते हैं। आठों इलेक्ट्रान इस बाहरी कक्षा में रह सकते थे। तथ्य यह है कि यदि आक्सीजन परमाणु को मुक्त इलेक्ट्रान आसपास मिल जाएं, तो वह अपनी बाहरी कक्षा में दो अतिरिक्त इलेक्ट्रान सचमुच ले आएगा।



आक्सीजन
परमाणु भार—१६

आग हाइड्रोजन और आक्सीजन गैसों को मिलाकर प्रज्वलित करने पर पैदा होगी। जब आक्सीजन और हाइड्रोजन परमाणु एक-दूसरे से मिलेंगे, तब आक्सीजन परमाणु हाइड्रोजन परमाणुओं से इलेक्ट्रान लेने की कोशिश करेगा; पर प्रत्येक हाइड्रोजन नाभिक जो एक अकेला प्रोटान होता है, अपने इलेक्ट्रान को मजबूती से पकड़े रहता है।

परन्तु यदि दोनों गैसों के मिश्रण को गर्म किया जाए (उदाहरण के लिए, चिनगारी या जलाई हुई दियासलाई से) तो एक ऐसी स्थिति हो जाएगी जिसके कारण हाइड्रोजन परमाणु अपने



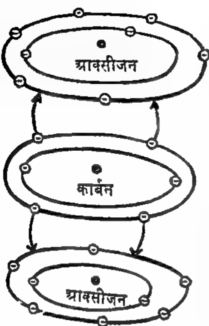
इलेक्ट्रान छोड़ देंगे। कारण यह कि ऊष्मा या गर्मी के प्रभाव से इलेक्ट्रान को एक इलेक्ट्रानीय तेज़ी प्राप्त हो जाती है, जिससे वे अपनी कक्षाओं में पहले से बहुत अधिक तेज़ चाल से घूमने लगते हैं। सच पूछिए तो वे अपने नाभिकों के चारों ओर इतनी तेज़ी से घूमने लगते हैं कि उड़कर परे चले जाते हैं और हाइड्रोजन नाभिकों से अलग हो जाते हैं। यह वही बात है जो किसी डोरी के सिरे पर बंधी हुई गेंद बहुत तेज गति से अपने सिर के चारों ओर घुमाने पर आपको दिखाई देगी। यदि डोरी टूट जाएगी, तो गेंद उड़कर दूर जा पड़ेगी।

जब इलेक्ट्रान उड़कर हाइड्रोजन नाभिकों से अलग हो जाते हैं, तब वे आक्सीजन परमाणुओं की तरफ आकर्षित हो जाते हैं; और प्रत्येक आक्सीजन परमाणु इनमें से दो इलेक्ट्रान तुरन्त ले लेता है। इससे आक्सीजन परमाणु की बाहरी कक्षा में ८ इलेक्ट्रान हो जाते हैं। इस क्रिया से आक्सीजन परमाणु पर २ ऋणात्मक विद्युत्-आवेश—प्रत्येक इलेक्ट्रान का एक—हो जाते हैं। प्रत्येक हाइड्रोजन परमाणु अपने इलेक्ट्रान से अलग हो जाने पर १ धनात्मक आवेशवाला होता है। इस प्रकार, आक्सीजन और हाइड्रोजन के इन परमाणुओं के बीच पैदा होनेवाले विद्युतिक आकर्षण से प्रत्येक आक्सीजन परमाणु दो हाइड्रोजन परमाणुओं से मिलकर एक अणु बनाता है। हाइड्रोजन के दो परमाणु और आक्सीजन के एक परमाणु से इस प्रकार बने हुए अणु का रासायनिक संकेत H_2O है, और इसका सामान्य नाम पानी है। इस प्रकार पानी दो गैसों, आक्सीजन और हाइड्रोजन, के दहन या जलने से बनता है। आग से पानी प्राप्त करना कुछ विचित्र-सा लगेगा, पर हम देखेंगे कि जिस आग में हाइड्रोजन हिस्सा लेती है, उसमें सदा पानी उपजात (साथ पैदा होनेवाले) के रूप में पैदा होता है।

पानी का एक अणु

आग का एक और उदाहरण

आग कहलानेवाली रासायनिक प्रक्रिया का एक और उदाहरण



जब आक्सीजन और कार्बन में रासायनिक प्रतिक्रिया होती है, तब परमाणुओं में इलेक्ट्रानों की अदला बदली हो जाती है। नाभिक जैसे के तैसे रहते हैं

लीजिए। आम तौर से हम आग के जिस रूप से परिचित हैं, वह कार्बन के साथ आक्सीजन के मिलने से बनता है। वायु में लगभग पांचवां हिस्सा आक्सीजन है। कार्बन कोयले, लकड़ी, गैसोलीन, तेल या और किसी भी ईंधन का एक मुख्य अंश होता है। कार्बन के नाभिक में ६ प्रोटान और ६ न्यूट्रान होते हैं, जिनके चारों ओर ६ इलेक्ट्रान घूमते हैं। इनमें से दो भीतरी कक्षा में घूमते हैं और ४ बाहरी कक्षा में। जब हम लकड़ी के टुकड़े को जलाते हैं, तब कार्बन परमाणुओं के इलेक्ट्रानों को पहले से अधिक चाल से चला देते हैं, जिससे वे अपनी कक्षाओं से बाहर उड़ने लगते हैं। इस प्रकार, प्रत्येक कार्बन अणु अपने ४ बाहरी इलेक्ट्रानों से वंचित हो जाता है, जिससे इसपर ४ का धनात्मक आवेश हो जाता है। चारों ओर की वायु में मौजूद आक्सीजन तुरन्त उन इलेक्ट्रानों को पकड़ लेती है और प्रत्येक आक्सीजन परमाणु २ इलेक्ट्रान पकड़ लेता है। इस प्रकार आपने देखा कि प्रत्येक कार्बन परमाणु से अलग होनेवाले ४ इलेक्ट्रानों को पकड़ने के लिए २ आक्सीजन परमाणु होने चाहिए, अर्थात् एक कार्बन परमाणुओं २ आक्सीजन परमाणुओं से मिलकर कार्बनडाई-आक्साइड का एक अणु या CO_2 बनाता है।

आपको यह जानकारी दिलचस्प लगेगी कि आपके शरीर में सारे समय एक प्रकार की आग जलती रहती है। आपके भोजन में कार्बन होता है। फेफड़ों से ली हुई सांस में से आप आक्सीजन प्राप्त करते हैं; और यह आक्सीजन आपके रक्त द्वारा आपके शरीर में घूमती हुई कार्बन से मिलती है, और एक तरह की हलकी, कम तापवाली आग पैदा होती रहती है, जिससे आपका शरीर गर्म रहता है। कुछ कार्बनडाईआक्साइड सांस छोड़ने पर फेफड़ों से निकल जाती है।



अध्याय पांच

गर्मी या ऊष्मा की व्याख्या

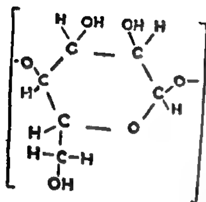
हम सब जानते हैं कि आग से ऊष्मा या गर्मी पैदा होती है। जब आप आग के सामने खड़े होते हैं तब इसे 'अनुभव' कर सकते हैं, और यदि पानी की पतीली आग पर रख दें, तो थोड़ी देर में पानी गर्म होकर खौलने लगेगा। यदि आप पतीली आग से न हटाएं, तो सारा पानी खौलकर उड़ जाएगा।



ऐसे परिवर्तन करनेवाली यह विचित्र चीज, ऊष्मा (हीट) क्या वस्तु है ? जब हम इसकी व्याख्या की कोशिश करते हैं, तब हमारे सामने एक नया विचार आ जाता है, जिससे शायद क्षण-भर को आप उलझन में पड़ जाएंगे : ऊष्मा परमाणुओं और अणुओं के खाली स्थान में इधर-उधर चलने की चाल बढ़ने से अधिक और कुछ नहीं है। आप सोचेंगे कि लकड़ी या लोहे का टुकड़ा या पानी जैसा द्रव अणुओं के ठसाव से काफी ठोस होता है और उसमें अणुओं के इधर-उधर चलने के लिए अधिक जगह नहीं होती, पर विचित्र बात देखिए कि अणुओं के बीच में

बहुत जगह होती है और वे निरन्तर चलते रहते हैं। ताप (टैम्परेचर) जितना अधिक होगा, वे उतने ही तेज चलेंगे।

इसे स्पष्ट रूप से दिमाग में बिठाने के लिए पानी की पतीली में चल रही क्रिया देखिए। पहले हम आग जलाते हैं। लकड़ी कोयला आदि ईंधन अणुओं के बने होते हैं। ये अणु कार्बन, हाइड्रोजन और आक्सीजन आदि तत्त्वों के परमाणुओं के बने होते हैं। उदाहरण के लिए लकड़ी के अणु के सबसे अधिक सामान्य प्ररूप में कार्बन के ६, हाइड्रोजन के १० और आक्सीजन के ५ परमाणु होते हैं, और इसका रासायनिक सूत्र $C_6H_{10}O_5$ है।



लकड़ी का एक अणु रसायनज्ञ की दृष्टि में

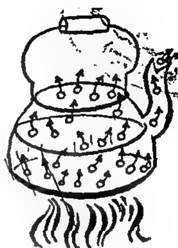
जब लकड़ी ठंडी होती है, तब अणु धीरे-धीरे और छोटे मार्गों में चलते हैं, पर जब वह जलने लगती है, तब अणु बहुत तेजी से चलते हैं। सच तो यह है कि वे इतना तेज चलते हैं कि टुकड़े-टुकड़े होने लगते हैं। तब परमाणु अपने आणविक ढांचे से निकलकर उड़ने लगते हैं। ऐसा होने पर कार्बन के परमाणु वायु की आक्सीजन के परमाणुओं से मिलकर कार्बन डाईआक्साइड बनाते हैं। (जैसाकि पिछले अध्याय में बताया गया है) साथ ही, लकड़ी के आक्सीजन और हाइड्रोजन परमाणु मिलकर पानी बनाते हैं।

इस सारी हलचल से नये बने हुए अणु कई मील प्रति सेकंड तक की चाल से इधर-उधर दौड़ने लगते हैं। आग के ऊपर रखी हुई पतीली इन तेजी से चलते हुए अणुओं के रास्ते में है और इस प्रकार पतीली के लोह अणुओं पर ज़बरदस्त बमबारी हो जाती है। इससे लोहे के अणु तेज़ी से गति करने लगते हैं। तेज़ी से दौड़ते हुए लोहे के अणु अब पतीली के पानी के अणुओं को धक्का देते हैं, और इसलिए-पानी के अणुओं की गति तीव्र हो जाती है। यदि आप अंगुली पानी में रखें, तो आप कहेंगे कि पानी गर्म हो रहा है।

यह क्रिया होते हुए पानी के कुछ अणु इतना तेज चलने लगेंगे कि वे अपने पास के अणुओं से बहुत दूर निकलकर वायु में चले जाएंगे, अर्थात् पानी खौलने लगेगा। कुछ समय बा

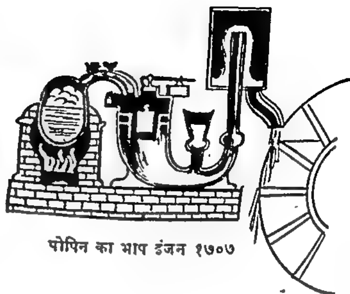
तीली सूख जाएगी। यदि अब अणुओं का बमबारी जारी रहती है (यदि हम पतीली को आग पर चढ़ी रहने देते हैं) तो लोहे के परमाणुओं में इतनी अधिक गति आ जाएगी कि वे अब पतीली की शक्ल में नहीं बने रह सकेंगे। पतीली पिघलने और द्रव रूप में आने लगेगी। यदि हम द्रव का ताप बढ़ाते जा सकें, तो इसके अणु अन्त में पानी के अणुओं की तरह ही कार्य करने लगेंगे; अर्थात् लोहे के अणु अपने पासवाले कणों से दूर वायु में उड़ जाएंगे। दूसरे शब्दों में, लोहा वाष्प (भाप) में बदल जाएगा।

आग और ऊष्मा की कहानी यहीं समाप्त नहीं हो जाती। ताप बढ़ने पर अणु पहले से तेज ही नहीं चलते, बल्कि विकिरण (रेडिएशन) के कुछ रूप भी पैदा हो जाते हैं, जिन्हें हम प्रकाश के रूप में देखते हैं, और ऊष्मा के रूप में अनुभव करते हैं। इन विकिरणों के बारे में और बातें आगे चलकर बताई जाएंगी।

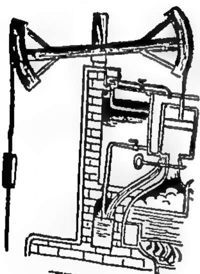


अध्याय छः

भाप से काम लेना



पोपिन का भाप इंजन १७०७

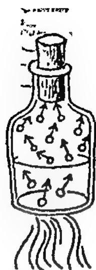


न्यूकमन का इंजन
१७०५

जेम्सवाट (१७३६-१८१६) नामक एक स्काटिश लड़के के बारे में एक कहानी प्रसिद्ध है। पतीली चढ़ी हुई थी और पानी खौल रहा था। वाट ने देखा कि भारी ढकना नीचे के बल से ऊपर उठ गया। कहते हैं कि उसने यह कहा कि यदि भाप पतीली के ढक्कन को उठा सकती है, तो इससे अधिक भारी और अधिक उपयोगी काम भी कराए जा सकते हैं। कहानी के अनुसार, तब उसने भाप के इंजन का 'आविष्कार' किया। पर यह वृत्तान्त पूरी तरह सच नहीं, क्योंकि ऐसा बहुत कम हुआ है कि कोई महान मानवीय आविष्कार सिर्फ एक आदमी की प्रतिभा का परिणाम हो।

वाट के जन्म से वर्षों पहले दूसरे लोग खौलते हुए पानी की भाप की शक्ति के परीक्षण कर चुके थे। इन लोगों ने जो काम किया, इन्होंने जो काम चलाऊ अनगढ़ इंजन बनाए, उनसे इंजन की नींव पड़ी। इसके बाद वाट जैसे लोगों ने उन इंजनों में सुधार करके उन्हें समर्थ बनाया। बाद में और लोगों ने इंजनों में और सुधार किए। आज भाप इंजन इंजीनियरिंग विद्या

...क चमत्कार हैं। भाप प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से उद्योग के बहुत-...े पहिए या चक्र घुमाती है और हमारी अधिकतर विजली ...दा करनेवाले विशालकाय जनरेटरों को चलाती है।



भाप-दाब किसे कहते हैं

भाप-दाव (स्टीम प्रेशर) होने पर ही भाप अपना काम करती है। जब आप किसी चीज़ को धकेलते हैं, तब उसपर दाब लगाते हैं। भाप भी दाब लगाती है। जब पानी खौलता है, तब पानी के अणु इतना तेज़ चलते हैं कि उनमें से बहुत सारे द्रव के बाहर उड़ जाते हैं। इन स्वतन्त्रचारी अणुओं को हम 'जल-बाष्प' या 'भाप' कहते हैं। जब तेज़ी से चलनेवाले इन बहुत सारे अणुओं को एक घिरे हुए स्थान में बन्द कर दिया जाता है, तब हम कहते हैं कि उस स्थान में पानी की दाब ऊंची या अधिक है। यहां जितने अधिक अणु होंगे और वे जितना अधिक तेज़ चलेंगे, उतनी ही अधिक दाब होगी।

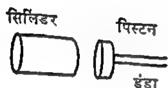


पर इससे हमें यह पता नहीं चलता कि 'भाप' क्या होती है। मान लें कि हम पानी से आधी भरी हुई धातु की एक बोतल को कार्क से बन्द करके आग पर रख दें। कुछ ही देर में पानी खौल जाता है, और पानी के अणु बोतल के उपरले हिस्से की वायु में उड़ आते है। ये उड़ते हुए अणु बोतल की दीवारों और कार्क पर धक्का मारते हैं। पानी खौलता रहने पर अधिकाधिक अणु बोतल की दीवारों और कार्क पर बमबारी करने के लिए पानी से चलते हैं। अन्त में अरबों-खरबों अणु इस कार्य को कर रहे होते हैं। अभिप्राय यह कि भाप की दाब बहुत ऊंची हो जाएगी।



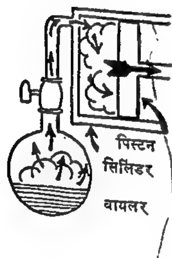
कार्क की तली पर थोड़े-से अणुओं के चोट करने से कोई प्रभाव नहीं होगा, पर जब अरबों अणु उसपर लगातार चोट करेंगे, तब वे शीघ्र ही निकाल फेंकेंगे और वह ज़ोर से 'पॉप' की ऊंची आवाज़ करता हुआ उड़ जाएगा। यदि कार्क इतना कसकर लगा हो कि वह न निकल सके, तो भाप की दाब बढ़ती

जाएगी। अन्त में दाब इतनी अधिक हो जाएगी कि बोतल फट जाएगी—अणुओं के प्रहार से टुकड़े-टुकड़े हो जाएगी। विस्फोट का बल शायद इतना अधिक होगा कि आसपास की चीजों को भी चोट पहुंचेगी। यह एक खतरनाक परीक्षण है, जिससे भाप-दाब की शक्ति का पता चलता है।



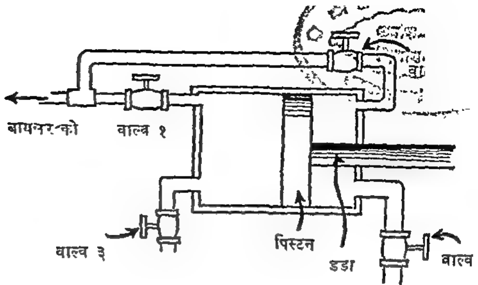
भाप का इंजन किस तरह कार्य करता है

मान लो कि एक कनस्तर का एक सिरा कटा हुआ है। अब इससे कुछ कम चौड़ा एक छोटा कनस्तर लें, जिसमें एक डंडा लगा हुआ हो। कम चौड़ाईवाला कनस्तर बड़े कनस्तर में फिट आ जाता है। आप इसे, डंडे को खींचकर और धकेलकर, बड़े कनस्तर में आगे-पीछे सरका सकते हैं।



यदि आप ऐसा करें तो यह भाप के इंजन का एक आरंभिक नमूना होगा। भाप के इंजन में एक सिलिण्डर (बड़ा कनस्तर) और एक पिस्टन (छोटा कनस्तर) होता है। भाप की दाब से पिस्टन को सिलिण्डर में आगे और पीछे चलाया जाता है। भाप के इंजन में एक वायलर होता है; यह एक बन्द कोठरी होती है, जिसमें पानी उबाला जाता है। वहां से एक नल में होकर भाप इंजन पर पहुंचती है, और पिस्टन को चलाती है। यह समझने के लिए कि भाप पिस्टन को कैसे चलाती है, फिर यह विचार कीजिए कि भाप के असंख्य जलअणु सिलिण्डर में तेजी से चल रहे हैं, और पिस्टन के सिरे पर चोट कर रहे हैं। इस भारी बमबारी से पिस्टन चलने लगता है।

यदि हमारे पास पिस्टन को रोकने का कोई साधन न हो, तो यह सिलिण्डर में से उसी प्रकार उड़ जाएगा, जैसे बोतल में से कार्क उड़ गया था। पर नीचे दिखाई गई व्यवस्था द्वारा इसे रोका जाता है। सिलिण्डर के दोनों सिरे बिलकुल बन्द हैं। उसके एक सिरे में सिर्फ इतना छेद है जिसमें पिस्टन का डंडा आगे-पीछे चल सकता है। हमने चार नलों को भी



जिनपर चार वाल्व लगे हैं, सिलिण्डर से जोड़ दिया है। ये वाल्व आपके रसोई के नल की टोंटी जैसे होते हैं। जब आप टोंटी घुमाते हैं, तब पानी आने लगता है; जब आप उसे बन्द करते हैं, तब पानी आना बन्द हो जाता है।

यदि हम वाल्व १ को खोलें तो बायलर से आती हुई भाप सिलिण्डर के बायें सिरे में चली जाएगी। यह पिस्टन को दाईं ओर धकेलती है। उसी समय वाल्व ४ को खुला रखकर सिलिण्डर के दायें सिरे की वायु को निकलकर (या रेचन करके) खुली हवा में चला जाने दिया जाता है।

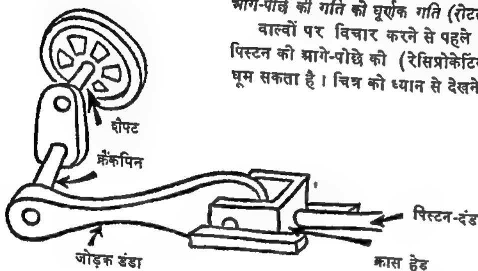
पिस्टन दाईं ओर चला जाने पर, वाल्व १ और ४ को बन्द करने तथा वाल्व २ और ३ को खोलने से पिस्टन बाईं ओर चला जाता है। वाल्व २ को खोलने से भाप सिलिण्डर के दाईं ओर चली जाती है, जिससे पिस्टन बाईं ओर हट जाता है और वाल्व ३ को खोलने से सिलिण्डर के बाईं ओर की भाप सिलिण्डर से बाहर चली जाती है, या रेचित (एग्ज़ास्ट) हो जाती है।

इस प्रकार ऐसी व्यवस्था करके और वाल्वों को तेजी से खोलने और बन्द करने के लिए दो चुस्त नौजवान रखकर हम पिस्टन को जल्दी-जल्दी आगे-पीछे चला सकते हैं। पर हर व्यक्ति यह काम करते हुए निश्चित ही ऊब जाएगा, और फिर यह

आवश्यक भी नहीं। कारण यह कि पिस्टन और वाल्वों के बीच ऐसी जोड़नेवाली कड़ियां लगाई जा सकती हैं जो पिस्टन के आगे-पीछे चलने पर आप से आप वाल्वों को खोल और बन्द कर दिया करें। स्वभावतः इस व्यवस्था में ऊपर दिखाए गए ढंग के वाल्व प्रयोग में नहीं आ सकते। इनके स्थान पर इंजन में विशेष 'बिल्ट-इन' (अन्दर स्थिर रूप से लगे हुए) वाल्व होते हैं।

आगे-पीछे की गति को घूर्णक गति (रोटरी मोशन) में बदलना

वाल्वों पर विचार करने से पहले यह देखना चाहिए कि पिस्टन की आगे-पीछे की (रेसिप्रोकेटिंग) गति से पहिया कैसे घूम सकता है। चित्र को ध्यान से देखने पर आप समझ जाएंगे



कि यह कैसे हो सकता है। ध्यान रखिए कि पिस्टन के साथ एक डंडा लगा हुआ है। यह डंडा सिलिण्डर के एक सिरे पर एक छेद में से गुज़रता है और पिस्टन के आगे-पीछे चलने पर छेद में आगे-पीछे सरकता है।

पिस्टन का डंडा एक क्रॉसहेड से जुड़ा हुआ है—यह एक धातु का गुटका है जो धातु के एक फ्रेम या ढांचे में आगे-पीछे सरकता है। यह क्रॉसहेड एक जोड़क डंडे से (कनेक्टिंग रौड) से जुड़ा हुआ है, और वह एक शैफ्ट पर लगे हुए क्रैंकपिन से जुड़ा हुआ है। शैफ्ट पर एक पहिया या गियर लगा है।

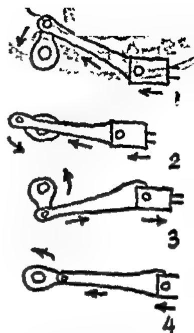
जब भाप पिस्टन को दाईं ओर धकेलती है तब क्रॉसहेड भी दाईं ओर चलता है। इस प्रकार, क्रॉसहेड जोड़क डंडे को आगे धकेलता है, और यह क्रैंकपिन को धकेलता है। इससे शैफ्ट घूमने लगता है, जैसाकि चित्र १ में तीर द्वारा दिखाया गया है। जब पिस्टन दाईं ओर चल चुका है, जैसेकि चित्र २ वाली स्थिति में, तब इंजन का वाल्व सिलिण्डर के बायें सिरे में भाप को जाने से रोक देता है। उसी समय वाल्व सिलिण्डर के दायें सिरे में भाप आने देता है जिससे पिस्टन बाईं ओर हटता है, जैसाकि चित्र ३ में दिखाया गया है। फिर पिस्टन के बाईं ओर चले जाने के बाद, जैसाकि चित्र ४ में है, यह पुनः दाईं ओर चलना आरम्भ करता है।

पिस्टन के आगे-पीछे चलने पर जोड़क डंडा खिंचता है और धकेला जाता है; और इस तरह वह क्रैंकपिन को एक चक्कर में चलाता है जिससे शैफ्ट घूर्णन करता है, अर्थात् गोल घूमने लगता है। इस प्रकार पिस्टन की आगे-पीछे की गति घूर्णन गति में बदल जाती है।

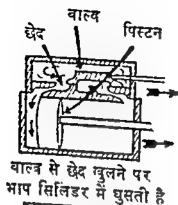
इस घूर्णन गति को इंजन के शैफ्ट के पहिये या गियर से पटे (बेल्ट) या मेशिंग गियरों द्वारा प्रायः हर प्रकार की मशीन पर पहुंचाया जा सकता है।

एक बहुत प्रचलित भाप-इंजन वाल्व

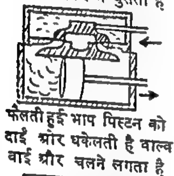
वाल्व का एक बड़ा आम रूप 'डी-स्लाइड' वाल्व कहलाता है। यह वाल्व शक्ल में D (डी) जैसा होता है और सिलिण्डर के एक चपटे तल पर आगे-पीछे सरकता है। इस गति के समय वाल्व इंजन के सिलिण्डर में कुछ छेद या पोर्ट खोल देता है, जिससे भाप सिलिण्डर में आ सके या उससे जा सके। इस प्रकार जब वाल्व दाईं ओर चलता है, तब वह बाईं ओर के छेद को खोल देता है, जिससे भाप की कोठरी में से भाप सिलिण्डर के बायें सिरे में जा सकती है। यह भाप पिस्टन को दाईं ओर धकेल देगी। उसी समय स्लाइड वाल्व ने सिलिण्डर के दाईं



क्रास हेड के आगे और पीछे चलने पर जोड़क डंडा क्रैंकपिन को धकेलता और खींचता है जिससे यह शैफ्ट के चारों ओर गोल चक्कर लगाने लगता है और इस तरह शैफ्ट घूमने लगता है



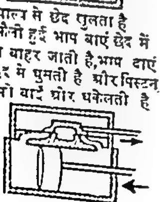
वाल्व से छेद खुलने पर भाप सिलिंडर में घुसती है

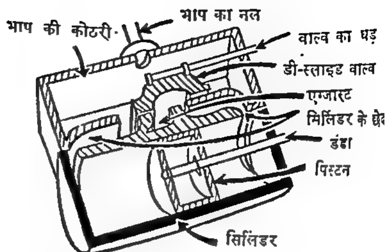


फैलती हुई भाप पिस्टन को दाईं ओर धकेलती है वाल्व बाईं ओर चलने लगता है



वाल्व से छेद खुलता है फैली हुई भाप बाएं छेद में से बाहर जाती है, भाप दाएं छेद में घुसती है और पिस्टन को बाईं ओर धकेलती है





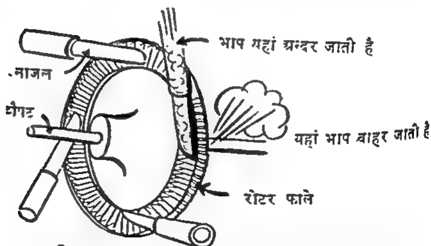
ओरवाला छेद खोल दिया है, जिससे सिलिण्डर के दायें सिरेवाली भाप को पिस्टन के दाईं ओर चलने के समय निकलने का मौका मिल जाता है।

क्षण-भर बाद जब वाल्व बाईं ओर चलता है, तब ये क्रियाएं उलट जाती हैं, जिससे पिस्टन को बाईं ओर को धक्का लगता है।

क्रैंक शैफ्ट पर लगा हुआ एक क्रैंकपिन और एक जोड़क डंडा इस स्लाइड वाल्व को चलाते हैं। डंडा क्रैंकपिन और वाल्व स्टेम (या वाल्व के धड़) को जोड़ता है।

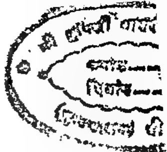
कैसे कराया जा सकता है। बाद में कुछ सौ वर्ष पहले विचारशील लोगों ने इस उपकरण से परीक्षण करने शुरू किए; पर वे इसे क्रियात्मक रूप से प्रयोग में लाने की समस्या हल न कर सके। अन्त में, सन् १८९० के आसपास, स्वीडन के डी लावेल और इंग्लैंड के पारसन्स ने अलग-अलग ढंग से और स्वतन्त्र रूप से कार्य करते हुए उपयोग योग्य स्टीम टरबाइन के डिज़ाइन बना लिए। इन लोगों के कार्य से और इनसे पहले और पीछे के लोगों के कार्य से आधुनिक स्टीम टरबाइन बन सकी है, जो ४,००,००० हॉर्स पावर की शक्ति पैदा कर सकती है; अर्थात् इन अद्भुत मशीनों में से एक मशीन ४,००,००० घोड़ों के बराबर कार्य कर सकती है।

एक सरल स्टीम टरबाइन इस पृष्ठ पर दिखाई गई है। रोटर या घूर्णक के, जो एक शैफ्ट पर लगा हुआ है, बाहरी किनारे के चारों ओर बहुत-से छोटे-छोटे टेढ़े फाले या ब्लेड लगे हुए हैं। नाज़लों से भाप की धारा इन फालों (ब्लेडों) पर पड़ती है

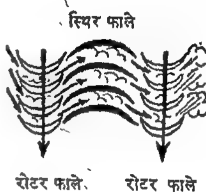


जिससे रोटर तेज़ चाल से घूमने लगता है। इस घूर्णक गति को गियरों द्वारा रोटर शैफ्ट से लेकर अन्य मशीनों या बिजली का जनरेटर चलाया जा सकता है।

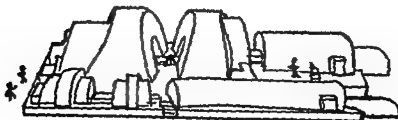
आजकल के टरबाइन में आम तौर से एक के बजाय बहुत



सारी फालेदार पटरियां (डिस्कें) होती हैं, जो मिलकर रोटर कहलाती हैं। ये सब एक ही शैफ्ट पर लगी होती हैं, और इसलिए सब की सब एकसाथ घूमती हैं। रोटरों की हर जोड़ी के बीच में एक स्थिर घेरा होता है जिसमें रोटर में लगे हुए फालों से उलटी दिशा में मुड़े हुए फालों की एक श्रेणी लगी रहती है। पहली डिस्क या पटरी से भाप गुज़र जाने और उससे रोटर को एक प्रबल घूर्णक धक्का लग जाने के बाद इसकी दिशाएं उलट जाती हैं। तब यह स्थिर घेरे के मुड़े हुए फालों में से गुज़रती है, जिससे इसकी दिशा फिर उलट जाती है; और यह दूसरी डिस्क या पटरी के फालों को धक्का दे सकती है। इस प्रकार भाप टरबाइन में से टेढ़ी-मेढ़ी चलती है, रोटर के फालों को धकेलती और दिशा बदलती है, फिर स्थिर फालों में दिशा बदलती है; और इसी तरह आगे चलती जाती है। इस प्रक्रम से भाप की अधिकतम ऊर्जा उपयोग में आ जाती है।



आज की टरबाइनों में भाप २५०० पौण्ड प्रति वर्ग इंच की दाब पर प्रविष्ट होती है। इसका अर्थ यह हुआ कि भाप के अणु रोटर फाले के तल के प्रत्येक वर्ग इंच पर इतनी ज़बरदस्त बमबारी करते होते हैं कि उससे २५०० पौंड का धक्का लग सकता है। रोटर १०,००० परिक्रमा प्रति मिनट की चाल से घूम सकता है।

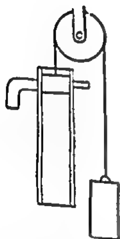


४,००,००० हॉर्स-पावर का स्टीम टरबाइन

अध्याय आठ

शुरू के अन्तर्दहन इंजन





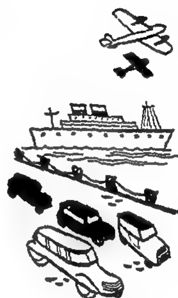
हुइगेन्स का बारूद का इंजन

भाप के इंजन और टरबाइन 'बाह्य दहन' (एक्सटर्नल कंबश्चन) इंजन होते हैं, क्योंकि उन्हें चलानेवाली आग इंजन से बाहर होती है। इसके विपरीत, जिस तरह का इंजन आज की मोटर को शक्ति देता है, वह 'अन्तर्दहन' इंजन होता है, क्योंकि इसे चलानेवाली आग इंजन के अन्दर होती है। यह आग तब पैदा होती है जब गैसोलीन या अन्य ईंधन को इंजन के सिलिण्डर की हवा से मिलाया जाता है और फिर प्रज्वलित कर दिया जाता है। सिलिण्डरों में उत्पन्न दाब पिस्टनों को चलाती है और इस गति से वह शक्ति पैदा होती है जो पहियों को घुमाती और मोटर को चलाती है।

सबसे पहले बनाया गया अन्तर्दहन इंजन बड़ा खतरनाक रहा होगा, क्योंकि गैसोलीन या ऐसे ही किसी और ईंधन के स्थान पर इसमें बारूद का प्रयोग होता था। यह इंजन सन् १६८० के आसपास बनाया गया था, और इसका परीक्षण करनेवाला बहादुर वैज्ञानिक क्रिस्चियन हुइगेन्स नामक एक हालैंडवासी था। उसका इंजन उपयोगी वस्तु की अपेक्षा कुतूहलजनक अधिक था, क्योंकि पिस्टन को शुरू में चलाने और उसे सिलिंडर में आगे-पीछे चलता रखने के लिए बार-बार मशीन में बाहर

डालना और उसे बार-बार पलीता लगाना कठिन भी था और खतरनाक भी।

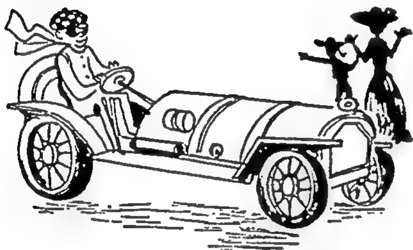
लगभग दस वर्ष बाद आविष्कर्ता डेनिस पैपिन ने यह फैसला किया कि यदि इस मशीन में खतरनाक बारूद की जगह आसानी से नियंत्रण में आनेवाली भाप का प्रयोग किया जाए, तो यह अधिक अच्छी तरह चलेगी; और उसके कुछ ही समय बाद आगे-पीछे जानेवाले पिस्टनों से युक्त भाप इंजन बनाए, और प्रयोग में लाए जाने लगे। यह एक और उदाहरण है जिसमें एक बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण आविष्कार बहुत समय पहले शुरू हुआ और फिर बहुत दिनों तक बिना उपयोग में आए पड़ा रहा।



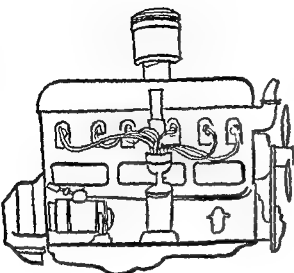
लगभग दो सौ वर्ष बाद लोगों ने फिर एक बार अपनी आविष्कारक बुद्धि अन्तर्दहन इंजन पर लगाई। इसके बाद बहुत ही थोड़े समय में—सौ वर्ष से भी कम में—इस इंजन को ऐसा उन्नत और समर्थ बना दिया कि आज की दुनिया में यह एक आम आवश्यकता बन गया है। हज़ारों आदमी अन्तर्दहन इंजनों के सिलिण्डरों में तेजी से बार-बार होनेवाले विस्फोटों के धक्कों से ही राजमार्गों पर, आकाश में और समुद्र के आर-पार दिन-रात दौड़ते दिखाई देते हैं। इन इंजनों से खेत जोतने, ज़मीन से पानी और तेल खींचने, बिजली के जनरेटर चलाने, राज-मार्ग बनाने और गगनचुम्बी अट्टालिकाएं खड़ी करने के लिए भी शक्ति प्राप्त होती है। इस इंजन से मनुष्य के जो-जो काम होते है, उन सबकी सूची कई पृष्ठों में आएगी।

सन् १८६० तक अनेक देशों में लोग इस नये साधन, अन्तर्दहन इंजन, पर ज़ोर-शोर से कार्य कर रहे थे। बीसवीं शताब्दी शुरू होने के कुछ ही समय बाद मोटर उद्योग, जिसमें अन्तर्दहन इंजन का सबसे अधिक उपयोग होता है, बढ़ना शुरू हुआ। संयुक्त राज्य अमेरिका में ओल्ड्स, ब्यूक, फोर्ड, पैकार्ड

और कैडिलेक आदि प्रसिद्ध नाम मोटरों के आगे-पीछे दिखाई देने लगे। डेमलर बेन्ज, हिस्पानो, मेबैक और रोल्स आदि यूरोप के इंजन और मोटर बनानेवाले प्रसिद्ध हो चुके थे। ये तथा दूसरे मोटर निर्माता अंतर्दहन इंजन के मुख्य उपयोगकर्ता ही नहीं बन गए थे, ये ही वे लोग हैं जिन्होंने इस इंजन में ऐसे सुधार किए हैं जिनसे यह आज मनुष्य जाति का विश्वसनीय सेवक बन गया है।



४-साइकिल इंजन

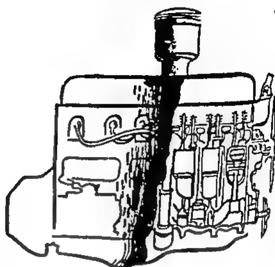


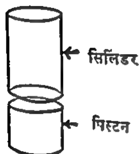
अध्याय नौ

अन्तर्दहन इंजन कैसे कार्य करता है ?

कुछ दृष्टियों से अन्तर्दहन इंजन पिस्टन और सिलिण्डर-वाले भाप के इंजन से बहुत कुछ मिलता-जुलता है। दोनों में सिलिण्डर के भीतर की दाब का बल पिस्टन को चलाता है ; और यह धक्का एक जोड़क डंडे के द्वारा शैफ्ट पर लगे हुए क्रैंक पर पहुंचाया जाता है, और इससे शैफ्ट को घुमाया जाता है। पर भाप के इंजन में इंजन से बाहर होनेवाले दहन या आग से उत्पन्न भाप दाब लगाती है ; और अन्तर्दहन इंजन में इंजन के सिलिण्डर के अन्दर होनेवाले दहन या आग से दाब पैदा होती है।

अन्तर्दहन इंजन की शक्ल देखनी हो तो किसी मोटर का हुड हटाइए। पर इंजन के बाहरी हिस्से को देखने से हम अच्छी तरह यह नहीं समझ सकेंगे कि इसे कौन-सी वस्तु चलाती है। इसके लिए हमें इंजन के अन्दर देखना होगा। यदि हम इंजन के एक तरफ से भीतर झांकें तो हमें अगले पृष्ठवाले चित्र जैसी वस्तु दिखाई देगी। इंजन से अपरिचित आदमी को इससे कोई भी बात समझ में नहीं आएगी, क्योंकि एक चित्र में बहुत सारी





पिस्टन सिलिंडर में फिट आता है



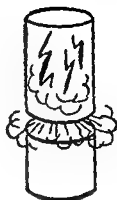
वायु सिलिंडर में बन्द हो और दब जाती है

विभिन्न वस्तुएं दिखाई गई हैं।

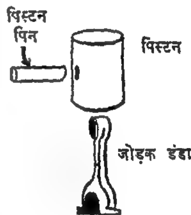
इसलिए सिर्फ एक सिलिण्डर और पिस्टन से देखना शुरू कीजिए। अधिकतर मोटर इंजनों में ६ या ८ सिलिण्डर होते हैं। पर चूंकि सब सिलिण्डर एक जैसे होते हैं, इसलिए एक सिलिण्डर को अच्छी तरह समझकर हम सब सिलिण्डरों को समझ जाएंगे।

इंजन के सिलिण्डर की तुलना एक ऐसे खाली गोल कनस्तर से की जा सकती है, जिसका तली का सिरा काट दिया गया हो। पिस्टन कुछ कम चौड़ा सिलिण्डर होता है, जो इंजन के सिलिण्डर में फिट बैठ जाता है। जब पिस्टन सिलिण्डर में धकेला जाता है, तब वह हवा को रोकता और सम्पीडित (कम्प्रेस) करता या दबाता है। अब मान लो कि इस सम्पीडित हवा में गैसोलीन की भाप है। यदि यहां चिनगारी पैदा हो जाए तो क्या होगा, यह आसानी से समझ में आ जाएगा। उसमें विस्फोट होगा जो पिस्टन को नीचे की ओर धकेल देगा। इंजन के सिलिण्डर में यही घटना-क्रम होता है। पिस्टन ऊपर चढ़ता है और वायु तथा गैसोलीन के मिश्रण को दबाता है। एक चिनगारी पैदा हो जाती है, जिससे विस्फोट होता है, जो पिस्टन को नीचे धकेल देता है।

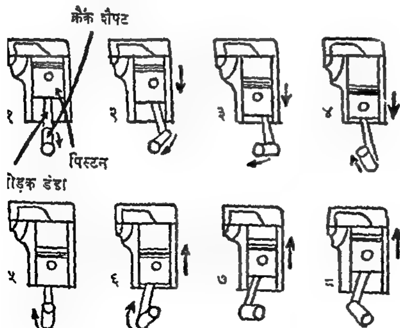
पिस्टन की इस ऊपर-नीचे गति को उसी तरह घूर्णक गति में बदल दिया जाता है जैसे भाप के इंजन में। पिस्टन एक जोड़क डंडे से जुड़ा रहता है। डंडे का दूसरा सिरा इंजन के क्रैंक शैफ्ट के क्रैंकपिन से जुड़ा रहता है। जब सिलिण्डर में होनेवाला विस्फोट पिस्टन को नीचे धक्का देता है, तब जोड़क डंडे के द्वारा वह धक्का क्रैंकपिन पर पहुंच जाता है। इससे क्रैंक शैफ्ट घूमने लगता है। क्रैंक शैफ्ट के घूमते हुए क्रैंकपिन पिस्टन को सिलिण्डर में फिर पीछे को धकेल देता है। यह क्रिया-श्रेणी नीचे चित्रों में दिखाई गई है।

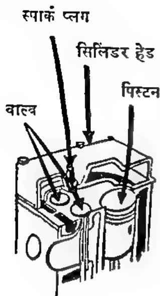

विस्फोट पिस्टन को नीचे धकेल देता है

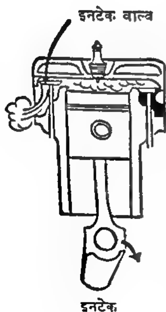
पिस्टन को ऊपर और नीचे चलता रखने के लिए सिलिण्डर को हवा और गैसोलीन वाष्प के 'झोंक' या 'चार्ज' बीच-बीच में मिलते रहने चाहिए। इन चार्जों में चिनगारियों से बार-बार विस्फोट करना होगा। इसी प्रकार विस्फोटों से जली हुई गैसों को सिलिण्डर से बाहर निकालना होगा।



सिलिण्डर के बार-बार 'चार्जिंग' का और जली हुई गैसों







इनटेक

को हटाने का कार्य वाल्वों द्वारा सम्पन्न किया जाता है। सिलिण्डर के ऊपर के भाग में दो वाल्व होते हैं: एक इनटेक या प्रवेशक वाल्व, जो गैसोलीन वाष्प और वायु को अन्दर आने देता है; और दूसरा एग्जास्ट वाल्व या रेचन वाल्व, जिसे खोलकर जली हुई गैसों को सिलिण्डर से बाहर निकाला जाता है।

प्रत्येक वाल्व एक लम्बे धातु के धड़ पर एक चपटी इस्पात की पटरी होता है। यह पटरी सिलिण्डर के एक छेद में फिट बैठ जाती है। जब वाल्व दबाया जाता है, तब वह इस छेद को बंद कर देता है; जब इसे उठाया जाता है, तब छेद खुल जाता है, जिससे गैस या वायु उसमें से गुज़र सकती है।

नीचे और अगले पृष्ठ पर दिए हुए चार चित्रों से आपको यह समझने में सुविधा होगी कि इंजन के सिलिण्डर में वाल्व और पिस्टन मिलकर किस तरह कार्य करते हैं। पहले चित्र में इनटेक का आरम्भ दिखाया गया है। बाईं ओरवाला वाल्व, अर्थात् इनटेक वाल्व खुला हुआ है, पिस्टन नीचे जा रहा है और गैसोलीन वाष्प तथा वायु का मिश्रण वाल्व में से गुज़रकर तेज़ी से सिलिण्डर में जा रहा है, जिससे वह नीचे जाते हुए पिस्टन के कारण खाली हुए स्थान को भर सके।

पिस्टन के नीचे चले जाने पर सिलिण्डर गैसोलीन वाष्प और वायु से भर जाता है। इसके बाद जब पिस्टन तली में पहुंचता है, तब इनटेक वाल्व बन्द हो जाता है। पिस्टन ऊपर की ओर चलने लगता है और मिश्रण संपीडित हो जाता है। जिस समय पिस्टन फिर ऊपरवाली स्थिति में पहुंचता है, उस समय गैसोलीन वाष्प और वायु का मिश्रण दबकर अपने पहलेवाले आयतन का आठवां हिस्सा रह गया होता है।

इसके बाद सिलिण्डर के ऊपरी भाग में लगे हुए एक स्पार्क प्लग में एक बिजली की चिनगारी (स्पार्क) होती है और गैसोलीन वाष्प का विस्फोट होता है (इंजीनियरों की भाषा में प्रज्वलन या इग्निशन होता है); यह सिर्फ तेज़ी से जलने का एक

वैसा ही प्रक्रम है जैसे अध्याय चार में विचार किया गया था। गैसोलीन के कार्बन और हाइड्रोजन वायु के आक्सीजन से मिलकर कार्बनडाईआक्साइड (CO_2) और पानी (H_2O) के अणु बनाते हैं। ये अणु तेज गति कर रहे होते हैं। (दहने ऊंचे ताप पर होता है), और वे पिस्टनहेड पर ज़बरदस्त बमबारी करते हैं। पिस्टन पर नीचे की ओर को पड़नेवाला धक्का दो टन से भी अधिक होता है—यह इतना होता है कि जैसे पिस्टन पर ४००० पौंड का भार एकाएक रख दिया जाए! इससे आपको कुछ यह अन्दाज़ा हो सकता है कि कितनी भारी बमबारी होती है।

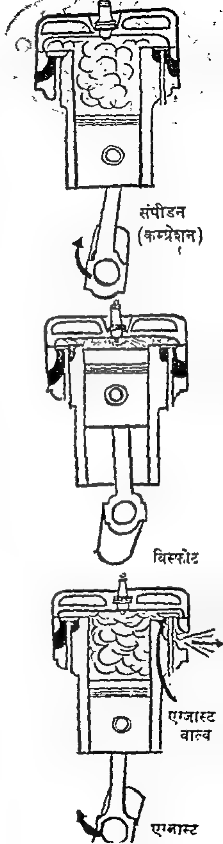
पिस्टन पर पड़नेवाला धक्का जोड़क डंडे के द्वारा क्रैंकपिन पर पहुंचता है, और इंजन के क्रैंक शैफ्ट को घुमाता है। मोटरकार में घूर्णक गति, शैफ्टों और गियरों के द्वारा, पहियों पर पहुंचाई जाती है जिससे पहिए घूमते हैं और कार चलने लगती है।

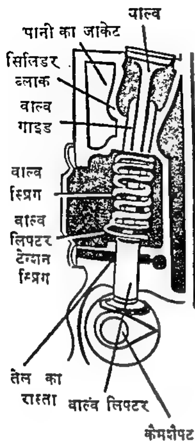
पिस्टन के तली पर पहुंच जाने और फिर ऊपर को चलना शुरू कर देने के बाद एग्ज़ास्ट वाल्व खुल जाता है। तब ऊपर की ओर चलता हुआ पिस्टन जली हुई गैस को सिलिण्डर से बाहर धकेल देता है।

जब पिस्टन फिर ऊपर पहुंचता है, तब एग्ज़ास्ट वाल्व बन्द हो जाता है और इनटेव वाल्व खुल जाता है। अब फिर इनःटेव संपीडन (कम्प्रेशन), विस्फोट और एग्ज़ास्ट क्रियाओं का पूरा सिलसिला चलता है। ये चार क्रियाएं क्रमशः तब तक होती रहती हैं, जब तक इंजन चलता है।

वाल्व किस तरह चलाए जाते हैं

अगले पृष्ठ पर चित्र में एक वाल्व और उसके वे अन्य भाग दिखाए गए हैं, जो उसे चलाने के लिए आवश्यक होते हैं। जब वाल्व बन्द होता है, तब वाल्व-स्प्रिंग वाल्व को इतना कसकर जमाए रखता है कि सिलिण्डर में से बिलकुल भी गैस





या वायु बाहर नहीं निकल सकती। पर ठीक समय पर वाल्व अवश्य खुल जाना चाहिए। यह कार्य कैम शैफ्ट द्वारा किया जाता है। कैम शैफ्ट में एक कैम (पहिये का गति परिवर्तक अग्रभाग) होता है, जिसपर एक लोब या 'वम्प' होता है। जब इंजन का क्रैंक शैफ्ट घूमता है, तब कैम शैफ्ट भी घूमता है, क्योंकि वे दोनों गियरों से जुड़े होते हैं। कैम शैफ्ट के घूमने पर लोब वाल्व-लिफ्टर के नीचे चला जाता है और लिफ्टर को ऊपर की ओर धकेलता है, जिससे वाल्व अपने स्थान से हट या उठ जाता है। इसके बाद कैम शैफ्ट के और घूमने से लोब वाल्व-लिफ्टर के नीचे से निकल जाता है, जिससे वाल्व-स्प्रिंग वाल्व को फिर उसके स्थान पर जमा सकता है।

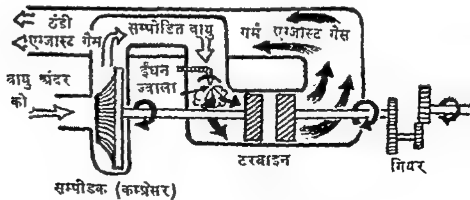
कैम शैफ्ट में इंजन के प्रत्येक सिलिण्डर के लिए दो कैम होते हैं—एक इनटेक वाल्व के लिए और दूसरा एग्जास्ट वाल्व के लिए। कैम के लोब ठीक समय पर इनटेक और एग्जास्ट वाल्वों को खोल और बन्द कर देते हैं।

टरबाइन इंजन

यदि आप यह कहें कि गैसोलीन इंजन के जिन भीतरी भागों का हम अभी वर्णन कर रहे थे, वे उलझनदार या जटिल हैं तो आपका कहना सही होगा। इसमें पिस्टन, जोड़क डंडे, वाल्व, वाल्व-लिफ्टर और बहुत सारे अन्य भाग होते हैं। दूसरी ओर, टरबाइन इंजन अपेक्षया सरल होता है। टरबाइन इंजन का प्रयोग ट्रकों और यात्री-मोटरों में होने लगा है। कुछ इंजीनियर कहते हैं कि निकट भविष्य में अधिकतर नई मोटरें पिस्टन इंजन के बजाय टरबाइन इंजनों से चला करेंगी।

टरबाइन इंजन में संपीडक (कम्प्रेसर) होता है जो बड़ी तेज चाल से घूमता है। कम्प्रेसर की फालियां (ब्लेड) घूमते हुए एक बड़ी नली या रास्ते से वायु को बलपूर्वक टरबाइन सेक्शन में धकेल देती हैं। वायु के टरबाइन में घुसने से पहले

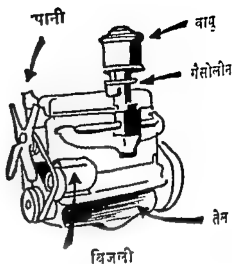
इसमें ईंधन छिड़का जाता है। यह ईंधन गैसोलीन, कैरोसीन (मिट्टी का तेल), या तेल (पेट्रोल) होता है। यह स्थिर ज्वाला से जलता है, और ऊंचे ताप तथा ऊंची दाब पैदा करता है। गरम और बहुत अधिक संपीडित गैसें टरबाइन के पहियों में से आती हैं और उन्हें घुमाने लगती हैं। यह क्रिया स्टीम टरबाइन इंजन में होनेवाली क्रिया से बहुत कुछ मिलती-जुलती है। एक टरबाइन पहिया कम्प्रेसर को घुमाता है। दूसरा गियरों और शैफ्टों के एक समुदाय को चलाता है, जो कार के पहियों से जुड़े रहते हैं। इस प्रकार टरबाइन पहियों के घूमने से कार चलने लगती है। गरम एग्जास्ट गैसें टरबाइन में से गुजरने के बाद कम्प्रेसर से आ रही वायु-नली के बाहरी भाग के चारों ओर चलती है। इस प्रकार गर्म एग्जास्ट गैसें अन्दर आती हुई वायु को गर्म कर देती हैं। संपीडित वायु के गरम होने से टरबाइन की दक्षता या क्षमता बढ़ जाती है।



गैसोलीन टरबाइन

अध्याय दस

पिस्टन इंजन को चलाना



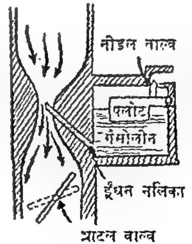
आइए पिस्टन टाइप के गैसोलीन इंजन के बारे में थोड़ा-सा और विचार करें। अनेक वर्षों से इन इंजनों का बहुत प्रयोग होने लगा है; और इस समय ऐसे दसियों लाख इंजन काम आ रहे हैं। इस इंजन के लिए आवश्यक है कि इसमें वायु मिली हुई गैसोलीन वाष्प आती रहे। मिश्रण को आग लगाने के लिए इसमें बिजली की चिनगारियां भी अवश्य होनी चाहिए, जैसाकि हमने पिछले अध्याय में देखा था। क्योंकि दहन से गर्मी पैदा होती है, इसलिए ठंडा करने की व्यवस्था द्वारा इंजन को ठंडा करना पड़ेगा ताकि वह बहुत अधिक गर्म न हो जाए, और इंजन के चलनेवाले हिस्सों को चिकना करने-वाला तेल देना होगा जिससे वे जल्दी न घिसें।

गैसोलीन और वायु को मिलाना

कार्बुरेटर, जो इंजन के ऊपरी भाग पर होता है, वायु से द्रव गैसोलीन को मिलाकर इंजन के चलने के लिए आवश्यक दहनयोग्य मिश्रण बनाता है। इंजन के एक ओर लगा हुआ ईंधन पम्प (फ्युएल पम्प) ईंधन टंकी से गैसोलीन खींचता है, और उसे कार्बुरेटर को देता है।

गैसोलीन कार्बुरेटर के एक तरफ एक तैरते हुए छोटे-से डिब्बे (फ्लोट बाउल) में प्रविष्ट होती है। जब यह फ्लोट बाउल भर जाता है, तब धातु का एक फ्लोट (तैरता हुआ डिब्बा) छेद में एक नीडल वाल्व को धकेल देता है; और इस तरह छेद को बन्द कर देता है। इससे और अधिक गैसोलीन का आना तब तक के लिए बन्द हो जाता है, जब तक गैसोलीन की सतह फिर नीची न हो जाए।

फ्लोट बाउल से गैसोलीन एक छोटी नली या ईंधन नलिका (फ्युएल नाज़ल) में ऊपर चढ़ती है—यह नली कार्बुरेटर की वायु नली (एयर हार्न) में समाप्त होती है। हार्न एक गोल नली मात्र होता है जिसमें से होकर वायु इंजन के सिलिण्डर में पहुंचती है। जब वायु ईंधन नलिका के सिरे के पास से तेज़ी से गुज़रती है तब यह छोटी-छोटी बूंदियों के रूप में द्रव गैसोलीन को उसमें से खींच लेती है। गैसोलीन की बुंदियां झट वाष्प बन जाती हैं, और वायु इससे मिलकर खुले हुए इनटेक वाल्व में से इंजन के सिलिण्डर में चली जाती है।

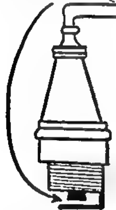


एयर हार्न या वायु नली के निचले हिस्से में लगा हुआ 'थ्राटल' वाल्व इंजन से पैदा होनेवाली शक्ति की मात्रा को नियंत्रित करता है। थ्राटल वाल्व डंडों और लिवरों (उत्तोलकों) द्वारा कार चलाने की जगह लगे हुए ऐक्सेलरेटर पैडल से जुड़ा होता है। जब ड्राइवर चार्ज या शक्ति बढ़ाना चाहता है, तब वह पेट्रोल छोड़नेवाले स्थान पर पांव रखता है अर्थात् वह ऐक्सेलरेटर को दबा देता है, जिससे थ्राटल खुल जाता है और इसमें से गैसोलीन वाष्प और वायु की अधिक मात्रा सिलिण्डर में आ जाती है। इससे मिश्रण प्रज्वलित करने पर दाब बढ़ जाती है और प्रत्येक पावर-स्ट्रोक के समय पिस्टन पर अधिक ज़ोर का धक्का लगता है। परिणामतः शक्ति और चाल बढ़ जाती है।

जब ड्राइवर ऐक्सेलरेटर से पांव हटा लेता है, तब थ्राटल बन्द हो जाता है और इंजन की चाल कम हो जाती है।

चिनगारी पैदा करना

गैसोलीन वाष्प और वायु के मिश्रण को सिलिण्डर में एक चिनगारी द्वारा प्रज्वलित किया जाता है। इंजन में लगा हुआ एक अद्भुत छोटा-सा हाई वोल्टेज बिजली उत्पादक यंत्र, जो 'प्रज्वलन व्यवस्था' कहलाता है, चिनगारी पैदा करता है। इस व्यवस्था के बिजली-सम्बन्धी सिद्धान्तों पर विस्तार से बाद में विचार किया जाएगा। यहां हमें सिर्फ इतना कहना है कि यह प्रज्वलन व्यवस्था कार में लगी हुई स्टोरेज बैटरी की कम वोल्टता (६ या १२ वोल्ट) को बढ़ाकर २०,००० वोल्ट तक कर देती है। यह ऊंची वोल्टता तब इंजन के सिलिण्डर के स्पार्क प्लग पर कम्प्रेशन स्ट्रोक के बिलकुल अन्त में प्रयुक्त की जाती है। हाई वोल्टेज से उत्पन्न चिनगारी गैसोलीन वाष्प और वायु के मिश्रण को आग लगा देती है।



इंजन ठंडा करने की व्यवस्था

इंजन में ईंधन जलाकर गर्मी पैदा की जाती है। उसे अधिक गर्म होने से बचाने के लिए उसमें एक ठंडा करने की व्यवस्था होती है जो गर्मी पैदा होते ही उसे दूर कर सके। चित्र में एक इंजन इस तरह कटा हुआ दिखाया गया है जिससे ठंडा करने की व्यवस्था दिखाई दे सके।

इंजन के सिलिण्डर के चारों ओर पानी का एक जाकेट है। यह जाकेट इंजन के सिलिण्डरों और बाहरी आवरण के बीच एक खुली जगह होती है। इस स्थान में पानी घूमता रहता है और वह सिलिण्डरों से गर्मी खींचता रहता है। इसके बाद इस गर्म पानी को पम्प द्वारा इंजन के रेडिएटर में पहुंचा दिया जाता है, जिसमें बहुत-से वायु-मार्ग होते हैं। इनमें से कुछ मार्गों से पानी जाता है और शेष से वायु गुजरती है। इंजन के पंखे से और कार के चलने से वायु तेजी से वहां आती-जाती है। इस प्रकार रेडिएटर में से गुजरता हुआ गर्म पानी ठंडा हो जाता है,

पानी का पम्प

थर्मोस्टेट

कार हीटर

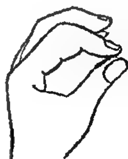
पानी-वितरक नली

रेडियेटर

और वह इंजन के पानीवाले जाकेट में लौटकर फिर गर्मी खींचने और उसे दूर करने लगता है।

इंजन को तेल देने की व्यवस्था

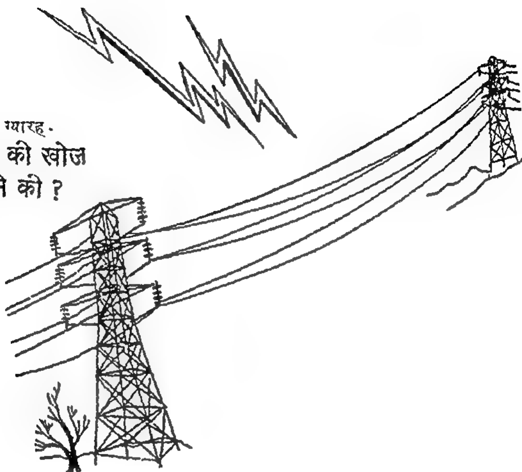
जब आप अपनी पहली उंगली और अंगूठे के बीच में एक बूंद तेल रखते हैं तब अंगूठा और उंगली अधिक आसानी से एक-दूसरे पर रपटते हैं। इसी प्रकार इंजन के भाग अपने बीच लगे तेल के कारण आसानी से रपटते या चलते हैं। इंजन को तेल देने की व्यवस्था इंजन के सब चलनेवाले भागों को तेल पहुंचाती है, जिससे वे ठीक तरह चिकने हो जाते हैं।



इंजन की तली में तेल के वर्तन में कई सेर तेल रखा रहता है। वहां से एक पम्प तेल को ऊपर खींचता है, और उसे इंजन के सब वेयरिंगों और दूसरे चलनेवालों तलों पर धाराओं के रूप में पहुंचाता है।

अध्याय ग्यारह

बिजली की खोज किसने की ?



'इलेक्ट्रिसिटी' (बिजली) शब्द यूनानी भाषा के इलेक्ट्रोन शब्द से बना है, जो पहले अम्बर के लिए प्रयुक्त होता था। यह बात सचमुच बड़ी अजीब लगती है कि मनुष्य जाति के इस सेवक का नाम अम्बर के नाम पर रखा जाए जो चीड़ के वृक्षों का सड़कर जमनेवाला रस या द्रव होता है। पर यह मनुष्य द्वारा दो हज़ार वर्ष से भी अधिक काल तक बिजली के बारे में किए गए अध्ययन की सबसे बड़ी विचित्रता नहीं है।

यह कहा जा सकता है कि ईसा के जन्म से लगभग छः वर्ष पहले बिजली की खोज हुई, पर लगभग पच्चीस सौ

साल बाद मनुष्यों ने बिजली का व्यावहारिक प्रयोग और बिजली के लट्टू, टेलीफोन, रेडियो, रेफ्रिजरेटर, और सिनेमा के चित्र, और बिजली से चलनेवाले वे अन्य असंख्य यंत्र बनाने शुरू किए, जिनपर आज हम इतने अधिक निर्भर हैं।

ईसा से लगभग छः सौ साल पहले बिजली की खोज की कहानी से हमारे मन में यूनान के मेधावी पुरुष थेलीज़ का और अम्बर के एक टुकड़े का चित्र आ जाता है। अम्बर, जो जमे हुए शहद के टुकड़ों जैसा लगता है, हजारों वर्ष पहले पैदा हुए चीड़ के वृक्षों का रस होता है। उन प्राचीन काल के चीड़ वृक्षों से निकलने के बाद इतने समय में यह रस मिट्टी से ढक गया है, और एक सख्त पत्थर जैसा बन गया है। इसका बहुत समय से आभूषणों में प्रयोग होता रहा है, और थेलीज़ के ज़माने में ऐसे अम्बर के आभूषण प्रायः दिखाई देते थे।

कहते हैं कि एक बार थेलीज ने अम्बर के एक टुकड़े को (शायद और चमकाने के लिए) अपने कुर्ते की बांह से रगड़ा। उसे यह देखकर बड़ा कुतूहल हुआ कि वह रुई के छोटे-छोटे टुकड़ों या सूखे पत्तों को अपनी ओर खींचता था। और परीक्षण करने के बाद वह इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि यह आकर्षक बल अकेले अम्बर का ही गुण-धर्म है। इसलिए उसने इस विशेषता को 'इलेक्ट्रिसिटी' नाम दिया। क्योंकि, जैसाकि हम बता चुके हैं, यूनानी भाषा में अम्बर के लिए 'इलेक्ट्रोन' शब्द है।



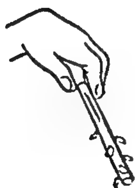
थेलीज की महान खोज दो हज़ार वर्ष से भी अधिक समय तक एक विचित्रता-मात्र बनी रही। लगभग सन् १६०० में रानी एलिज़ाबेथ के ज़माने में एक अंग्रेज सर विलियम गिलबर्ट ने बताया कि यह बिजली का एक विचित्र गुण अम्बर के अतिरिक्त बहुत-से अन्य पदार्थों में भी है, जिनमे से कुछ पदार्थ कांच, गन्धक, अबरक और हीरा है। स्वभावतः उस समय के लोगों को बिजली के स्वरूप के बारे में कोई समझ नहीं थी। कुछ लोग समझते थे कि यह एक तरह की भाप है जो रगड़ी

हुई वस्तु में से निकल जाती है, और जब जम जाती है और वस्तु में वापस चली जाती है, तब हलकी वस्तुओं, जैसे कागज के टुकड़ों या सूखे पत्तों को अपनी ओर खींचती है। कुछ लोग समझते थे कि बिजली एक प्रकार की 'किरणें' हैं, जो रगड़ी हुई वस्तु में से निकलती हैं। वे समझते थे कि ये किरणें कागज़ या पत्तों के छिद्रों को भेदकर पार या इधर-उधर जा सकती हैं। जब ये 'किरणें' सिकुड़ती हैं, तब कागज़ या पत्तों को रगड़ी हुई वस्तु की ओर खींचती हैं।



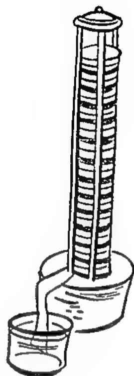
गिलबर्ट के एक-दो शताब्दियों बाद वैज्ञानिकों को भी बिजली के स्वरूप के बारे में इससे अधिक स्पष्ट कोई ज्ञान नहीं था। पर उन्होंने इसके क्रिया करने के तरीके के अध्ययन में बड़ी उन्नति की। उस समय के बाद से एक के बाद दूसरे वैज्ञानिक ने इस सम्बन्ध में खोज जारी रखी। हर वैज्ञानिक ने अपने से पहले किए गए कार्य को जानकर आगे अपना कार्य किया और वह अपनी सफलता दूसरों के लाभ के लिए छोड़ गया।

इटली के डाक्टर लुइगी गलवनी के बारे में जरा सोचिए। उसने सन् १७९१ में कुछ परीक्षणों के विचित्र परिणाम प्रकाशित किए, जो वह कटे हुए मेढक की टांगों के बारे में करता रहा था। उसने देखा था कि यदि मेढक की टांग की मांस-पेशियों को दो विभिन्न धातुओं, जैसे तांबे और लोहे, से छुआ जाए तो मांस-पेशियां झटका खाती हैं, बशर्ते कि वे दोनों धातु एक-दूसरे को छूती हों। गलवनी ने सोचा कि यह क्रिया मांस-पेशियों के भीतर होनेवाली क्रियाओं का परिणाम है।



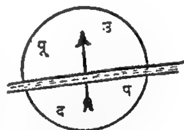
पर कुछ वर्ष बाद एक और इटालियन ऐलेसाण्ड्रो वोल्टा ने सिद्ध किया कि मांस-पेशियों की क्रिया दो धातुओं को मिलाकर रखने से उत्पन्न हलकी बिजली की धारा से पैदा हुई थी। उसने बिजली की धारा पैदा करनेवाला एक उपकरण सचमुच बनाकर इसे प्रमाणित किया। यह उपकरण 'वोल्टेइक पाईल' या बैटरी कहलाता था और इसमें जस्ता और तांबे की पटरियों के बीच

में चमड़े या कपड़े के, लाई (क्षारीय घोल) से भीगे हुए, टुकड़े रखे हुए थे। इस वोल्टेइक बैटरी से बिजली की इतनी दाब पैदा हो जाती थी कि वह तारों में बिजली की धारा चला देती थी। इस खोज का सम्मान करने के लिए बिजली की दाब की इकाई का नाम उसके नाम पर 'वोल्ट' रखा गया।



इसके बाद सन् १८२० में फ्रांस के आन्द्रे ऐम्पियर ने वोल्टेइक बैटरियों का प्रयोग करके चुम्बकों और बिजली के प्रवाह में एक बड़े मनोरंजक आपसी सम्बन्ध का पता लगाया। हजारों वर्षों से लोग जानते थे कि चुम्बक लोह खनिज के टुकड़े होते हैं जो लोहे के दूसरे टुकड़ों को अपनी ओर खींचते हैं। यदि उन्हें धागे से लटका दिया जाए तो वे तब तक इधर-उधर झूलते रहेंगे जब तक कि उनकी दिशा उत्तर-दक्षिण न हो जाए। पर ऐम्पियर से पहले तक किसीके मन में यह संदेह नहीं उठा था कि बिजली की धारा और चुम्बकों में एक विचित्र और घनिष्ठ सम्बन्ध है।

यह सच है कि ऐम्पियर की खोज से कुछ समय पहले एक डेनिश वैज्ञानिक अरर्स्टेथ ने बतलाया था कि यदि कम्पास की सुई को (जो एक छोटी चुम्बक होती है) बिजली की धारा के प्रवाह से युक्त तार के पास रखा जाए तो उसपर विचित्र क्रिया होती है। पर ऐम्पियर ने इससे बहुत अधिक बात बताई। उसने यह दिखाया कि बिजली की धारा सचमुच चुम्बक पैदा करती है। इसे प्रमाणित करने के लिए उसने तार की कुण्डली में से बिजली की धारा गुजारी, और यह दिखाया कि तब कुण्डली बिलकुल चुम्बक की तरह क्रिया करती है। बिजली से युक्त कुण्डली लोहे के टुकड़े खींचती थी, और लटका देने पर वह कम्पास की सुई की तरह उत्तर और दक्षिण का ही संकेत करती हुई स्थिर होती थी। ऐम्पियर की खोज के कारण उसके नाम पर बिजली की धारा की इकाई का नाम 'ऐम्पियर' रखा गया।



तार में करेंट चलने पर कंपास की सुई इधर-उधर चलती है

कुछ वर्ष बाद एक जर्मन वैज्ञानिक जी० एस० ओम ने यह दिखाया कि तार बिजली की धारा का प्रतिरोध (रेजिस्टेंस) करते



हैं, और तार के आकार और लम्बाई के अनुसार, और तार जिस वस्तु का बना है उसके अनुसार, यह प्रतिरोध भिन्न-भिन्न होता है। उसके महान कार्य के कारण बिजली के प्रतिरोध की इकाई का नाम उसके नाम पर 'ओम' रखा गया।

इस प्रकार हम देखते हैं कि बिजली नापने में प्रयुक्त होनेवाली तीन मूलभूत इकाइयों—वोल्ट, ऐम्पियर और ओम के नाम तीन प्रसिद्ध वैज्ञानिकों के नामों पर रखे गए हैं, जो इटालियन, फ्रेंच और जर्मन थे। यह विज्ञान के जगत् की एकता का सुन्दर नमूना है।

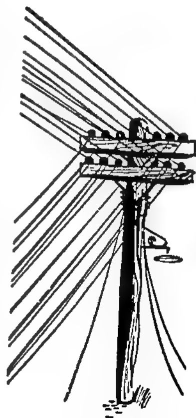
इधर अन्य देशों के लोग बिजली नामक इस रहस्यमय पदार्थ के अनेक रूपों की गहराइयों में प्रवेश करने में लगे हुए थे। संयुक्त राज्य अमेरिका में बेंजामिन फ्रैंकलिन ने सन् १७५२ में एक खतरनाक परीक्षण द्वारा यह सिद्ध कर दिया था कि आकाश में चमकनेवाली बिजली यही बिजली है। एक वर्षावाले दिन उसने एक पतंग उड़ाई और गीली डोरी से बिजली की चिनगारियां अनुभव कीं। बाद में अन्य परीक्षणकर्ता, जिन्होंने ऐसा करने की कोशिश की, बिजली के भारी डिस्चार्ज के कारण मर गए। फ्रैंकलिन ने यह विचार पेश किया कि बिजली दो अवस्थाओं में रह सकती है, जिन्हें उसने धनात्मक और ऋणात्मक अवस्थाएं कहा, और यह कंडक्टरों या चालकों में से वैसे ही बह सकती है जैसे नल में पानी बहता है। बिजली के सम्बन्ध में हमारे वर्तमान विचारों का यही आधार है।

सन् १८३० में महान अंग्रेज वैज्ञानिक माइकेल फैरेडे के मन में यह सवाल पैदा हुआ : यदि बिजली चुम्बक पैदा कर सकती है, जैसाकि अर्स्टेथ और ऐम्पियर ने करके दिखाया था, तो क्या चुम्बक बिजली नहीं पैदा कर सकता ? दूसरे शब्दों में, क्या यह उत्क्रमणीय, अर्थात् उलटी ओर को भी चल सकनेवाली, क्रिया है ? उसी समय संयुक्त राज्य अमेरिका में जोसेफ हेनरी भी इसी बात पर विचार कर रहा था।

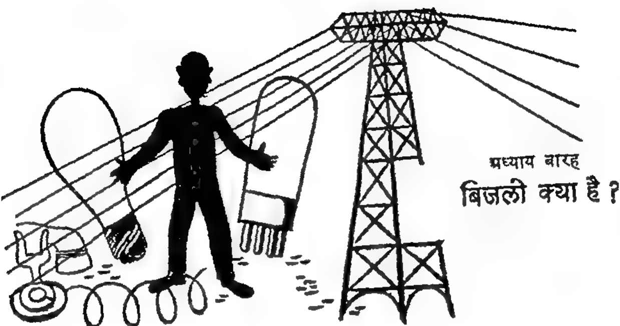
ये दो आदमी एक ऐसी खोज के निकट परिश्रम कर रहे थे जिससे सभ्यता का मार्ग ही बदल जाना था। ऐसा बहुत कम हुआ है कि राष्ट्रों का भाग्य एकाकी व्यक्तियों की आविष्कार-प्रतिभा पर इतने प्रत्यक्ष रूप से टिका हो। क्योंकि जब इंग्लैंड में फैरेडे ने संयुक्त राज्य अमेरिका में हेनरी ने चुम्बक से सचमुच बिजली की धारा पैदा कर दी, तब उन्होंने उन्नति की एक ऐसी प्रतिक्रिया-श्रेणी को जन्म दिया जिसके परिणामस्वरूप हमारा आज का अद्भुत बिजली-युग आ गया, जिसमें बिजली का लट्टू, रेडियो, टेलीफोन और बिजली के वे सब अन्य यंत्र हैं, जो आज हमारी सुख-सुविधा का इतना बड़ा आधार हैं।

एडिसन, टेसला, वेस्टिंगहाउस, मोर्स, बेल और अन्य व्यक्तियों ने इस महान खोज को मनुष्य जाति के लिए उपयोगी बनाया। एडिसन ने बिजली का लट्टू बनाया, और उसने ही पहला बिजली पैदा करने का बड़ा यन्त्र बनाया। यह यन्त्र, जो न्यूयार्क सिटी में था, एक वर्ग मील क्षेत्र में बिजली पहुंचाता था, जो उस समय की दृष्टि से बहुत ही बड़ा कार्य था। टेसला ने बिजली-शक्ति के एक नये रूप, प्रत्यावर्ती (आल्टरनेटिंग करेंट) या ए० सी० को प्रयोग में लाने का विचार पेश किया और उसने इसके उत्पादन, वितरण और प्रयोग के लिए साज-सामान बनाया। वेस्टिंगहाउस ने टेसला की सहायता की, और प्रत्येक प्रत्यावर्ती धारा बनाने और प्रयोग करने के लिए आवश्यक बिजली की मशीनरी का निर्माण किया, और आज कुछ थोड़ी-सी मशीनरी और प्रक्रमों को छोड़कर और सब जगह प्रत्यावर्ती धारा ही प्रयोग में आती है। आगे चलकर हम प्रत्यावर्ती धारा या ए० सी० और दिष्ट धारा (डाइरेक्ट करेण्ट) या डी० सी० के बारे में कुछ और बातें बताएंगे।

मोर्स और बेल ने टेलीग्राफ (तार) और टेलीफोन द्वारा तारों पर संवाद भेजने में बिजली का प्रयोग किया; और उनकी खोजों से मारकोनी और डी. फारेस्ट की खोजें हुईं, जिन्होंने



बे-तार की खबरें या रेडियो द्वारा खबरें भेजने के साधन बनाए। फिर उनकी खोजों का सीधा परिणाम यह हुआ कि दूसरे लोगों ने सिनेमा-चित्रों को बोलते चित्र बनाया; टेलीविज़न द्वारा, आकाश में से, चलते-फिरते चित्रों को दूसरे स्थान पर पहुंचाया; और रेडार द्वारा कोहरे या अंधेरे में भी देखने का तरीका निकाला। आधुनिक विज्ञान के इन अद्भुत 'करतबों' पर हम बाद में विशेष विचार करेंगे। उनके कार्य का ढंग समझने से पहले हमें स्वयं बिजली के बारे में कुछ बातें समझ लेनी चाहिए। अगले अध्याय को देखने से यह पता चलेगा कि यह कोई कठिन कार्य नहीं है, क्योंकि बिजली-सम्बन्धी आवश्यक बातों का हम पहले ही उल्लेख कर चुके हैं।

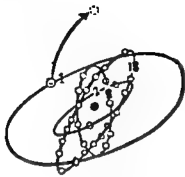


अध्याय बारह

बिजली क्या है ?

कुछ ही वर्ष पहले तक बिजली के बारे में वैज्ञानिकों के विचार बड़े अस्पष्ट और धुंधले थे। उनमें से बहुत-से लोग इसे एक तरह का 'तरल पदार्थ' समझते थे, जो तारों में से वैसे ही बहता है, जैसे नलों में पानी; पर वे यह नहीं समझ पाते थे कि यह किस कारण बहता है। उनमें से बहुत-सों का यह विचार था कि बिजली किसी तरह के बहुत छोटे-छोटे कणों की बनी हुई है, पर बिजली को कणों के रूप में अलग करने में वे सफल नहीं हुए।

इसके बाद सन् १९०९ में महान अमेरिकी वैज्ञानिक मिलिकन ने बिजली के एक अकेले कण को तोलकर और इसके विद्युत्-आवेश (इलेक्ट्रिक चार्ज) का हिसाब लगाकर वैज्ञानिक-जगत् को स्तब्ध कर दिया। सम्भवतः यह मनुष्य द्वारा किया गया सबसे हलका तोल था, क्योंकि बिजली के एक कण का भार एक पौंड के दस लाखवें के दस लाखवें के दस लाखवें के दस लाखवें के दस लाखवें के आधे हिस्से के लगभग ही होता है। एक पौंड विद्युत्-आवेश के भार में एटलाण्टिक महासागर के पानी की बूंदों की संख्या से भी अधिक ऐसे कण होंगे।

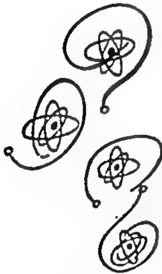


तांबे का परमाणु

ये बिजली के कण हमारे लिए अपरिचित नहीं हैं, क्योंकि हम इलेक्ट्रानों के रूप में उन्हें जानते हैं। पहले के अध्यायों में हमने बताया था कि इलेक्ट्रान परमाणुओं के नाभिकों के चारों ओर किस तरह चक्कर काटते हैं। जब इलेक्ट्रानों की बहुत बड़ी संख्या अपने परमाणुओं से अलग हो जाती है और एक तार में से चलती है, तब हम कहते हैं कि बिजली तार में से 'बहती है'। असल में पहले के वैज्ञानिक जिस बिजली के 'तरल पदार्थ' की बात करते थे, वह तार में से बहते हुए इलेक्ट्रान ही हैं और कुछ नहीं।

पर व्यष्टि या अकेले-अकेले इलेक्ट्रानों को परमाणुओं से कैसे अलग किया जा सकता है?

और इन मुक्त इलेक्ट्रानों को किसी तार में से कैसे चलाया जा सकता है?



पहले प्रश्न का उत्तर तो परमाणुओं की अपनी संरचना या भीतरी बनावट से ही मिल जाता है। कुछ परमाणुओं की बनावट ऐसी होती है कि वे आसानी से इलेक्ट्रान छोड़ देते हैं। उदाहरण के लिए तांबे का परमाणु लगातार एक इलेक्ट्रान छोड़ता और उसे (या दूसरे इलेक्ट्रान को) फिर प्राप्त करता और इसे पुनः छोड़ता रहता है। सामान्यतः तांबे के एक परमाणु में २९ इलेक्ट्रान होते हैं, जो इसके नाभिक के चारों ओर चार विभिन्न कक्षाओं में विन्यस्त हैं। सबसे अन्दरवाली कक्षा में दो इलेक्ट्रान होते हैं। उससे अगली बड़ी कक्षा में ८ होते हैं। तीसरी कक्षा में १८ इलेक्ट्रान भरे रहते हैं, और बाहरी कक्षा में सिर्फ १ इलेक्ट्रान होता है। इस बाहरी इलेक्ट्रान को ही तांबे का परमाणु लगातार छोड़ता रहता है, क्योंकि यह परमाणु के साथ बहुत निकटता या दृढ़ता से नहीं बंधा होता। यह निकलकर चला जाता है, इसके स्थान पर कोई दूसरा मुक्त घूमता हुआ इलेक्ट्रान आ जाता है और फिर यह दूसरा इलेक्ट्रान भी निकल भागता है।

परिमाणत: तांबे के तार में स्वतन्त्र इलेक्ट्रान तांबे के परमाणुओं के बीच सब दिशाओं में उड़ते फिरते हैं। इस प्रकार, यद्यपि तांबे का तार आपकी सामान्य आंख को बिलकुल गतिहीन लगता है, पर इसके अन्दर बड़ी हलचल हो रही है।



यदि तार बिजली के लट्टू या बिजली के किसी और यंत्र पर बिजली पहुंचा रहा है, तो इलेक्ट्रान बिना किसी नियम के चारों ओर नहीं चल रहे होंगे। उनमें से बहुत-से उसी दिशा में तार के एक सिरे से दूसरे सिरे की ओर दौड़ रहे होंगे।

इससे हम दूसरे प्रश्न पर पहुंच जाते हैं। मुक्त इलेक्ट्रानों को किसी तार में से कैसे चलाया जा सकता है? मनुष्यों ने इसके लिए कई तरीके निकाले हैं। एक तरीका रासायनिक है। वोल्टा की वोल्टेइक पाईल या बैटरी एक रासायनिक युक्ति है, जो तारों में बिजली या इलेक्ट्रानों को प्रवाहित करती है। दूसरा तरीका चुम्बकीय है। फैरैडे और हेनरी ने यह पता लगाया था कि चुम्बकों से तार में बिजली कैसे प्रवाहित की जा सकती है।

चुम्बक

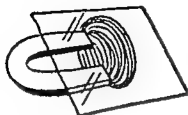
प्राय: हर किसीने नाल-चुम्बक देखे होंगे, जिन्हें नाल-चुम्बक इसलिए कहते हैं कि वे घोड़े की नाल की शकल के होते हैं। आपने चुम्बकों से परीक्षण भी किए होंगे और देखा होगा कि वे किस तरह कीलों और पेचों या लोहे की दूसरी छोटी-छोटी वस्तुओं को खींच लेते हैं। मनुष्य को हजारों वर्षों से चुम्बक का ज्ञान है।



कहा जाता है कि कई हज़ार वर्ष पहले भूमध्य सागर के क्रीट नामक द्वीप में मैगनेस नाम का एक गड़रिया रहता था। उसके पास गड़रियोंवाली लाठी थी, जिसके सिर पर लोहा लगा हुआ था। एक दिन उसने देखा कि एक अजीब शकल का काला पत्थर इस लोहेवाले सिरे पर चिपक गया। बाद में जब ऐसे बहुत सारे पत्थर मिले, तब वे मैगनेस के नाम पर मैगनेट

कहलाए। ये प्राकृतिक चुम्बक थे।

इस ज़माने में लोगों ने लोहे से चुम्बक बनाना सीखा है ; पर इससे भी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इन्होंने चुम्बकों द्वारा इलेक्ट्रान तार में चलाने, अर्थात् बिजली प्रवाहित करने का पता लगाया है।



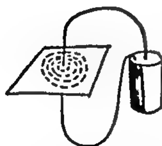
बल-रेखाएं
नाल-चुंबक

इसपर विचार करने से पहले हमें चुम्बकों की कुछ विशेषताएं जान लेनी चाहिए। यदि किसी नाल चुम्बक के ऊपर एक कांच का टुकड़ा रख दिया जाए और उस कांच पर लोहे के छीलन बिखेर दिए जाएं, तो वे छीलन रेखाओं के रूप में व्यवस्थित हो जाएंगे। यदि यही बात चुम्बक दण्ड (सीधे किए हुए नाल-चुम्बक) से की जाए तो रेखाएं अधिक आसानी से दिखाई देंगी। इन रेखाओं को वैज्ञानिक लोग चुम्बकीय 'बल-रेखाएं' कहते हैं। वे बताते हैं कि चुम्बक के दो सिरों के बीच फैली हुई बल-रेखाओं के द्वारा ही चुम्बक कार्य करते हैं।



बल-रेखाएं
चुंबक दंड

पर प्रतीत होता है कि इलेक्ट्रानों के चारों ओर भी चुम्बकीय बल-रेखाएं होती हैं। गत्ते के एक टुकड़े में से एक तार निकालकर, गत्ते पर लोह छीलन बिखेरकर और तारों को बैटरी से जोड़कर यह बात सिद्ध की जा सकती है। चलते हुए इलेक्ट्रानों (या बिजली) के चुम्बकत्व के कारण छीलन तार के चारों ओर गोल घेरे बनाने लगेंगे। इस प्रकार हम देख सकते हैं कि चलते हुए इलेक्ट्रानों और चुम्बकत्व में आपसी सम्बन्ध है। इलेक्ट्रानों के चलने से चुम्बकत्व पैदा होता है।



[illegible] से जाने वाली तार
चारों ओर बल-रेखाएं

असल चुम्बक दण्ड में इलेक्ट्रान वास्तव में प्रवाहित नहीं हो रहे, बल्कि वे लोह परमाणुओं के नाभिकों के चारों ओर चक्कर काटते हुए गति कर रहे हैं। परन्तु चुम्बक में परमाणु इस तरह रेखाबद्ध हैं कि उनके इलेक्ट्रान उसी दिशा में चक्कर काट रहे हैं। शायद इसकी तुलना उस स्थिति से की जा सकती है जिसमें बहुत सारे लड़के डोरियों में बंधी हुई गेंदों को दक्षिणावर्त दिशा में (मुख के सामने से दाईं ओर) अपने

सिरों के चारों ओर घुमा रहे हों।

जनरेटर और मोटर

जनरेटर बिजली (या इलेक्ट्रानों) का प्रवाह पैदा करने में चुम्बकत्व का उपयोग करते हैं। मोटरों में बिजली का प्रवाह चुम्बकत्व पैदा करता है और उससे घूर्णक गति उत्पन्न होती है। इस गति का प्रयोग खराद या कोई अन्य मशीन, वैकुअम क्लीनर, रेफ्रिजरेटर इत्यादि चलाने में किया जा सकता है। जनरेटर और मोटर बड़ी जटिल-सी वस्तुएं दिखाई देती हैं, पर असल में वे बड़ी सरल वस्तुएं हैं। तथ्य तो यह है कि हमने जनरेटरों और मोटरों के कार्य करने के सिद्धान्त पहले ही स्पष्ट कर दिए हैं। वे सिद्धान्त ये हैं :

१. गतिमान इलेक्ट्रान 'बिजली' कहलाते हैं।

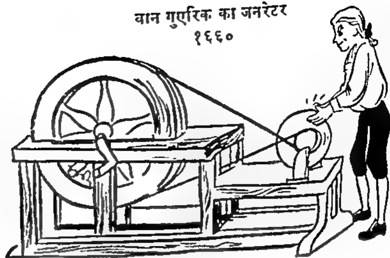
२. गतिमान इलेक्ट्रान चुम्बक क्षेत्र पैदा करते हैं।

३. चुम्बक क्षेत्र इलेक्ट्रानों को गति दे सकता है।

अगले अध्याय में हम इन सिद्धान्तों को प्रयोग में लाएंगे और यह देखेंगे कि जनरेटर और मोटर वास्तव में कितनी सरल वस्तुएं हैं।

अध्याय तेरह

बिजली से काम लेना



जिन लोगों ने शुरू में बिजली-सम्बन्धी परीक्षण किए, उन्होंने देखा कि तांबा, लोहा आदि कुछ वस्तुओं में बिजली (या इलेक्ट्रानों) का प्रवाह आसानी से होता है। रबर या कांच जैसे अन्य द्रव्यों में यह प्रवाह नहीं होता। उन्हें इसका कारण मालूम नहीं था, पर जिन द्रव्यों में बिजली का प्रवाह होता था उन्हें उन्होंने चालक—'कण्डक्टर' कहा, और जिनमें प्रवाह नहीं होता था उन्हें अचालक—'नानकण्डक्टर' या 'इन्सुलेटर' कहा।

अब परमाणु की बनावट और बिजली के स्वरूप की जानकारी होने पर हम चालक और अचालक के भेद की व्याख्या कर सकते हैं। चालक वे द्रव्य हैं जो परमाणु आसानी से छोड़ देते हैं। आपको याद होगा कि तांबे का परमाणु किस तरह लगातार अपने बाहरी इलेक्ट्रान छोड़ता रहता है। इन मुक्त इलेक्ट्रानों को तांबे के तार में ढकेला जा सकता है। अचालक ऐसे परमाणुओं के बने होते हैं जो अपने इलेक्ट्रानों को पकड़े रहते हैं। उनमें मुक्त इलेक्ट्रान इतने थोड़े होते हैं कि उन्हें आगे धकेलकर बिजली का प्रवाह नहीं पैदा किया जा सकता।

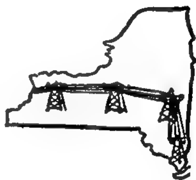
सुरक्षा के लिए बिजली के तारों को अचालक द्रव्य से ढक दिया

जाता है क्योंकि इस द्रव्य में से बिजली नहीं चलती। इससे हमें बिजली का तार छू लेने पर बिजली का धक्का नहीं लगता।

प्रतिरोध (रेजिस्टैन्स)

यह आसानी से माना जा सकता है कि बहुत बारीक तार भारी, मोटे तार की अपेक्षा बिजली के प्रवाह का अधिक प्रतिरोध करेगा। भारी तार में मुक्त इलेक्ट्रानों की संख्या अधिक होती है और उनके इधर-उधर चलने-फिरने के लिए अधिक जगह होती है।

छोटे तार की अपेक्षा लम्बे तार का प्रतिरोध अधिक होता है क्योंकि इलेक्ट्रानों को अधिक लम्बा रास्ता चलना होता है। पर तार का आकार या लम्बाई कुछ भी हो, वह बिजली के प्रवाह का प्रतिरोध अवश्य करता है। मुक्त इलेक्ट्रान अपने इच्छा-संचलन अर्थात् बिना किसी नियम के इधर-उधर चलने को छोड़ने के लिए मजबूर किए जाने का प्रतिरोध करते हैं। वे तार में एक ही दिशा में धकेले जाने का प्रतिरोध करते हैं।

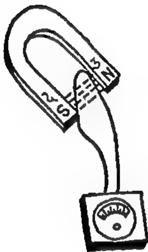


इलेक्ट्रानों के चलानेवाला धक्का वोल्टा के नाम पर 'वोल्टेज' या 'वोल्टता' कहलाता है। यदि वह तार बहुत लम्बा हो जिस तार में से बिजली को धकेलना है, उदाहरण के लिए, नियागरा प्रपात से न्यूयार्क सिटी तक (या भाखड़ा से दिल्ली तक) हो तो इलेक्ट्रानों को बहुत ज़ोर से धक्का देना होगा, अर्थात् अधिक या ऊंची वोल्टता का प्रयोग करना होगा। ऐसी लम्बी दूरीवाली लाइनों पर २,३०,००० तक की वोल्टता होती है। थोड़ी दूरियों के लिए इससे बहुत कम वोल्टता की आवश्यकता होती है। मकान में लगे हुए तारों के लिए सामान्यतया सिर्फ एक सौ दस वोल्ट (हमारे यहा भारत में २२० वोल्ट) वोल्टता की आवश्यकता होती है।

जनरेटर

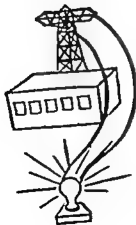
जनरेटर वे बिजली की मशीनें हैं, जो तार में इलेक्ट्रानों

को धकेलती हैं, जिससे बिजली का प्रवाह बन जाता है। यदि आप किसी आधुनिक बिजली घर में जाएं और इसके भीमकाय जनरेटर देखें तो यह सोचकर आपको बड़ा विस्मय होगा कि ये इतनी बड़ी-बड़ी मशीनें तारों में से इन क्षुद्र कणों को धकेलने के लिए बनाई गई हैं जो कभी किसीको दिखाई भी नहीं देते।



एक नाल चुम्बक और एक मुड़े हुए तार से हम एक सरल जनरेटर बना सकते हैं। यदि हम इस तार के सिरे ठीक तरह से बिजली के मीटर से जोड़ दें और फिर इस तार को चुम्बक के सिरों के बीच में रखें तो मीटर से सूचित होगा कि बिजली का प्रवाह चल रहा है।

यहां यह बात होती है : जब तार चुम्बकीय बल-रेखाओं के बीच में चलता है, तब तार के मुक्त इलेक्ट्रान तार में धकेले जाते हैं। इलेक्ट्रानों के चारों ओर एक तरह का चुम्बकत्व होता है और बल-रेखाएं तार में इलेक्ट्रानों को धकेलने के लिए इस चुम्बकत्व पर क्रिया करती हैं। हम कह सकते हैं कि तार को चुम्बकीय बल-रेखाओं के बीच में चलाने से एक चुम्बकीय 'हवा' पैदा हो जाती है जो इलेक्ट्रानों को तार के सहारे 'उड़ा ले जाती है'।



जनरेटरों में बहुत-से तार होते हैं, जिनसे वे भारी करेण्ट पैदा कर सकते है। प्रत्येक तार कुछ इलेक्ट्रान देता है। बहुत-से तार मिलकर इलेक्ट्रानों को भारी करेण्ट या बिजली देते हैं। इस तरह प्राप्त बिजली के करेण्ट की मात्रा ऐम्पियरों में मापी जाती है, जिसका नाम ऐम्पियर के नाम पर रखा गया है। छोटे जनरेटर से सिर्फ एक ऐम्पियर बिजली पैदा हो सकती है, पर इलेक्ट्रानों की वास्तविक संख्या बहुत अधिक होती है। एक ऐम्पियर का जनरेटर छः अरब अरब इलेक्ट्रान प्रति सेकण्ड से भी अधिक देता है।

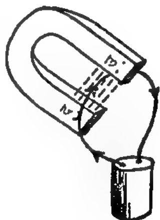
सामान्य बिजली के लट्टू को ½ ऐम्पियर करेण्ट की जरूरत होती है। इसलिए जिस बिजलीघर से बहुत मकानों और

कारखानों को बिजली जाती है, उसका जनरेटर इतना बड़ा होना चाहिए कि वह हज़ारों ऐम्पियर करेण्ट पैदा कर सके।

बिजली को जनरेटर के बाहर पूरा गोल रास्ता या सर्किट (परिपथ) मिलना चाहिए। इस प्रकार, उदाहरण के लिए, आपके घर का बिजली का लट्टू दो तारों द्वारा बिजली घर के जनरेटर से जुड़ा हुआ है। बिजली एक तार में जनरेटर से चलती है। बिजली के लट्टू में से गुज़रने के बाद यह बिजली दूसरे तार में होकर वापस जनरेटर पर लौटती है। पूरे सर्किट में दोनों तार और बिजली का लट्टू शामिल हैं।

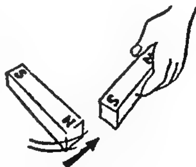
मोटरें

मोटरें बिजली की ऐसी मशीनें होती हैं, जिनमें से बिजली गुज़रने पर घूर्णक अर्थात् घुमानेवाली गति पैदा होती है। अगर आप उन कार्यों की एक सूची बनाएं जो मोटरें प्रतिदिन आपके लिए करती हैं तो आप चकित रह जाएं। मोटरें कारखानों में मशीनें चलाती हैं, उनसे वैकुअम क्लीनर, एलीवेटर या लिफ्टें, ट्रामें और सिनेमा की मशीनें चलती हैं। मोटरकार में बिजली की मोटर ही इंजन को स्टार्ट करती है।

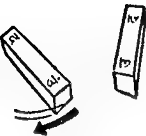


किसी नाल चुम्बक के दोनों सिरों के बीच में एक तार रखकर और तार के सिरों को जनरेटर से जोड़कर हम बिजली की मोटर का सिद्धान्त स्पष्ट कर सकते हैं। क्योंकि जब बिजली तार में रहती है, तब तार चुम्बक के सिरों के नीचे से बाहर आ जाएगा।

ऊपर के चित्र में दिखाई गई रीति से दो चुम्बक-दण्ड इकट्ठे रखकर हम यह समझ सकते हैं कि यह संचलन कैसे होता है। यदि एक चुम्बक मेज़ पर रखा हो और दूसरे चुम्बक का दूसरा सिरा आप इसकी ओर ले जाएं तो दोनों चुम्बक एक-दूसरे की ओर खिंचेंगे। यदि अब आप दूसरे चुम्बक का दूसरा सिरा पहले चुम्बक की ओर ले जाएं तो दोनों एक-दूसरे से परे हटेंगे।

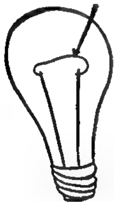


चुंबकें एक दूसरे को खींचेंगी


चुंबकें एक दूसरे से परे हटेंगी

किसी तार में इलेक्ट्रानों के चलने से तार के चारों ओर चुम्बकत्व पैदा हो जाता है। जब नाल चुम्बक के सिरों के बीच में तार रखा जाता है, तब तार चलने लगता है क्योंकि तार चारों ओर का चुम्बकत्व चुम्बक के सिरों के बीच की चुम्बकीय बल-रेखाओं को धकेलता है। यह बहुत कुछ वैसा है जैसा सामने दिखाया गया दो चुम्बकों का एक-दूसरे से परे हटना।

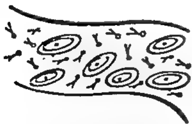
असली मोटर में एक चुम्बक क्षेत्र में बहुत-से तार लगे रहते हैं जिससे उनमें से बिजली गुजरने पर उन सबको धकेला जा सकता है। यह ज़बरदस्त इकट्ठा धक्का रोटर को घुमा देता है। इससे पैदा होनेवाली घूर्णक गति का प्रयोग करके कोई भी मशीन चलाई जा सकती है।



बिजली के लट्टू

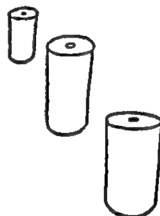
यदि आप बिजली के लट्टू को खोल लें तो उसमें आधार से उठे हुए दो भारी धातु के तार दिखाई देंगे जिनके सिरों के बीच में एक बहुत महीन तार लगा होगा। यह महीन तार, जिसे 'फाइलामेंट या तन्तु' कहते हैं, टंगस्टन धातु का बना होता है। टंगस्टन बिजली की चालक है, क्योंकि इसके परमाणु इलेक्ट्रानों को निकल जाने देते हैं; और इस प्रकार टंगस्टन के तार में मुक्त इलेक्ट्रान होते हैं।

जब लट्टू का तन्तु जनरेटर से जुड़ा होता है, तब इलेक्ट्रान तन्तु में से दौड़ने की कोशिश करते हैं। पर तन्तु हमारे सिर के बाल जितना बड़ा होता है। इसलिए बहुत अधिक इलेक्ट्रान उसमें उसमें से नहीं दौड़ पाते। फिर भी बहुत सारे इलेक्ट्रान उसमें से दौड़ने की कोशिश करते हैं, क्योंकि बिजली की दाब या वोल्टता उन्हें धकेल रही है। इससे तन्तु में इलेक्ट्रानों की भीड़ हो जाती है। और इलेक्ट्रान टंगस्टन के परमाणुओं से लगातार 'धक्का-मुक्की' करते हैं।


टंगस्टन तार में इलेक्ट्रान लगातार टंगस्टन परमाणुओं पर चोट करते हैं

कुछ ही देर बाद परमाणु प्रबल गति से चलने लगते हैं।

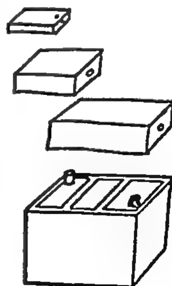
अध्याय पांच में हमने जो कुछ कहा था, वह आपको याद हो, तो आपको ध्यान होगा कि परमाणु या अणु का तेज चलना ही गर्मी या ऊष्मा है। इस प्रकार टंगस्टन का तन्तु गर्म हो जाता है और चमकने लगता है—वह प्रकाश छोड़ने लगता है। तन्तु कांच के लट्टू में बंद होता है जिससे वायु की आक्सीजन तन्तु से दूर रहे। यदि आक्सीजन वहां होगी तो वह गर्म टंगस्टन से मिल जाएगी। दूसरे शब्दों में, टंगस्टन जल जाएगा। लट्टू हवा को बाहर रखता है और ऐसा नहीं होने देता।



बैटरियां

बैटरियां रासायनिक साधनों से इलेक्ट्रान-प्रवाह पैदा करती हैं, अर्थात् बैटरी के अन्दर रासायनिक प्रक्रियाएं होती हैं, जिनसे बिजली का प्रवाह होने लगता है। एक तरह की बैटरी 'शुष्क' (ड्राई) सेलों से बनी होती है। टार्च में इसी तरह की बैटरी लगी रहती है। यह इसी अर्थ में शुष्क है कि इसमें कोई द्रव नहीं होता, पर इसके अन्दर सीलन होती है। एक और तरह की बैटरी 'गीले सेलों' (वेट सेल्स) से बनी होती है। इन सेलों में द्रव भरा रहता है। गीले सेलों की बैटरी का एक प्रचलित रूप मोटरकारों में प्रयोग में आता है।

बैटरी में ऐसी रासायनिक क्रियाएं होती हैं जो इलेक्ट्रानों का प्रवाह या बिजली की धारा पैदा करती हैं। ये क्रियाएं बैटरी के एक सिरे (टरमिनल) पर इलेक्ट्रानों की भीड़ कर देती हैं और दूसरे विद्युताग्र (सिरे) से उन्हें खींच लेती हैं। जब दो सिरे तार से जुड़े रहते हैं, तब इलेक्ट्रान (या बिजली की धारा) तार में बहने लगते हैं। वे बहुत इलेक्ट्रानोंवाले सिरे से बिना इलेक्ट्रानोंवाले सिरे की ओर बढ़ेंगे। धारा की एक निश्चित मात्रा ले लिए जाने के बाद बैटरी के सेल निकम्मे या डिस्चार्ज हो जाते हैं। सूखे सेलों को दुबारा चार्ज नहीं किया जा सकता। उनके उतर जाने या निकम्मा हो जाने के बाद वे

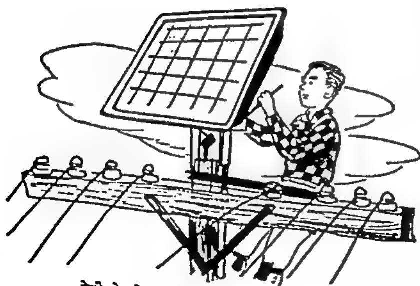


बैटरियां

बेकार हो जाते हैं, और उन्हें फेंक देना पड़ता है। पर मोटरकारों में प्रयोग में आनेवाले गीले सेलोंवाली बैटरियों को दुबारा चार्ज किया जा सकता है। दुबारा चार्ज करने में धारा बैटरी में से गुज़ारी जाती है, जिससे रासायनिक क्रियाओं की दिशा उलट जाती है। इससे बैटरी फिर आवेशयुक्त हो जाती है।

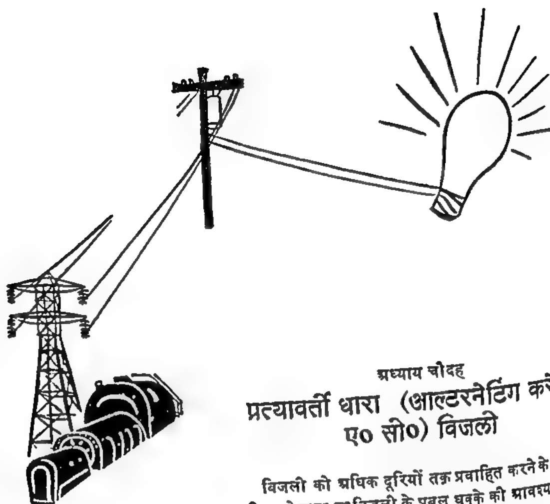
सूर्य बैटरी

सूर्य बैटरी या धूप बैटरी धूप से बिजली 'बनाती है'। यह एक नया आविष्कार है, जिसका पहला व्यावहारिक प्रयोग सन् १९५५ में हुआ। उस साल एक सूर्य बैटरी एक टेलीफोन के खम्भे पर रखी गई और उसे एक टेलीफोन प्रणाली से जोड़ दिया गया। इससे कई टेलीफोन चलने लायक बिजली पैदा हो जाती है। बैटरी के अन्दर सिलिकान नामक तत्त्व की बनी हुई कई पतरियां होती हैं। ये पतरियां तार द्वारा जुड़ी रहती हैं। जब इन पतरियों पर धूप पड़ती है, तब इलेक्ट्रान छोड़ती हैं। इसे प्रकाश-


टेलीफोन के खंभे पर सूर्य-बैटरी लगाना

विद्युत्-प्रभाव या फोटो-इलेक्ट्रिक इफेक्ट कहते हैं, जो अध्याय पच्चीस में समझाया गया है। इलेक्ट्रान तार में प्रवाहित होकर बिजली की धारा बन जाते हैं। सूर्य बैटरी धूप के समय ही बिजली की धारा पैदा करती है। इसलिए इसका प्रयोग करने पर ऊपर बताए गए ढंग से रासायनिक बैटरियों का प्रयोग भी अवश्य करना पड़ता है। रासायनिक बैटरियां रात में धाराएं पैदा करती हैं। फिर दिन में सूर्य बैटरियां धाराएं पैदा करती हैं और रासायनिक बैटरियों को पुनः चार्ज कर देती हैं।

ज़रा-सी बिजली के लिए यह सब झंझट जान पड़ता है। पर हमें याद होना चाहिए, बिजली के पहले जनरेटर बहुत छोटे और कमज़ोर होते थे, जबकि आधुनिक जनरेटर बिजली की बहुत अधिक मात्रा पैदा करते हैं। इसी तरह, हो सकता है कि सूर्य बैटरियों से परीक्षण करते-करते वैज्ञानिक किसी दिन ऐसे तरीके निकाल लें जिनसे धारा की बहुत बड़ी मात्रा पैदा हो सके। यदि ऐसा हो जाए तो आप अपने घर के आंगन में ही एक सूर्य बैटरी लगाकर अपनी सारी बिजली की ज़रूरत पूरी कर सकेंगे।



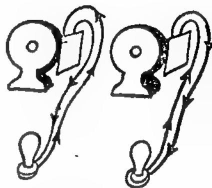
अध्याय चौदह

प्रत्यावर्ती धारा (आल्टरनेटिंग करेण्ट, ए० सी०) बिजली

बिजली को अधिक दूरियों तक प्रवाहित करने के लिए बहुत अधिक वोल्टता या बिजली के प्रबल धक्के की आवश्यकता होती है, जैसाकि हमने पिछले अध्याय में बताया था। बहुत अधिक दूर के नगरों के बीच फैली हुई बिजली की लाइनों में २,३०,००० वोल्ट तक की दाब की जरूरत पड़ती है। इतनी अधिक वोल्टता पर बिजली नगर में पहुंचने के बाद उसे घरों और कारखानों में प्रयोग में लाने के लिए उचित दाब पर लाना पड़ता है। किसी मकान में अधिक वोल्टतावाली बिजली का प्रयोग करना बड़ा खतरनाक होगा। बिजली की बहुत अधिक दाब बिजली को सामान्य प्रचालक में से बाहर धकेल देगी और वह एक फुट तक वायु में चली जाएगी। बिजली से लोग मर जाएंगे और मका

लग जाएगी। ऐसी ऊंची वोल्टतावाली बिजली हमारे घरों में सेवक न होकर एक खतरनाक दुश्मन होगी।

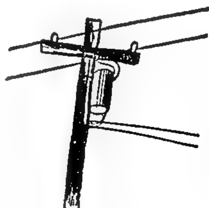
वोल्टता को नीचा करके सुरक्षित सीमा में लाने के लिए ट्रांसफार्मर प्रयोग में आते हैं। पर ट्रांसफार्मर तभी कार्य करते हैं, जब उनमें एक विशेष प्रकार की बिजली पहुंचाई जाए। यह विशेष प्रकार की बिजली 'ग्राल्टरनेटिंग करेण्ट' (प्रत्यावर्ती धारा) या 'ए० सी०' कहलाती है। आपको यह बात बड़ी विचित्र मालूम होगी कि ग्राल्टरनेटिंग करेण्ट ले जानेवाले तार में बिजली बड़ी जल्दी-जल्दी अपने प्रवाह की दिशा बदलती रहती है, अर्थात् एक सेकंड के कुछ हिस्से तक यह एक दिशा में बहती है और फिर उलट जाती है और दूसरी दिशा में बहती है। एक दिशा से दूसरी दिशा में बदलना और फिर पहली दिशा में आ जाना एक 'साइकल या चक्र' कहलाता है। सामान्यतया हमारे प्रयोग में आनेवाली ग्राल्टरनेटिंग करेण्ट एक मिनट में साठ बार ऐसा करती है। इसलिए वह 'साठ-साइकिल' ग्राल्टरनेटिंग करेण्ट कहलाती है। यदि आप किसी ए० सी० मोटर पर निर्माता के नामवाली जगह देखें तो वहां '६० साइकिल' खुदा हुआ होगा।



ग्राल्टरनेटिंग करेंट (ए सी) बिजली तारों में एक दिशा में बहती है, फिर उलटकर विपरीत दिशा में बहती है

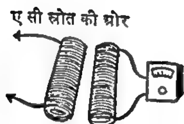
तार में इलेक्ट्रानों को पहले एक दिशा में और फिर उससे उलटी दिशा में धकेलने का यह सारा झंझट क्यों किया जाए? क्या सिर्फ इतने से काम नहीं चल जाएगा कि पहले इलेक्ट्रानों को एक दिशा में चला दिया जाए और फिर उन्हें वैसे ही चलते रखा जाए?

इन प्रश्नों का उत्तर प्रत्यावर्ती धारा के समर्थकों को उस समय देना पड़ा था जब उन्होंने, लगभग पचास वर्ष पहले, एक दिशावाली डाइरेक्टर करेण्ट (दिष्ट धारा) के स्थान पर ग्राल्टरनेटिंग करेण्ट इस्तेमाल करने का विचार पेश किया था। उसका उत्तर सीधा-सादा था। ऊंची वोल्टता बिजली को बहुत दूर पहुंचाने के लिए आवश्यक थी। मकानों और कारखानों



बिजली के खंभों पर लगे हुए धातु के बक्स ट्रान्सफार्मर हैं

के लिए नीची वोल्टता की आवश्यकता थी। ग्राल्टरनेटिंग करेण्ट को ट्रांसफार्मर में आवश्यकता के अनुसार ऊंचा या नीचा कर सकते है। ट्रांसफार्मरों में कोई चलनेवाले पुर्जे नहीं होते और जनरेटर जितनी ऊंची वोल्टता ठीक तरह पैदा कर सकते हैं, उससे बहुत अधिक ऊंची वोल्टता को वे संभाल सकते हैं। डिस्ट धारा में ट्रांसफार्मर जैसे सरल साधन से वोल्टता बढ़ाई या घटाई नहीं जा सकती। डिस्ट धारा की वोल्टता बदलने के लिए मोटर जनरेटर-व्यवस्था की आवश्यकता होती है। ग्राल्टरनेटिंग करेण्ट में एक और सुविधा यह है कि ए० सी० के जनरेटर डी० सी० जनरेटर की अपेक्षा बहुत बड़े आकार के बनाए जा सकते हैं। उदाहरण के लिए एक ए० सी० जनरेटर ५,००,००० आबादीवाले नगर के लिए बिजली पैदा कर सकता है, जबकि इतनी बिजली पैदा करने के लिए सौ डी० सी० जनरेटरों की आवश्यकता पड़ेगी।



ट्रांसफार्मर कैसे कार्य करता है

ट्रांसफार्मर चुम्बकत्व के सिद्धांत पर कार्य करता है। हम दो कुण्डलियों को पास-पास रखकर एक सादा ट्रांसफार्मर बना सकते हैं। यदि हम एक कुण्डली को प्रत्यावर्ती धारा के किसी स्रोत से जोड़ दें तो हम देखेंगे कि दूसरी कुण्डली में करेण्ट बहने लगेगी, यद्यपि ये दोनों जुड़ी हुई नहीं हैं।



बिजली प्रवाहित होने पर चुंबकत्व कुंडली के चारों ओर पैदा हो जाता है

इसका कारण यह है : तार की पहली कुण्डली के चारों ओर तब तक ही चुम्बक क्षेत्र है जब तक धारा तार में बह रही है, पर क्योंकि प्रत्यावर्ती धारा लगातार दिशा बदल रही है, इसलिए वह लगातार रुकती और पुनः शुरू होती रहती है। इसका अर्थ यह हुआ कि धारा के हर बार दिशा बदलने पर चुम्बक क्षेत्र हट जाता है और पुनः पैदा हो जाता है : परिणामतः चुंबक क्षेत्र निरन्तर गतिमान है। जब चुम्बक क्षेत्र पैदा होता है, तब वह कुण्डली से बाहर की ओर चलता है। जब वह हटता है तब वह कुण्डली की ओर चलता है। इस प्रकार चुम्बकत्व दूसरी या परवर्ती कुण्डली (सेकण्डरी कायल) में से लगातार

चलता रहता है। सारतः इस क्रिया में और जनरेटर में होने-वाली क्रिया में कोई भेद नहीं—इतना ही भेद है कि ट्रांसफार्मर में तार स्थिर है और चुम्बकत्व चलता है।

परवर्ती कुण्डली में निरन्तर चलते हुए चुम्बकत्व से इले-क्ट्रानों का प्रवाह पैदा हो जाता है। परवर्ती कुण्डली में पैदा होनेवाली बिजली के धक्के की मात्रा या वोल्टता दोनों कुण्ड-लियों में तार के लपेटों की संख्या पर निर्भर है। यदि पहली या प्राथमिक कुण्डली में सौ लपेट हैं और परवर्ती कुण्डली में दो सौ लपेट हैं या उससे दुगुने हैं तो परवर्ती कुण्डली में उत्पन्न वोल्टता प्राथमिक कुण्डली में उत्पन्न वोल्टता से दुगुनी होगी।



पहली कुंडली से चुंबकत्व बाहर आने पर परवर्ती कुंडली में करेंट आ जाती है

इसे इन शब्दों में स्पष्ट कर सकते हैं कि चलते हुए चुम्ब-कत्व से पैदा हुई चुम्बकीय 'हवा' प्राथमिक तार से दुगुने लम्बे तार पर क्रिया कर रही है। इस प्रकार, इस चुम्बकीय 'हवा' को दुगुना धक्का मिल जाता है, या इसकी वोल्टता प्राथमिक कुण्डली की वोल्टता से दुगुनी हो जाती है।



फिर जब चुंबकत्व पहली कुंडली की ओर लौटता है तब भी परवर्ती कुंडली में करेंट पैदा होती है

यह बात दूसरी दिशा में भी होती है। प्राथमिक कुण्डली में तार के अधिक लपेटे होने पर परवर्ती कुण्डली से कम वोल्टता होगी। इस प्रकार, ऐसा ट्रांसफार्मर बनाया जा सकता है जो ११० वोल्ट ए० सी० को ५५० वोल्ट ए० सी० में बदल दे, अथवा वह ५५० को ११० में बदल दे। दोनों ट्रांसफार्मरों के लपेटों में तारों की लपेट-संख्या बदलकर वोल्टता का प्रायः कोई भी जोड़ा बनाया जा सकता है।

प्रज्वलन कुण्डली

मोटरकार की प्रज्वलन कुण्डली (इग्निशन कायल) एक छोटा ट्रांसफार्मर होती है। यह तार की बैटरी के ६ या १२ वोल्ट को बहुत ऊंची वोल्टता में बदल देती है, जो २०,००० वोल्ट तक हो सकती है। तब यह उच्च वोल्टता इंजन के सिलि-ण्डर के अन्दर स्पार्क लैम्प पर चिनगारियां पैदा करती है। चिनगारी सिलिण्डर की गैसोलीन वाष्प को प्रज्वलित करती है।

अध्याय पन्द्रह

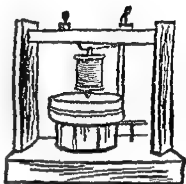
टेलीफोन

जब आप टेलीफोन में बोलते हैं, तब आपकी वाणी का शब्द विद्युत् के आवेगों में बदल जाता है। ये विद्युतीय आवेग तारों पर चलते हैं और रिसीवर में पहुंचनेवाली ध्वनि में बदल जाते हैं।

लोग हजारों वर्षों से ध्वनि पर विचार और परीक्षण करते आए हैं, पर पिछले कुछ सौ वर्षों में ही ध्वनि को कुछ सर्वांग-पूर्ण ढंग से समझा गया है। २३०० वर्ष पहले पैदा हुए एक यूनानी दार्शनिक अरस्तू ने ध्वनि की प्रकृति के बारे में एक बढ़िया अटकल लगाई थी। उसने कहा था कि ध्वनि वस्तुओं से वायु



पर चोट लगने से पैदा होती है जिससे वायु सिकुड़ती और फैलती है। पर कई शताब्दियों तक इस सिद्धान्त को सच या झूठा सिद्ध करने का कोई प्रयत्न नहीं किया गया। अन्त में उन्नीसवीं शताब्दी में फिर दिलचस्पी पैदा हुई और बहुत-से लोगों ने ध्वनि का अध्ययन और उसके विषय में परीक्षण शुरू किए। जी० एस० ओम, लार्ड केलविन, एच० वान हेल्महोल्ट्स और अन्य व्यक्तियों ने ध्वानिकी (ध्वनि विज्ञान) के बहुत-से बुनियादी नियमों पर विचार किया। इसके अतिरिक्त, हेल्महोल्ट्स ने कान से ध्वनि पकड़ने, अर्थात् सुनने के बारे में एक व्याख्या पेश की। इस विषय में हम आगे और विचार करेंगे।



बेल का पहला टेलीफोन

इस प्रकार टेलीफोन के अमेरिकन आविष्कारक अलेक्ज़ैण्डर ग्राहम बेल के लिए मंच तैयार हो चुका था। वोल्टा, ऐम्पियर और अन्य लोगों ने बिजली की बुनियादी विशेषताओं के बारे में नियम निर्धारित कर दिए थे। केलविन, हेल्महोल्ट्स और अन्य लोगों ने यह स्पष्ट कर दिया कि ध्वनि कैसे पैदा होती है और हम उसे कैसे सुनते हैं। सिर्फ एक आदमी की जरूरत थी जो ज्ञान के इन दोनों क्षेत्रों को एक जगह मिला सके जिससे ध्वनि को तारों पर ले जाया जा सके। बेल वह आदमी सिद्ध हुआ और सन् १८७६ में उसके कई वर्ष के कठिन परिश्रम और परीक्षण सफल हो गए। टेलीफोन का जन्म हो गया।

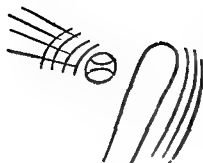
इससे भी बड़ी बात यह हुई कि उसके परीक्षणों और सफलता ने ऐसी बुनियाद डाल दी जिसपर दूसरे वैज्ञानिक भवन निर्माण कर सकें। ग्रामोफोन, रेडियो, टेलीविज़न और अन्य इलेक्ट्रानिक साधनों के आविष्कारों पर बेल का उसी तरह ऋण है जैसे बेल पर उससे पहलेवाले वैज्ञानिकों का था।



ध्वनि

टेलीफोन समझाने से पहले यह बता देना अच्छा होगा कि ध्वनि क्या होती है, और हम उसे कैसे सुनते हैं। कल्पना कीजिए

कि आप पार्क में बैठे क्रिकेट का खेल देख रहे हैं। बाउलर वहां हाथ घुमाकर गेंद फेंकता है और खिलाड़ी गेंद को बल्ले से मारकर दूर मैदान में पहुंचा देता है। आपको बल्ले पर गेंद टकराने की 'खट्' ध्वनि सुनाई देती है। वह ध्वनि कैसे पैदा हुई और वह आपके कान तक कैसे पहुंची ?



इसका उत्तर देने से पहले हमें हवा के बारे में कुछ और जानकारी होनी चाहिए जिसमें चलकर ध्वनि आई है। हवा नाइट्रोजन और आक्सीजन आदि अनेक गैसों के परमाणुओं और अणुओं से बनी हुई है। ये अणु तीव्र गति कर रहे हैं। सब दिशाओं में इधर-उधर चल रहे हैं। एक-दूसरे से टकरा रहे हैं और नई दिशाओं में निकल-भाग रहे हैं। हवा के प्रत्येक घन इंच में ऐसे अरबों अणु हैं।



जब बल्ला गेंद पर लगता है तब दोनों के बीच की हवा बाहर हो जाती है। इस क्रिया को बहुत बारीकी से देखिए। जब बल्ला गेंद के पास पहुंचा है, तब उनके बीच की हवा बीच में से हट जाती है। कुछ अन्तिम अणुओं को बहुत तेज़ चलना पड़ता है। पक्के फर्श पर फैले हुए पानी पर हथौड़ा मारने की क्रिया पर विचार करने से यह बात स्पष्ट हो जाएगी। यदि आप पानी के ठहराव पर हथौड़ा मारेंगे तो पानी छिटककर काफी दूर जाएगा। नीचे आते हुए हथौड़े से पानी दब जाता है। जिससे वह सब दिशाओं में उछल जाता है।



बहुत कुछ उसी तरह बल्ले और गेंद के बीच के हवा के अणु बल्ला गेंद से लगने पर इधर-उधर हट जाते हैं। इन अणुओं के बहुत तेज चाल से चलने के कारण ये अपने से ठीक आगेवाले अणुओं से टकराते हैं फिर ये अणु अपने से पहलेवाले अणुओं से टकराते है, और इस प्रकार वे तेज चाल से एक बढ़ते हुए दायरे में एक अणु से दूसरे अणु पर पहुंच जाते हैं। अन्त में वे हमारे कान के हवा-परमाणुओं पर कसकर लगते हैं, और तब हमारे कान के पर्दे पर टकराते हैं, जिसपर हमारे कान हमें बताते

हैं कि हमने बल्ले और गेंद के टकराने की 'खट्' ध्वनि 'सुनी है'।

इसे आसानी से समझने के लिए यह कल्पना कीजिए कि गेंद और बल्ले के बीच के अणुओं की पंक्ति और आपका कान, डोरियों पर बंधे हुए, कई-कई इंच दूरी पर एक कतार में लटके हुए हैं। पहली गेंद (या अणु) गेंद और बल्ले के मिलने पर उनके बीच से हट जाती है। यह पहली गेंद फिर दूसरी से टकराती है और दूसरी तीसरी से और इसी प्रकार नीचे तक पहुंच जाता है, और जब यह आवेग आगे बढ़ता है तब क्षण-भर के लिए ये गेंदें एक जगह इकट्ठी हो जाती हैं और उनके पीछे पंक्ति में ऐसी जगह रह जाती है जिसमें ये अपेक्षया दूर-दूर होती हैं। जिस जगह वे इकट्ठी हो जाती हैं, उसे 'ऊंची दाब का क्षेत्र' कहते हैं और जहां वे अलग-अलग हैं, उसे 'नीची दाब का क्षेत्र' कहते हैं।

असल में 'ऊंची दाब' और 'नीची दाब' शब्द वायु की दाब के बारे में है, क्योंकि जब वायु के अणु पास-पास होते हैं तब वायु की दाब ऊंची होती है, जैसे भाप के इंजन के सिलिण्डर में बहुत सारे जल वाष्प अणुओं के भर जाने से भाप की ऊंची दाब बन जाती है। ये ऊंची दाब और नीची दाब के क्षेत्र ही तरंगों के रूप में हमारे कान पर गुज़रते हुए कान के पर्दे पर कम्पन पैदा करते हैं, जिससे हम ध्वनि 'सुनते हैं'। ऊंची दाब और नीची दाब के क्षेत्र सामान्य दाब पर ध्वनि पैदा होने के स्थान से लगभग ११०० फुट प्रति सेकंड की चाल से चलते हैं। इस प्रकार यदि आप किसी विस्फोट से एक मील (५२८० फुट) दूर हों तो ध्वनि-तरंगें आपके कान तक लगभग पांच सेकंड में पहुंचेंगी।





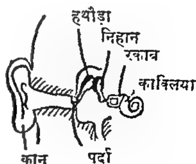


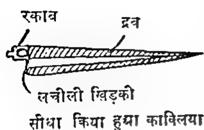




हम ध्वनि कैसे सुनते हैं

मनुष्य का कान एक अद्भुत यंत्र है। कान के मार्ग का भीतरी सिरा कान के एक पर्दे से—एक लचीले खाल जैसे डायाफ्राम से बन्द है। इस पर्दे के पिछली ओर एक ही जगह से आरम्भ होनेवाली तीन छोटी-छोटी हड्डियां हैं। इनमें से एक हड्डी

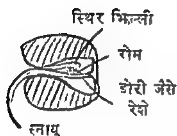




सीधा किया हुआ काक्लिया

कान के पर्दे से जुड़ी हुई है। एक ओर हड्डी काक्लिया से जुड़ी हुई है—काक्लिया शंख की शकल का एक खोखला ढांचा होता है, जिसके कुछ हिस्से में द्रव भरा रहता है।

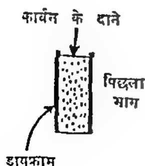
जब ऊंची दाववाला क्षेत्र कान के पास से गुज़रता है, तब कान का पर्दा थोड़ा-सा अन्दर की ओर दब जाता है। तब नीची दाववाला क्षेत्र कान के पास से गुज़रता है, तब पर्दा थोड़ा-सा बाहर को खिंच जाता है। पर्दे के इस अन्दर-बाहर चलने या कम्पन से तीन हड्डियां (हथौड़ा, निहान और रकाब) इकट्ठी हिलती हैं, क्योंकि वे एक जगह जुड़ी हुई हैं। उनके हिलने से काक्लिया का सिरा कांपने लगता है जिससे काक्लिया के अन्दर के द्रव में एक वीचि या लहर चलती है। इस द्रव के ऊपर छोटे-छोटे डोरी जैसे रेशे होते हैं जिनमें सूक्ष्म रोम होते हैं। द्रव में वीचियां आने से यह रेशे हिलने लगते हैं और फिर स्थिर झिल्ली के नीचे रोम आगे-पीछे चलते हैं।



काक्लिया की काट (सेक्शन) का दृश्य

यदि ये रोम बाहर आपकी खाल पर होते तो आप कहते कि कोई चीज़ आपको गुदगुदी या सरसराहट पैदा कर रही है। पर क्योंकि ये रोम आपके कान के अन्दर हैं और कान स्नायु द्वारा आपके मस्तिष्क के एक दूसरे हिस्से से जुड़े हुए हैं, इसलिए रोमों की इस 'गुदगुदी' या सरसराहट को आप 'ध्वनि' कहते हैं।

ध्वनि के कम्पन आप अपनी उंगलियों में सचमुच अनुभव कर सकते हैं। एक बड़ा कागज़ अपने हाथों के बीच में और अपने मुख के पास कसकर पकड़िए। यदि आप ऊंचे स्वर से गाएं तो कुछ स्वर गाते समय कागज को पकड़नेवाली उंगलियों में आपको कुछ गुदगुदी अनुभव होगी। वे उंगलियां ध्वनि को महसूस कर रही हैं, या 'सुन रही हैं'।



बेल का चिन्तन

हम अलेक्जेंडर ग्राहम बेल के चिन्तन-क्रम का प्रायः प्रतिपद अनुसरण कर सकते हैं। ध्वनि वायु में गुज़रती हुई ऊंची दाब

ग्रौर नीची दाबवाली तरंगों की श्रेणी है। जब ये तरंगें हमारे कान के पर्दों से गुज़रती हैं, तब पर्दों में गति होने लगती है। यह गति स्नायु-ग्रावेगों में बदल जाती है जो हमारे मस्तिष्क में जाकर हमें यह बताते हैं कि हम ध्वनि सुन रहे हैं। क्या ऐसा यांत्रिक कान का पर्दा नहीं बनाया जा सकता जो ध्वनि-ग्रावेगों को बिजली के ग्रावेगों में बदल दे? इन बिजली के ग्रावेगों को तार द्वारा ले जाकर किसी प्रकार के यांत्रिक ध्वनि उत्पादक उपाय से फिर ध्वनि में परिवर्तित किया जा सकता था।

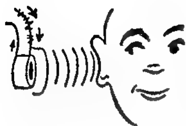

डायफ़ाम ग्रंदर धकेले जाने पर ग्रधिक करेंट गुज़र सकती है

बड़ी कठिनाइयों के बाद श्री बेल ने एक यांत्रिक कान का पर्दा बना लिया। इसमें एक छोटा डायाफाम था, जिसके पीछे कार्बन के बहुत छोटे-छोटे दाने भरे हुए थे। कार्बन के इन दानों में कुछ बिजली-प्रतिरोध की मात्रा थी ग्रौर इन्हें बिजली-बैटरी से जोड़ देने पर ये बिजली की धारा की एक सुनिश्चित मात्रा (या इलेक्ट्रानों की सुनिश्चित संख्या) ही ग्रपने में से गुज़रने देते। पर यदि डायाफ़ाम को ग्रन्दर को धकेल दिया जाए तो कार्बन के दाने एक-दूसरे से ग्रधिक भिड़ जाते जिससे उनमें पहले से ग्रधिक संस्पर्श-बिन्दु हो जाते। तब ये ग्रतिरिक्त संस्पर्श-बिन्दु ग्रधिक इलेक्ट्रानों या बिजली की धारा को गुज़रने देते। यदि डायाफ़ाम को बाहर को खींच लिया जाए तो कार्बन के दानों के लिए ग्रधिक स्थान हो जाएगा ग्रौर दानों के बीच कम संस्पर्श-बिन्दु रह जाएंगे, ग्रौर इस प्रकार कम इलेक्ट्रान प्रवाहित हो सकेंगे।


जब डायफ़ाम बाहर ग्राता है, तब कम करेंट गुज़र सकती है

तो, यह टेलीफोन का ट्रांसमिटर (प्रेपित्र) या वह भाग है जिसमें ग्राप बोलते हैं। जब ऊंची ग्रौर नीची दाबवाले क्षेत्र या ध्वनि तरंगें डायाफ़ाम पर चोट करती है, तब वह ग्रन्दर ग्रौर बाहर को चलता है, ग्रौर पहले ग्रधिक ग्रौर फिर कम बिजली की धारा गुज़रने देता है। इसका ग्रर्थ यह हुग्रा कि ऊंची दाब ग्रौर नीची दाबवाले क्षेत्र पहले सबल ग्रौर फिर दुर्बल बिजली-ग्रावेगों में परिवर्तित होते हैं।

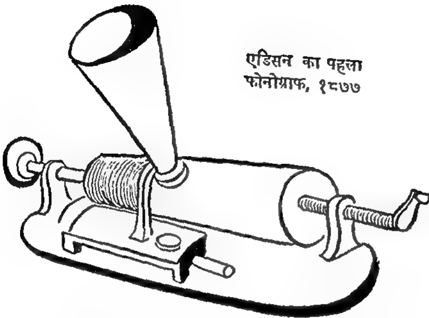

ट्रांसमिटर ऊंची ग्रौर नीची दाब वाले क्षेत्रों या ध्वनि, को बिजली के ग्रावेगों में बदल देता है



घटते-बढ़ते बिजली आवेग रिसीवर डायफ़ाम को अंदर बाहर हिलाकर ध्वनि पैदा करते हैं

रिसीवर (संग्राही) में बदलती हुई धारा-शक्तिवाले ये बिजली के आवेग फिर ध्वनि में बदल जाते हैं। रिसीवर में लोहे की एक पतली पतरी या डायाफ़ाम होता है, जिसके नीचे एक चुम्बक पर लिपटी हुई छोटी-सी तार की कुण्डली होती है। ट्रांसमिटर से आनेवाली धारा तार की इस कुण्डली में से गुज़रती है और चुम्बक की शक्ति को कम-अधिक करती है। जब धारा सबल होती है, तब चुम्बकत्व भी सबल होता है। जब धारा दुर्बल होती है, तब चुम्बकत्व भी दुर्बल होता है। जब चुम्बकत्व सबल होता है, तब लोहे का डायाफ़ाम भीतर को खिंच जाता है; और जब चुम्बकत्व दुर्बल हो जाता है, तब वह बाहर को चला जाता है।

इस प्रकार धारा की मात्रा (ट्रांसमिटर-डायाफ़ाम के चलने के अनुसार) जैसे-जैसे घटती-बढ़ती है, वैसे-वैसे रिसीवर का डायाफ़ाम अन्दर और बाहर चलता है। इससे रिसीवर का डायाफ़ाम हवा के अणुओं से टकराता है और उनमें गति पैदा करके ऊंची दाब और नीची दाबवाले क्षेत्र उत्पन्न कर देता है। ये ऊंची दाब और नीची दाबवाले क्षेत्र ट्रांसमिटर डायाफ़ाम में कम्पन पैदा करनेवाले ऊंची दाब और नीची दाबवाले क्षेत्रों या ध्वनि की काफी ठीक नकल होते हैं। जब आप टेलीफोन के ट्रांसमिटर में 'हैलो' कहेंगे, तब लाइन के दूसरे सिरे पर रिसीवर का डायाफ़ाम कम्पन करेगा और 'हैलो' की आवाज़ पैदा करेगा।



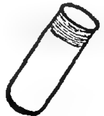
एडिसन का पहला
फोनोग्राफ, १८७७

अध्याय सोलह

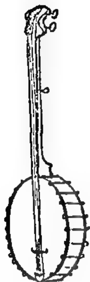
ग्रामोफोन

अलेक्जैण्डर ग्राहम बेल के मन में यह विचार पैदा हुआ था कि ध्वनि-आवेगों को विद्युत्-आवेगों में और फिर विद्युत्-आवेगों को पुनः ध्वनि-आवेगों में बदला जा सकता है। टेलीफोन का आविष्कार करके उसने यह सिद्ध कर दिया कि उसका विचार व्यवहार्य था।

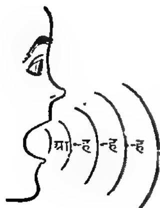
महान अमेरिकन आविष्कारक टामस अलवा एडिसन के मन में एक दूसरा विचार पैदा हुआ। क्या ध्वनि-आवेगों की विशेषताएं किसी नरम प्लास्टिक द्रव्य पर इस तरह अंकित (रिकार्ड) की जा सकती हैं कि बनाए गए रिकार्ड को बाद में बजाकर वह ध्वनि पुनः उत्पन्न की जा सके?



बुनियादी रूप में यह बड़ा सादा विचार था, पर एडिसन को 'बोलनेवाली मशीन' वस्तुतः बनाने में अनेक वर्षों तक परीक्षण और श्रम करना पड़ा। शुरू की बोलनेवाली मशीन आज के ग्रामोफोनों जैसी नहीं दीखती थी। रिकार्डों की शकल भी बदल चुकी है। पहले रिकार्ड सिलिण्डर की शकलों जैसे थे। आजकल के रिकार्ड, जैसाकि हम सब जानते हैं, चपटे होते हैं।







ग्रामोफोन का रिकार्ड वनाने की रीति समझ सकने से पहले हमें ध्वनि के वारे में कुछ ग्रौर वातें जान लेनी चाहिए। पिछले अध्याय में हमने देखा था कि ध्वनि वायु में चलते हुए ऊंची दाव ग्रौर नीची दाववाले क्षेत्रों की तरंगों की एक श्रेणी है। यदि हम सितार या किसी ग्रौर तारवाद्य का तार छेड़ें तो एक ध्वनि सुनाई देगी। यह ध्वनि तार के कम्पन से पैदा होती है, अर्थात् तार वहुत जल्दी-जल्दी ग्रागे-पीछे चल रहा है, जैसाकि हम इसे गौर से देखकर जान सकते हैं। तार का कम्पन हवा के ग्रणुग्रों को वार-वार धकेलता है, ग्रौर इस प्रकार ऊंची ग्रौर नीची दाबवाले क्षेत्रों को तार से हमारे कान की ग्रोर चलाता है।

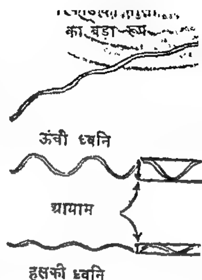
यदि ग्रापके पास कोई तारवाला वाजा न हो तो रवर की एक पट्टी ग्रपने हाथों के वीच खींचकर फैलाइए ग्रौर इसे ग्रपने ग्रंगूठे से झटका दीजिए, इससे कुछ संगीत का स्वर निकलेगा ग्रौर स्वर निकलने के समय यह कांपती हुई दिखाई देगी।

जब ग्राप 'ग्रा-ह-ह-ह-ह' कहते हैं, तब वह ध्वनि ग्रापके गले के 'तारों' के कम्पन से पैदा होती है। ये तार जो 'वाक्-तन्तु' या स्वरतंत्री कहलाते हैं, ग्रापके फेफड़ों से तेज़ी से ग्राती हुई वायु से कम्पित होते हैं, ग्रर्थात् जब ग्राप 'ग्रा-ह-ह-ह-ह' की ग्रावाज़ करते हैं, तब गले की कुछ मांसपेशियां वायु को इन वाक्-तन्तुग्रों के पास से चलाती हैं। तारवाले बाजे के तारों पर फूंक मारकर ग्राप उन्हें कम्पित कर सकते हैं। ग्रापके गले में वाक्-तन्तु जब कम्पन करने लगते हैं, तब वे हवा के ग्रणुग्रों को धक्का देते हैं, जिससे 'ग्रा-ह-ह-ह-ह' ध्वनि पैदा होती है। इस ध्वनि को वाणी या भाषण में परिवर्तित करने के लिए ग्राप ग्रपनी जीभ ग्रौर होंठों को इस प्रकार हिलाते हैं जिससे यह ध्वनि रुक जाए या इसका रूप वदल जाए। 'पप्पू', 'दादा' ग्रौर 'लप' शब्द जोर से बोलकर देखिए कि किस तरह ग्रापकी जीभ ग्रौर होंठ 'ग्रा-ह-ह-ह-ह' को शब्दों में वदल देते हैं।

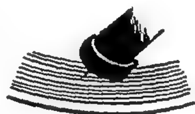
रिकार्ड बनाना

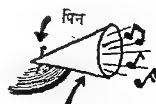
शुरू के रिकार्ड बनानेवाले एक तरह का यांत्रिक 'कान का पर्दा' प्रयोग में लाते थे जो किसी भी ध्वनि से कम्पन करने लगता था। एक तेज नोकवाली सुई 'कान के पर्दे' या डायाफ्राम के केन्द्र में लगा दी जाती थी, जिससे डायाफ्राम के कम्पन करने पर सुई की नोक आगे-पीछे चलती थी। रिकार्ड को, जो किसी प्लास्टिक वस्तु का बना होता था, एक घूमनेवाली पटरी पर रख दिया जाता था और सुई का सिरा इसपर रख दिया जाता था। जब रिकार्ड घूमता था, तब इसमें सुई से एक नाली बन जाती थी। रिकार्ड के घूमने के साथ-साथ सुई अन्दर को रिकार्ड के केन्द्र की ओर चलती जाती थी, जिससे नाली रिकार्ड के केन्द्र की ओर सर्पिल अर्थात् सांप की कुण्डली की तरह हो जाती थी।

जो भी ध्वनि पैदा की जाती, वह डायाफ्राम में कम्पन करती थी और फिर यह कम्पन सुई की नोक को थोड़ा आगे-पीछे चलाता था। परिणामतः नाली एकसार नहीं बनती थी, बल्कि कुछ अनियमित या तरंगवत् (टेढ़ी-मेढ़ी) शकल की बनती थी।



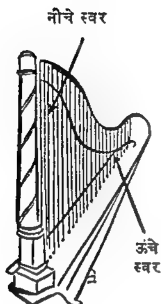
यदि हम किसी रिकार्ड की नाली को बारीकी से देखें तो हमें नाली का टेढ़ा-मेढ़ापन दिखाई देगा। जब भारी आवाज रिकार्ड की जाती है तब यह टेढ़ा-मेढ़ापन अधिक दिखाई देता है; और जब हलकी आवाज़ रिकार्ड की जाती है, तब टेढ़ा-मेढ़ापन कम होता है। इसका कारण यह है कि जब ध्वनि भारी होती है, तब हवा के परमाणु एक-दूसरे से अधिक ज़ोर से टकराते हैं। तब वे डायाफ्राम पर अधिक बल से चोट करते हैं और सुई को अधिक चौड़ाई में या अधिक बड़े आयाम (ऐम्प्लीट्यूड) में चलाते हैं। इस प्रकार तरंगों का आयाम या एक तरंग के सिर और तली के बीच की दूरी ध्वनि की उद्घोषता या भारीपन से तय होती है। अधिक आयाम का अर्थ है भारी ध्वनि; कम आयाम का अर्थ है हल्की ध्वनि।





कागज़ का शंकु

जब रिकार्ड घूमनेवाली पटरी पर रखा जाता है, तब रिकार्ड घूमने के साथ-साथ सुई नाली में चली जाती है । पहले बनाए गए बाजों में सुई डायाफ्राम पर उसी तरह लगी होती थी जैसे रिकार्डर में । नाली के टेढ़े-मेढ़े मार्ग में सुई की नोक चलने पर उसके जल्दी-जल्दी कम्पन करने से डायाफ्राम भी कम्पन करता है । डायाफ्राम के इस कम्पन से हवा के अणु परे हटते थे, और वही ध्वनि फिर पैदा हो जाती थी जिससे रिकार्ड भरने के समय नाली में तरंगरूपता या टेढ़ा-मेढ़ा रूप पैदा हुआ था । जब पहलेवाली ध्वनि भारी होती थी, तब तरंगों का आयाम अधिक होता था और भारी आवाज़ पैदा करने के लिए रिकार्ड बजानेवाली सुई और डायाफ्राम अधिक बल से कम्पन करते थे ।



इन कम्पनों को आप एक कागज़ शंकु की तरह मोड़कर और शंकु की नोक में एक पिन चुभोकर महसूस कर सकते हैं, और सुन सकते हैं । पिन की नोक रिकार्ड प्लेअर में घूमनेवाले रिकार्ड की नाली में रख दीजिए । शंकु को पकड़ने पर आपकी उंगलियों में गुदगुदी या सरसराहट महसूस होगी और आपको ध्वनि भी महसूस होगी ।

ऊंचा स्वर

नीचा स्वर

हमें एक बात पर और विचार करना है और वह है ध्वनि का तारत्व (पिच) । यदि आप सितार के छोटे तार को झटका दें तो आपको उच्च तारत्व का स्वर सुनाई देगा । यदि आप लम्बे तार को झटका दें तो आपको निम्न तारत्व का स्वर सुनाई देगा । दोनों का अन्तर तार की चाल का अन्तर है । छोटा तार जल्दी-जल्दी कम्पन करता है, अर्थात् यह अधिक तेज़ी से आगे-पीछे चलता है, और इस प्रकार हवा के अणुओं को अधिक बार धक्का देता है । एक बीचवाले तार को प्रति सेकंड २५६ बार कम्पित किया जा सकता है (यह मिडिल सी होता है) इसका अर्थ यह है कि यह एक सेकंड में २५६ बार आगे जाकर पीछे लौट आता है ।

रिकार्ड की नाली में बनी हुई तरंगों की दृष्टि से इसका क्या

अर्थ है ? यदि हम नाली को बारीकी से देखें तो हमें पता चलेगा कि जब ऊंचे तारत्ववाला स्वर अंकित किया गया है, तब तरंगों के शृंग (पीक) अर्थात् सबसे बाहरवाले बिन्दु अधिक पास-पास हैं ; और जब निम्न तारत्ववाला स्वर अंकित हुआ है, तब वे एक-दूसरे से दूर हैं ।

यदि प्रति सेकंड २५६ बार कम्पन करनेवाली तार की ध्वनि की नाली रिकार्ड पर बनाई जाए तो हम देखते हैं कि प्रत्येक सेकंड में २५६ तरंगें बनती हैं । अधिक ऊंचे तारत्ववाले स्वरों में प्रति सेकंड अधिक तरंगें बनेंगी तथा इससे नीचे तारत्ववाले स्वर में प्रति सेकंड कम तरंगें बनेंगी । प्रति सेकंड बननेवाली तरंगों की संख्या को आवृत्ति (फ्रीक्वेंसी) कहते हैं । ऊंचे तारत्व-वाले स्वर में तरंगें अधिक बार बनती हैं और इसलिए वे तरंगें उच्च आवृति (हाई फ्रीक्वेंसी) तरंगें कहलाती हैं । निम्न आवृत्ति-वाली तरंगें (लो फ्रीक्वेंसी वेव्ज़) निम्न या नीचे स्वर पैदा करती हैं ।

इस प्रकार ग्रामोफोन के काम करने का तरीका देखते हुए हमें ध्वनि तरंगों की दो महत्त्वपूर्ण विशेषताएं पता चलेंगी : आयाम और आवृत्ति । आयाम से उद्घोषता निश्चित होती है और आवृत्ति से तारत्व निर्धारित होता है ।

दूसरे रिकार्ड तैयार करना

रिकार्डर में एक रिकार्ड बन जाने के बाद वैसे ही हज़ारों रिकार्ड बनाए जा सकते हैं । ये नकल रिकार्ड ही आप दुकानों से खरीदकर अपने घर ले जाते हैं और अपने ग्रामोफोन पर बजाते हैं । नकल रिकार्ड बनाने के लिए पहले एक मोल्ड या फर्मा बनाया जाता है, जो मूल रिकार्ड की नालियां उल्टे रूप में नकल कर लेता है । उसके बाद इस मोल्ड या सांचे को प्लास्टिक में दबाकर मूल रिकार्ड की जितनी चाहें उतनी नकलें तैयार की जा सकती हैं ।



बिजली का आधुनिक ग्रामोफोन

बिजली के आधुनिक ग्रामोफोन या रिकार्ड बजानेवाले साधन इलेक्ट्रान ट्यूबों (जैसे रेडियो ट्यूबों) का प्रयोग करते हैं। इसलिए उनके बारे में हम अगले अध्याय में रेडियो पर विचार करने के बाद बताएंगे।

फिर भी, रिकार्ड बजानेवाले इस यंत्र में भी एक सुई प्रयोग में आती है जो रिकार्ड की नाली में चलती है। सुई के कम्पन यहां भी सीधे ध्वनि में परिवर्तित नहीं होते, बल्कि टेलीफोन में होनेवाले कम्पनों की तरह बिजली के आवेगों में परिवर्तित हो जाते हैं। बहुत सारे रिकार्ड बजानेवाले यंत्रों में सुई यांत्रिक व्यवस्था द्वारा एक विशेष प्रकार के क्रिस्टल से जुड़ी होती है। क्रिस्टल (केलास या दाने) बहुत आम चीज है क्योंकि बहुत-से रासायनिक यौगिक क्रिस्टल या केलास बनाते हैं। पानी बर्फ के रूप में क्रिस्टल बनाता है। चीनी और नमक क्रिस्टल हैं। रिकार्ड बजानेवाले यंत्रों में रोशेल लवणों के क्रिस्टल प्रयोग में आते हैं।

इन क्रिस्टलों में एक बड़ा मनोरंजक गुण है। यदि उन्हें भींचकर छोड़ दिया जाए तो वे बिजली की बहुत हलकी धारा पैदा करते हैं। इस प्रकार जब सुई के आगे-पीछे चलने से रिकार्ड बजानेवाले यंत्र के क्रिस्टल पर दाब की घटती-बढ़ती मात्रा पड़ती है, तब इसपर बिजली की घटती-बढ़ती मात्रा प्रवाहित होती है। तब बिजली का घटता-बढ़ता प्रवाह इलेक्ट्रानिक सर्किटों (जिनमें रेडियो ट्यूबें भी शामिल हैं) में से गुजरता है और अन्त में लाउडस्पीकर के डायाफ्राम को कंपित करता है, जैसाकि अगले अध्याय में स्पष्ट किया गया है।



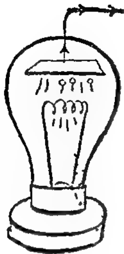
अध्याय सत्रह

इलेक्ट्रान ट्यूबें

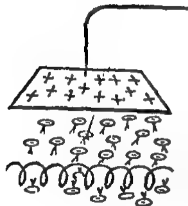
बेल की इस खोज के बाद कि तारों पर ध्वनि को एक स्थान से दूसरे स्थान पर कैसे भेजा जा सकता है, अगला काम यह था कि दूर के स्थानों के बीच बिना तारों के ध्वनि भेजने का कोई उपाय किया जाए। इंग्लैंड में इस तरह ध्वनि भेजने को 'वायरलेस' कहते हैं। अमेरिका में इसे 'रेडियो' कहते हैं। रेडियो की आयु, जिस रूप में हम इसे जानते हैं उस रूप में, पचास वर्ष भी नहीं है। तो भी रेडियो में प्रयुक्त होनेवाले ध्वनि और बिजली-सम्बन्धी बहुत-से बुनियादी सिद्धान्त सैकड़ों वर्षों से ज्ञात हैं।

फ्रैंकलिन, वोल्टा, ऐम्पियर और अन्य लोगों ने बिजली-सम्बन्धी आवश्यक खोजें कीं। ओम, हेल्महोल्ट्स और अन्य लोगों ने ध्वनि-सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण कार्य किया। इसके बाद सन् १८८३ में टामस अलवा एडिसन ने शुरू में बिजली के लट्टू बनाते हुए एक विशेष क्रिया का पता लगाया। एक पीढ़ी बाद इस क्रिया को 'एडिसन इफेक्ट' नाम दिया गया। हमारे आधुनिक रेडियो-सेटों का काम इस इफेक्ट पर ही आधारित है।

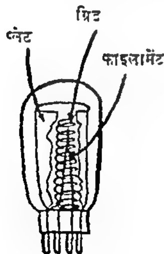
कुछ समय पहले एडिसन ने अपने बिजली के लट्टू का आविष्कार किया था। पर फिलामेण्ट बहुत सन्तोषजनक नहीं



थे क्योंकि वे बहुत देर नहीं चलते थे। तन्तु के जीवन की इस अल्पता का विश्लेषण करने के लिए एडिसन ने एक बिजली के लट्टू के ऊपरले हिस्से में धातु की एक प्लेट मोल-बन्द कर दी, प्लेट का सम्बन्ध बिजली की एक बैटरी से जोड़ दिया और बिजली का लट्टू जला दिया। उसे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि बिजली की धारा तन्तु में, खाली स्थान को पार करके, प्लेट में पहुंच रही है। दूसरे शब्दों में, तन्तु और प्लेट के बीच में कोई बिजली का सम्बन्ध या तार न होने पर भी उन दोनों के बीच बिजली चल रही थी।



जो कुछ हो रहा था, वह इस प्रकार है: लट्टू के तन्तु पर इलेक्ट्रानों की भीड़ थी। बिजली की धारा इसमें से गुजर रही थी। धातु की प्लेट बिजली की बैटरी के धनात्मक सिरे से जुड़ी हुई थी। इसलिए तन्तु में प्लेट की अपेक्षा बहुत अधिक इलेक्ट्रान थे। आपको याद होगा कि सजातीय विद्युत्-आवेश एक-दूसरे को प्रतिकर्षित करते हैं, अर्थात् परे हटाते हैं, तथा विजातीय विद्युत्-आवेश एक-दूसरे को आकर्षित करते हैं। दूसरे शब्दों में बहुत-से ऋणात्मक आवेशवाले इलेक्ट्रान तन्तु में एक-दूसरे को परे धकेल रहे थे, और धनात्मक आवेशवाली प्लेट उन्हें आकर्षित कर रही थी। नतीजा यह हुआ कि बहुत-से इलेक्ट्रान तन्तु से हटकर आकाश में उड़ते हुए प्लेट पर पहुंच गए, अर्थात् बिजली की धारा तन्तु से प्लेट पर पहुंच गई।



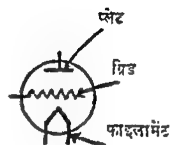
फारेस्ट का ट्रायोड

फ्लेमिंग और डी फारेस्ट

एडिसन ने इस मनोरंजक इफेक्ट या प्रभाव की ओर आगे जांच-परख नहीं की, क्योंकि वह बिजली के लट्टू में सुधार करने के महत्त्वपूर्ण काम में लगा हुआ था। पर बीस वर्ष बाद सर जान फ्लेमिंग नामक अंग्रेज ने इस एडिसन इफेक्ट का प्रयोग करके सबसे पहली कार्य-समर्थ इलेक्ट्रान-ट्यूब बनाई। बाद में बनाई गई ट्यूबों की तुलना में यह बड़ी भनगढ़ थी, पर उस

समय लोग जिन आरम्भिक रेडियो-सेटों के परीक्षण कर रहे थे, उनमें इसका व्यावहारिक प्रयोग हुआ।

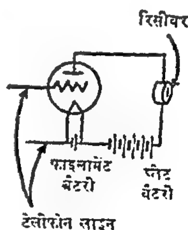
फिर सन् १९०६ में डाक्टर ली डी फारेस्ट नामक एक अमेरिकन ने इलेक्ट्रान ट्यूब में एक तीसरा हिस्सा और बढ़ाया। इस बढ़ाए हुए हिस्से का नाम उसने ग्रिड रखा और ट्यूब तीन अवयवोंवाली या 'ट्रायोड' कहलाई। ये अवयव ये तन्तु, प्लेट और ग्रिड। ग्रिड के बढ़ जाने से इलेक्ट्रान ट्यूब कहीं अधिक उपयोगी होगी, क्योंकि ग्रिड तन्तु और प्लेट के बीच बहनेवाले इलेक्ट्रानों की संख्या बहुत जल्दी से बदल सकता था। वह बहुत-से इलेक्ट्रानों को बहने देता और फिर प्रायः तत्काल प्रवाह को रोक देता। जैसाकि हम आगे देखेंगे, रेडियो में प्रयोग में आनेवाली इलेक्ट्रान ट्यूबों का यह बहुत महत्त्वपूर्ण कार्य है। ऐसी ट्यूबें प्रायः वैकुअम ट्यूबें (निर्वात नलियां) कहलाती हैं, क्योंकि उनमें से वायु हटाकर उनके भीतर वैकुअम, अर्थात् वायु का अभाव, कर दिया जाता है।



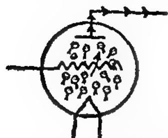
ट्रायोड का संकेत

ग्रिड कैसे कार्य करता है

मान लो कि एक टेलीफोन लाइन पर बहुत दुर्बल या हलका सिगनल (संकेत) आ रहा है। विद्युत् के आवेग (या सिगनल), जो बड़ा लम्बा रास्ता चलकर आए हैं, इतने सबल नहीं हैं कि वे टेलीफोन रिसीवर के डायाफाम को इतना कम्पित कर सकें कि आवाज सुनाई दे। आपको याद होगा कि रिसीवर बिजली की धारा की सामर्थ्य की घट-बढ़ के द्वारा कार्य करता है—यह घट-बढ़ रिसीवर में लगी हुई तार की कुण्डली के चारों ओर चुम्बकीय सामर्थ्य में घट-बढ़ पैदा करती है। चुम्बकीय सामर्थ्य की इस घट-बढ़ से डायाफाम कम्पन करने लगता है जिससे ध्वनि पैदा हो जाती है। पर, यदि आनेवाला सिगनल हलका या दुर्बल है तो घट-बढ़ इतनी अधिक नहीं होगी कि वह डायाफाम को इतना कम्पित कर सके कि हम ध्वनि सुन सकें।



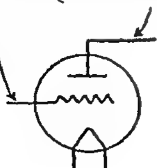
ग्रिड को बिल्कुल करंट नहीं जाती। बहुत सारे इलेक्ट्रान प्लेट की ओर बहते हैं



ग्रिड के इलेक्ट्रान फाइलामेंट से आए इलेक्ट्रानों को परे हटाते हैं। प्लेट की ओर बहुत थोड़े इलेक्ट्रान बहते हैं



यहां प्रति सेकंड १० से १०० तक इलेक्ट्रान आने का अर्थ है १००० से २०,००,००० तक इलेक्ट्रानों का प्रति सेकंड यहां से जाना



तीन अवयवोंवाली इलेक्ट्रान ट्यूब का प्रयोग करके विद्युत् आवेगों को इतना प्रवर्धित (एम्प्लीफाई) किया जा सकता है, अर्थात् उनका सामर्थ्य इतना बढ़ाया जा सकता है, कि डायाफ्राम के कम्पन सबल या समर्थ हो जाएं। इसके लिए टेलीफोन लाइन का सम्बन्ध इलेक्ट्रान ट्यूब के ग्रिड से जोड़ दिया जाता है। यदि लाइन पर कोई धारा नहीं आ रही, तो ग्रिड पर फालतू इलेक्ट्रान नहीं होंगे। इसलिए बहुत सारे इलेक्ट्रान तन्तु से प्लेट में प्रवाहित होंगे। पर, यदि ग्रिड में टेलीफोन लाइन से धारा आ रही है तो ग्रिड पर बहुत सारे इलेक्ट्रान होंगे। अब तन्तु से ग्रिड पर जाने की कोशिश करनेवाले इलेक्ट्रान प्रतिकर्पित किए जाएंगे। वे प्लेट पर नहीं पहुंच सकेंगे। आपको याद होगा कि जब इलेक्ट्रान एक-दूसरे के निकट आते हैं, तब ये एक-दूसरे को प्रतिकर्पित करते हैं, अर्थात् परे हटाते हैं। इस प्रकार जब इलेक्ट्रान तन्तु से रवाना होते हैं और प्लेट की ओर चलते हैं, तब वे ग्रिड के पास पहुंचते हैं। ग्रिड के इलेक्ट्रान उन्हें प्रतिकर्पित करते हैं। वे उसमें से आगे नहीं बढ़ सकते।

यह प्रभाव पैदा करने के लिए ग्रिड पर बहुत अधिक इलेक्ट्रानों का होना आवश्यक नहीं। एक सरल उदाहरण लीजिए। मान लीजिए कि अन्दर आनेवाली धारा में घट-बढ़ से ग्रिड पर १० से १०० तक इलेक्ट्रान होते हैं। मान लीजिए कि ग्रिड पर १०० इलेक्ट्रान होने पर सिर्फ १००० इलेक्ट्रान प्रति सेकंड तन्तु से प्लेट में प्रवाहित हो सकते हैं; इसका अर्थ यह हुआ कि ग्रिड के १०० इलेक्ट्रान उन १००० इलेक्ट्रानों को छोड़कर शेष सबको प्रतिकर्पित कर देते हैं। पर जब ग्रिड पर इलेक्ट्रानों की संख्या केवल १० रह जाती है, तब और बहुत-से इलेक्ट्रान आगे चले जाते है। कुछ प्रकार की इलेक्ट्रान ट्यूबों में प्रति सेकंड २०,००,००० इलेक्ट्रान तक चले जाते हैं। इस प्रकार १० और और १०० इलेक्ट्रान प्रति सेकंड के बीच घटता-बढ़ता हुआ आनेवाला सिगनल ट्यूब से इतना प्रवर्धित कर दिया जाता है

कि वह १००० से २०,००,००० प्रति सेकण्ड तक घटता-बढ़ता है। अब हमारे पास क्या है ? आनेवाला सिगनल हलका है। वह ग्रिड पर सिर्फ १० से १०० इलेक्ट्रान तक ला सकता है। पर जानेवाला सिगनल समर्थ है; प्रति सेकंड १००० से २०,००,००० तक इलेक्ट्रान तन्तु से प्लेट में प्रवाहित होते हैं। फिर वे रिसीवर में से जाते हैं। अब सिगनल इतना समर्थ है कि वह डायाफ्राम को इतना कम्पित कर दे कि हम ध्वनि सुन सकें। यदि सिगनल अब भी काफी सबल नहीं तो और अधिक परि-वर्धित करने के लिए और ट्यूब लगाई जा सकती है।

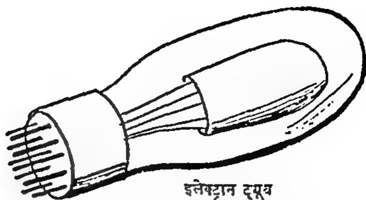


दूसरी ट्यूब और प्रवर्धन कर देती है

इलेक्ट्रान ट्यूबों का प्रयोग इलेक्ट्रिक ग्रामोफोन क्रिस्टल से आनेवाले सिगनल को बढ़ाने में भी किया जा सकता है, अर्थात् बिजली की धारा की घट-बढ़ को इतना अधिक कर दिया जाता है कि वह ग्रामोफोन लाउडस्पीकर के डायाफ्राम में कम्पन पैदा कर दे। लाउडस्पीकर की रचना टेलीफोन रिसीवर की रचना से बहुत कुछ मिलती-जुलती है। इसमें तार की एक कुण्डली होती है जिसमें से धारा गुजरती है। धारा की सामर्थ्य बदलने पर चुम्बक क्षेत्र बदल जाता है, जिससे डायाफ्राम चलने या कम्पन करने और इस प्रकार ध्वनि पैदा करने लगता है।

अध्याय अठारह

ट्रान्ज़िस्टर



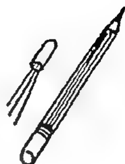
इलेक्ट्रान ट्यूब



ट्रान्सिस्टर

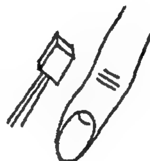
इलेक्ट्रान ट्यूबें अद्‌भुत साधन हैं। रेडियो और टेलीविजन सेटों में तो उनके बिना काम ही नहीं चलता। पर वे और भी बहुत-से कार्य करती हैं। उनका रेडार और चलचित्र यंत्रों में प्रयोग होता है। वे निर्माण कार्यों को नियंत्रित करती हैं, और 'इलेक्ट्रानिक मस्तिष्कों' में, जैसेकि यूनिवैक, बुनियादी वस्तु हैं। आगे हम उनके बारे में और बातें बताएंगे।

पर वैकुअम ट्यूबों में कुछ कमियां हैं। एक तो उनमें बहुत-सी बिजली बेकार जाती है। वैकुअम ट्यूब के अवयवों में से एक गर्म होने पर ही इलेक्ट्रान छोड़ता है। गर्म करने के लिए बिजली की जरूरत होती है, और गर्म करने से अनचाही ऊष्मा पैदा होती है। शायद आप अनुभव से जानते हैं कि रेडियो का भीतरी हिस्सा काफी गर्म हो जाता है। कल्पना कीजिए कि सुपरसोनिक जेट विमान के इलेक्ट्रानिक कण्ट्रोल के सैकड़ों वैकुअम ट्यूबों में कितनी गर्मी पैदा होती होगी! ऐसे विमानों की इस गर्मी को दूर करने के लिए ठंडा करने की विशेष व्यवस्था करनी पड़ती है।



वैज्ञानिकों ने इलेक्ट्रान ट्यूबों की यह तथा दूसरी कमियां देखकर इलेक्ट्रान नलियोंवाला काम करने के लिए दूसरे उपाय खोजे। कुछ ही वर्ष पहले 'बेल टेलीफोन लेबोरेट्रीज़' ने एक नये साधन, ट्रान्जिस्टर, का ऐलान किया। वर्षों के परिश्रम के बाद बेल लेब्रोरेट्रीज के दो वैज्ञानिकों, ब्रैटेन और बारडीन, ने सन् १९४८ में दुनिया के सामने इन अद्भुत साधनों का पहला नमूना पेश करने में सफलता प्राप्त की।

यह अधिक प्रभावोत्पादक नहीं था। असल में यह इतना छोटा था कि इसे देखने के लिए भी आंखों पर जोर डालना पड़ता था। बहुत-से ट्रान्जिस्टर पेन्सिल के पीछे लगी हुई रबर से भी छोटे होते है। पर कुछ ट्रान्जिस्टर अपने आकार से सैकड़ों गुना बड़ी इलेक्ट्रान-ट्यूबों के स्थान पर प्रयोग में आ सकते हैं। ट्रान्जिस्टरों को बहुत कम धारा की आवश्यकता होती है, और अपने मुकाबिले की इलेक्ट्रान-ट्यूबों से और बहुत कम धारा की आवश्यकता होती है; और इनमें बहुत कम गर्मी पैदा होती है।



पर ट्रान्ज़िस्टर क्या होते हैं और वे किस तरह कार्य करते हैं?

ट्रान्जिस्टर जर्मेनियम क्रिस्टलों के छोटे-छोटे कतरनों के बने होते हैं। जर्मेनियम भी तांबे, आक्सीजन और हाइड्रोजन आदि की तरह तत्त्व है। यह क्रिस्टल रूप में होता है। सामान्य ट्रान्जिस्टर में प्रयोग आनेवाले जर्मेनियम क्रिस्टल का टुकड़ा १/१६ इंच वर्ग से भी छोटा और १/३२ इंच से भी कम मोटा हो सकता है। फुटे को देखकर इसके छोटेपन का कुछ अन्दाज़ कीजिए।

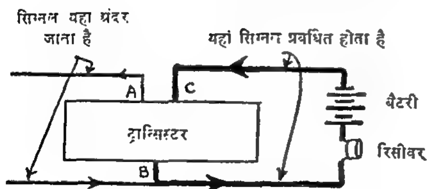


एक प्रकार के ट्रान्जिस्टर में तीन तार जर्मेनियम के क्रिस्टल से बंधे होते है। कल्पना कीजिए कि हम एक टेलीफोन सिगनल को प्रवर्धित करने में इस ट्रान्जिस्टर का प्रयोग कर रहे हैं। इसका बंधाव अगले पृष्ठ पर दिखाया गया है।

इस ट्रान्जिस्टर-बंधाव में सिगनल A और B तारों पर आता है। रिसीवर बैटरी के जरिए B और C तारों पर जुड़ा रहता है। सिगनल न होने पर बैटरी से रिसीवर में होकर कोई धारा

नहीं भरेगी। पर जब सिगनल आता है, तब ट्रान्जिस्टर इसे नीचे दी गई रीति से प्रवर्धित करता है। सिगनल इलेक्ट्रानों की लहरों या बिजली की धारा का बना होता है, जैसाकि अध्याय १२ में समझाया गया है। इलेक्ट्रान तार B पर अन्दर आते हैं, और तार A से बाहर जाते हैं। जब इलेक्ट्रान जर्मेनियम में से बाहर जाते हैं तब वे अपने पीछे धनात्मक आवेशवाले जर्मेनियम परमाणु छोड़ जाते हैं, (अर्थात् कुछ परमाणुओं के इलेक्ट्रान निकल जाते हैं)। इन धनात्मक आवेशों में से कुछ की सन्तुष्टि तार B से आनेवाले इलेक्ट्रानों से होती है। पर अन्य धनात्मक आवेश की सन्तुष्टि तार C में से अन्दर आनेवाले इलेक्ट्रान द्वारा होती है।

जर्मेनियम में होनेवाली क्रियाओं पर इस तरह विचार किया जाएगा। क्रिस्टल में तार A के चारों ओर धनात्मक आवेश पैदा हो जाते हैं। इन धनात्मक आवेशों को छेदों के रूप में समझा जा सकता है, क्योंकि वे इलेक्ट्रानों का अभाव हैं। जब तार A



और B पर सिगनल अन्दर आता है, तब जर्मेनियम में बहुत-से 'छेद' पैदा हो जाते हैं। तब इन छेदों को भरने के लिए तार C से इलेक्ट्रान प्रवाहित होते हैं, अर्थात् तार C और तार B के बीच धारा बहने लगती है। इस धारा से रिसीवर कार्य करने लगता है।

इस सबमें विस्मयजनक बात यह है कि A और B तारों पर अन्दर आनेवाली बहुत ही थोड़ी धारा या सिगनल बहुत-से छेद पैदा कर देता है और इस प्रकार C और B तारों के बीच जर्मेनियम में बड़ी धारा पैदा कर देता है। दूसरे शब्दों में, सिगनल बहुत अधिक आवर्धित (मैग्नीफाईड) हो जाता है। यह वही कार्य है जो इलेक्ट्रान ट्यूब करती है (देखिए अध्याय सत्रह)।



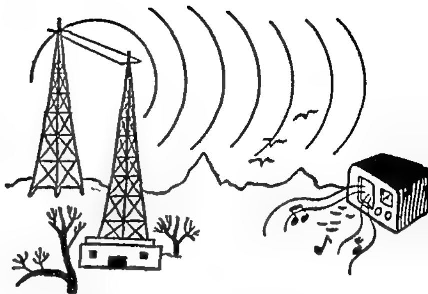
अन्य प्रकार के ट्रान्जिस्टर भी प्रयोग में आ रहे हैं; और नये प्रकार के ट्रान्जिस्टर भी प्रयोगशालाओं में बनाए जा रहे हैं। इलेक्ट्रान ट्यूबों की जगह ट्रान्जिस्टरों का प्रयोग करनेवाले बहुत छोटे रेडियो आप खरीद सकते हैं। टेलीविजन सेट और बहुत-से दूसरे इलेक्ट्रानिक साधन इलेक्ट्रान ट्यूबों के स्थान पर ट्रान्जिस्टरों का प्रयोग कर रहे हैं या शीघ्र करने लगेंगे। ट्रान्जिस्टरों का प्रयोग करके ये सब उपकरण बहुत छोटे आकार के बनाए जा सकते हैं।



ट्रान्जिस्टरों का एक खास उपयोग सुनने की सुविधा बढ़ाने में होता है। जो लोग ऊंचा सुनते हैं, वे विशेष प्रकार के साधन या श्रवण-सहायक लगा लेते हैं जिनसे ध्वनि प्रवर्धित हो जाती है, और वे सुन सकते हैं। ये प्रवर्धक बहुत समय तक छोटी इलेक्ट्रान ट्यूबों से बनाए जाते रहे हैं, पर अब ट्रान्जिस्टरों का प्रयोग करके और भी छोटे श्रवण-सहायक सींग की रिमवाली ऐनकों के अन्दर बनाए जा रहे हैं। ये ऐनकें लगा लेने पर कान पर बैठनेवाली एक कमानी प्रवर्धित ध्वनि को कान के ऊपरवाली हड्डी तक पहुंचाती है। वहां से हड्डी में होकर वह भीतरी कान पर पहुंचती है। अध्याय पन्द्रह में कानों और उनका कार्य-नीति का वर्णन है।

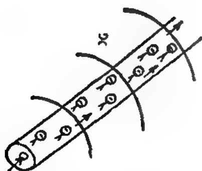
अध्याय उन्नीस

रेडियो तरंगें



यह प्रश्न करने से पहले कि रेडियो या इलेक्ट्रान ट्यूबें असली रेडियो-सेट में किस तरह कार्य करती हैं, हमें पहले यह जानना चाहिए कि रेडियो सिगनल ब्राडकास्टिंग स्टेशन से आपके रिसीवर या रेडियो-सेट तक कैसे पहुंचते हैं। हम जानते हैं कि ध्वनि के सिगनल ऊंची दाब और नीची दाब की तरंगों के रूप में हवा में चलते हैं। कुछ-कुछ इसी रीति से रेडियो सिगनल चुम्वक-तरंगों में चलते हैं।

आपको याद होगा कि तार में इलेक्ट्रानों का प्रवाह होने पर चुम्बकत्व पैदा होता है। यह चुम्बकत्व बिजली से पैदा होने के कारण इलेक्ट्रो-मैगनेटिज्म या विद्युत्-चुम्बकत्व कहलाता है। बिजली की धारा जितनी अधिक भारी होती है, उतना ही अधिक समर्थ विद्युत् चुम्बकत्व होता है।

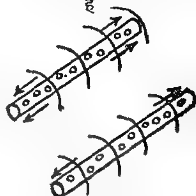


तार में बहते हुए इलेक्ट्रान विद्युत्-चुंबकत्व पैदा करते हैं

ट्रान्सफार्मर में धारा प्राइमरी वाईंडिंग या पहली कुण्डली में बार-बार दिशा बदलती है। इससे विद्युत् चुम्बकत्व की तरंगें वाईंडिंग से बाहर चलने लगती हैं और ये तरंगें परवर्ती वाईंडिंग या दूसरी कुण्डली पार करके परवर्ती वाईंडिंग में इलेक्ट्रान या धारा प्रवाहित करती हैं।

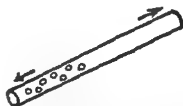
लगभग इसी तरह रेडियो स्टेशन विद्युत्-चुम्बकीय तरंगें चलाता है, जो रेडियो रिसीवर में इलेक्ट्रान-संचलन पैदा कर देती हैं। इस इलेक्ट्रान-संचलन से ध्वनि पैदा होती है जिससे आप रेडियो स्टेशन पर चल रहा कार्यक्रम सुन सकते हैं। इसकी एक खास बात यह है कि विद्युत्-चुम्बकीय तरंगें बड़ी दूर तक जा सकती हैं।

ब्राडकास्टिंग एंटेना में इलेक्ट्रान आगे-पीछे दौड़ते हैं



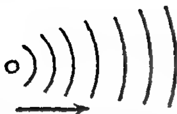
और इससे रिसीविंग एंटेना में वे आगे-पीछे दौड़ते हैं

ब्राडकास्टिंग स्टेशनों पर ऐण्टेना (विद्युत् ग्राहक या एरियल) विद्युत्-चुम्बकीय तरंगों का आरम्भ स्थान है। ऐण्टेना कोई लम्बा तार या कोई ऊंचा बुर्ज होता है। ब्राडकास्टिंग यंत्र इलेक्ट्रानों को ऐण्टेना में बड़ी तेज चाल से आगे-पीछे दौड़ने को मजबूर करता है। यह प्रत्यावर्ती धारा (आल्टरनेटिंग करेण्ट, ए० सी०) होती है, पर यह हमारे घरों में प्रयोग में आनेवाली ए० सी० की अपेक्षा बहुत अधिक जल्दी-जल्दी दिशा बदलती है। जब रेडियो पर बोलनेवाला कहता है, "यह स्टेशन क ख ग है जो ७६० किलोसाइकिल आवृत्ति पर ब्राडकास्ट कर रहा है," तब उसका अर्थ यह होता है कि ऐण्टेना में करेण्ट के एक दिशा में चलने, रुकने और फिर विपरीत दिशा में चलने की चाल ७,६०,००० बार प्रति सेकण्ड है! 'किलो' का अर्थ है १०००, इसलिए ७६० किलोसाइकिल का अर्थ है ७,६०,००० साइकिल (चक्र)।



७६० किलोसाइकल का अर्थ यह है कि इलेक्ट्रान पहले एक दिशा में, और फिर दूसरी दिशा में ७,६०,००० बार प्रति सेकेंड चलते हैं

क्या आपको वे बातें याद हैं जो हमने अध्याय चौदह में ट्रांसफार्मर के बारे में बताई थीं? ट्रांसफार्मर में तार की कुण्डली में चलनेवाली प्रत्यावर्ती धारा कुण्डली के चारों ओर एक बदलता रहनेवाला चुम्बक क्षेत्र पैदा कर देती है। इसी प्रकार ऐण्टेना में चलनेवाली प्रत्यावर्ती धारा ऐण्टेना के चारों ओर एक बदलता रहनेवाला चुम्बकीय क्षेत्र पैदा कर देती है। यह बदलता रहनेवाला चुम्बीय क्षेत्र बड़ी तेज चाल से ऐण्टेना से सब



रेडियो तरंगें १,८६,००० मील प्रति सेकेंड चलती हैं

दिशाओं में चलने लगता है। चुम्बकीय क्षेत्र के लगातार बदलते रहने के कारण यह तरंगों के रूप में चलता है। ये तरंगें रेडियो तरंगें कहलाती हैं। रेडियो तरंगें १,८६,००० मील प्रति सेकंड की चाल से चलती हैं।

ये रेडियो तरंगें या चुम्बक तरंगें प्रेषक स्टेशन या रेडियो स्टेशन के ऐण्टेना से चलकर आपके रेडियो-सेट के ऐण्टेना से टकराती हैं। इससे विद्युत् की हलकी तरंग आपके ऐण्टेना में दिशा बदलने लगती है। यह ट्रांसफार्मर जैसी ही स्थिति है, जिसमें प्राइमरी वाइंडिंग में चलनेवाली प्रत्यावर्ती धारा चुम्बक तरंगें पैदा कर देती हैं और ये चुम्बक तरंगें ट्रांसफार्मर के सेकण्डरी वाइंडिंग या परवर्ती कुण्डली में धारा पैदा कर देती हैं। ब्राडकास्टिंग ऐण्टेना प्राइमरी या प्राथमिक है और रिसीवर ऐण्टेना या आपके रेडियो का एरियल सेकण्डरी या परवर्ती है।

रिसीवर ऐण्टेना में आनेवाली हलकी बिजली की धाराएं बहुत कम होती हैं। उनकी तुलना बहुत लम्बी टेलीफोन लाइन पर आनेवाले हलके सिगनल से की जा सकती है। आपको याद होगा कि इस बहुत हलके सिगनल को इलेक्ट्रान ट्यूबों से तब तक प्रवर्धित किया जाता है तब तक वह इतना समर्थ न हो जाए कि टेलीफोन रिसीवर के डायाफ्राम में ध्वनि पैदा करने योग्य कम्पन पैदा कर दे।

आपके रेडियो-सेट के ऐण्टेना पर आनेवाले रेडियो सिगनल इसी प्रकार प्रवर्धित होते हैं। अगले अध्याय में हम उनके विषय में और जानकारी हासिल करेंगे।



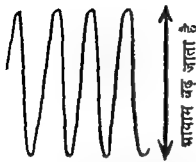
अध्याय बीस

रेडियो प्रसारण और संग्राहण

रेडियो स्टेशन पर माइक्रोफोन ध्वनि को बिजली के आवेगों में बदलता है। आप समझ सकते हैं कि माइक्रोफोन बहुत कुछ टेलीफोन-ट्रांसमिटर की तरह कार्य करता है। माइक्रोफोन से आनेवाले बिजली के आवेगों को इलेक्ट्रान ट्यूबों से प्रवर्धित किया जाता है। पर उन्हें प्रेषक ऐण्टेना पर भेजने योग्य बनाने के लिए उनपर कुछ और भी करना होगा। उन्हें ऐण्टेना में आगे-पीछे होनेवाली हाई फ्रीक्वेंसी या अधिक आवृत्तिवाली प्रत्यावर्ती धारा से मिलाना होगा। यह हाई फ्रीक्वेंसी प्रत्यावर्ती धारा पिछले अध्याय में बताई गई हाई फ्रीक्वेंसी रेडियो तरंगें पैदा करती हैं। ये तरंगें 'वाहक तरंगें' या कैरियर वेव कहलाती हैं, क्योंकि ये ऐण्टेना से जाते हुए अपने साथ माइक्रोफोन से आनेवाले सिगनल ले जाती हैं। रेडियो-तरंगें माइक्रोफोन से आनेवाले सिगनलों से अधिमिश्रित (माडुलेट) कर दी जाती हैं। इस अधिमिश्रण या माडुलेशन का उपयोग करके ही आपका रेडियो-सेट रेडियो



यह तरंग एंटेना में १०,००,००० इलेक्ट्रानों के आगे-पीछे चलने को प्रकट करती है। ये इलेक्ट्रान रेडियो वाहक तरंगें (कैरियर वेव्स) पैदा करते हैं



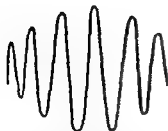
जब माइक्रोफोन इलेक्ट्रान वाहक तरंग इलेक्ट्रानों से मिल जाते हैं, तब १०,००,००० से अधिक इलेक्ट्रान चलते हैं

स्टेशन से बोले जानेवाले कार्यक्रम को पुनः उत्पादित करता है।

अब यह देखना है कि माडुलेशन कैसे होता है। ब्राडकास्टिंग यंत्र ऐण्टेना में इलेक्ट्रान भेजता है जो एक बार एक दिशा में, और फिर दूसरी दिशा में चलते हैं। उदाहरण के लिए, मान लीजिए कि जब माइक्रोफोन से कोई बिजली के आवेग नहीं आ रहे (अर्थात् कोई ध्वनि नहीं की जा रही) तब ऐण्टेना में १०,००,००० इलेक्ट्रान पहले एक दिशा में और फिर दूसरी दिशा में चल रहे हैं। ७६० किलोसाइकिल की फ्रीक्वेंसी (आवृत्ति) पर ब्राडकास्टिंग (प्रसारण) करनेवाले रेडियो स्टेशन में, ये इलेक्ट्रान एक सेकंड में ७,६०,००० बार पहले एक दिशा में और फिर दूसरी दिशा में चल रहे होंगे। ये चलते हुए इलेक्ट्रान 'वाहक तरंगें' पैदा कर रहे हैं।

यदि माइक्रोफोन से आनेवाले बिजली के आवेगों को इन इलेक्ट्रानों के साथ मिलाकर इलेक्ट्रान-संचलन को अधिमिश्रित (माडुलेट) कर दिया जाए, तो एक मनोरंजक बात होगी। बात यह है कि जब कोई ध्वनि की जाती है और उसे माइक्रोफोन द्वारा बिजली के आवेगों में बदल दिया जाता है, तब १०,००,००० से अधिक इलेक्ट्रान ऐण्टेना में चलते हैं। दूसरे शब्दों में, माइक्रोफोन के बिजली के आवेग या इलेक्ट्रान 'वाहक तरंगों' में इलेक्ट्रानों की संख्या बढ़ा देते हैं।

इससे ऐण्टेना में अधिक प्रबल इलेक्ट्रान लहर और इस प्रकार अधिक प्रबल विद्युत् चुम्बकीय या रेडियो तरंग पैदा हो जाती है। यह खास तरंग आपके रेडियो-सेट के एरियल से टकराने पर उसमें इलेक्ट्रानों का ऐसा प्रवाह पैदा करेगी, जो सिर्फ वाहक तरंग द्वारा उत्पन्न प्रवाह से अधिक प्रबल होगा।

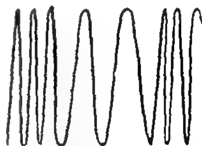


माइक्रोफोन इलेक्ट्रानों की संख्या में घट-बढ़ तरंगों को परिवर्तित (माडुलेट) कर देती है

इस प्रकार माइक्रोफोन में ध्वनि की घट-बढ़ से रेडियो वाहक तरंगों के सामर्थ्य या आयाम में घट-बढ़ पैदा हो जाती है। यह आयाम की घट-बढ़ आपके रेडियो-सेट के एरियल में प्रवाहित होनेवाले इलेक्ट्रानों की संख्या में घट-बढ़ पैदा करती

है। तब आपका रेडियो-सेट इस घट-बढ़ के प्रयोग से वह ध्वनि पुन: उत्पादित करता है जो रेडियो स्टेशन के माइक्रोफोन के सामने की जा रही है। यह किस तरह किया जाता है, यह हम नीचे बताएंगे।

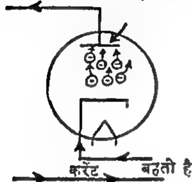
वाहक तरंगों को परिवर्तित करने की यह प्रणाली 'ऐम्प्लीट्यूड माडुलेशन (आयाम-अधिमिश्रण) या 'ए० एम०' कहलाती है। कुछ समय पहले तक प्राय: सब रेडियो-सेट इसी सिद्धान्त के अनुसार चलाए जाते थे। ए० एम० रेडियो-सेटों में एक त्रुटि है। वे 'घर-घर', 'पप-पप' या 'कड़-कड़' शोर को पकड़ लेते हैं जिससे कभी-कभी रेडियो की आवाज़ बहुत खराब हो जाती है। 'कड़-कड़' आवाज़ आकाश की बिजली से या कुछ बिजली की मशीनों से, जो विद्युत् चुम्बकीय तरंगें छोड़ती हैं, पैदा होती है। इन तरंगों को, जो रेडियो स्टेशन से भेजी जानेवाली तरंगों जैसी ही होती हैं, हमारा रेडियो पकड़ लेता है। बिजली के तूफानों के समय कड़कड़ाहट इतनी अधिक हो जाती है कि कोई रेडियो-कार्यक्रम नहीं सुना जा सकता। कड़कड़ाहट की दिक्कत दूर करने के लिए एक कुछ भिन्न प्रकार के रेडियो तरंग का परिवर्तन किया गया है, और नये रेडियो स्टेशन और नये माडलों के रेडियो-सेट इस सिद्धान्त के आधार पर बनाए जा रहे हैं। इस प्रकार का तरंग-परिवर्तन 'फ्रीक्वेंसी माडुलेशन' या 'आवृत्ति-अधिमिश्रण' या 'एफ० एम०' कहलाता है। एफ० एम० रेडियो में माइक्रोफोन के बिजली-आवेग वाहक तरंग के इलेक्ट्रानों को मिलाने से साइकिलों की फ्रीक्वेंसी या आवृत्ति बदल जाती है। माइक्रोफोन के बिजली-आवेग या इलेक्ट्रान 'वाहक-तरंग इलेक्ट्रानों' को हलकी या तेज़ चाल से चलाते हैं। तरंग का सामर्थ्य वही रहता है, अर्थात् उनका आयाम नहीं बदलता, पर साइकिलों के होने की आवृत्ति या फ्रीक्वेंसी बदल जाती है और इसका कारण माइक्रोफोन के बिजली आवेगों का माडुलेटिंग इफेक्ट या अधिमिश्रणकारी प्रभाव है। फ्रीक्वेंसी



फ्रीक्वेन्सी माडुलेशन या एफ एम एंटेना में इलेक्ट्रानों के आगे-पीछे चलने की फ्रीक्वेन्सी (आवृत्ति) बदल देता है। गतिमान इलेक्ट्रानों की संख्या लगभग वही रहती है

माडुलेशन या आवृत्ति अधिमिश्रण कड़कड़ाहट को अन्दर नहीं आने देता, क्योंकि वाहक तरंगों की आवृत्तियां बहुत कम से बहुत अधिक तक अनेक होती है। जबकि वायुमण्डल की कड़कड़ाहटवाली तरंगें आवृत्तियों की इस घट-बढ़ के अनुसार नहीं चल सकतीं।

प्लेट पाज़िटिव



पर जब सिग्नल इलेक्ट्रान दूसरी दिशा में चलते हैं, तब कैथोड इलेक्ट्रान प्लेट पर पहुंचते हैं

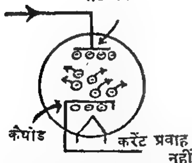
डिमाडुलेटर ट्यूब

जब इलेक्ट्रान हमारे रेडियो के एरियल में दिशा परिवर्तन करने लगते हैं, उसके बाद उनके आगे-पीछे चलने का (जो 'सिगनल' कहलाता है) उपयोग करके ध्वनि पैदा की जाती है। इस प्रक्रिया में पहला काम है सिगनल को प्रवर्धित करना। इसके लिए ऐण्टेना को किसी इलेक्ट्रान ट्यूब के ग्रिड से जोड़ दिया जाता है। हम पहले यह समझा चुके हैं कि ट्यूब आने-वाले सिगनल को किस तरह प्रवर्धित कर सकती है।

बहुत समर्थ बना हुआ यह सिगनल अब डिमाडुलेटर ट्यूब में ले जाया जाता है, जो हाई फ्रीक्वेंसी वाहक तरंगों को इसमें से अलग कर देता है। अब सिगनल में सिर्फ बिजली के आवेग या इलेक्ट्रानों का घटता-बढ़ता प्रवाह रह जाता है, जो रेडियो स्टेशन के माइक्रोफोन के बिजली आवेगों के अनुरूप होता है।

अब यह देखिए कि डिमाडुलेटर ट्यूब कैसे काम करती है। ट्यूब में एक प्लेट, एक गर्म करनेवाला तन्तु, एक कैथोड (ऋणाग्र) होता है। कैथोड गर्म हो जाने पर इलेक्ट्रान छोड़ता है। यदि प्लेट पाज़िटिव या धनात्मक हो तो इलेक्ट्रान प्लेट पर जा सकते हैं, पर यदि प्लेट नेगेटिव या ऋणात्मक हो तो इलेक्ट्रान प्रतिकर्षित होंगे, अर्थात् परे हटेंगे। दूसरे शब्दों में, प्लेट धनात्मक होने पर करेण्ट ट्यूब में से प्रवाहित होगी, पर प्लेट ऋणात्मक होने पर कोई धारा प्रवाहित नहीं हो सकती।

प्लेट नेगेटिव



जब सिग्नल इलेक्ट्रान प्लेट में जाते हैं, तब वे कैथोड इलेक्ट्रानों को प्लेट पर पहुंचने से रोकते हैं

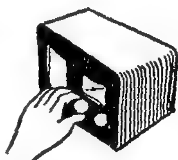
ऐण्टेना से आनेवाली सिगनल को प्रवर्धक या एम्प्लीफाइंग ट्यूबों द्वारा सबल कर देने के बाद इसे प्लेट पर ले जाकर प्लेट को ऋणात्मक और धनात्मक बना दिया जाता है। यह सिगनल,

जो जल्दी-जल्दी आगे-पीछे चलते हुए इलेक्ट्रानों का बना होता है, प्लेट को बार-बार धनात्मक से ऋणात्मक और ऋणात्मक से धनात्मक बना देता है। इस प्रकार ट्यूब धारा-आवेगों की एक श्रेणी को अपने में से गुज़ारकर कैथोड से प्लेट पर जाने देती है।

इन धारा-आवेगों का सामर्थ्य रेडियो स्टेशन पर माइक्रो-फोन के बिजली आवेगों से उत्पन्न माडुलेशन की मात्रा के अनुसार घटता-बढ़ता रहता है। इस प्रकार धारा के आवेग माइक्रोफोन के बिजली-आवेगों के अनुरूप होते हैं। यदि और ऐम्प्लीफाइंग ट्यूबों द्वारा उन्हें और समर्थ बना दिया जाए और फिर उन्हें रेडियो के लाउड स्पीकर में से गुज़ारा जाए तो वे बोलनेवाले डायाफ्राम को कम्पित करेंगे, जिससे रेडियो स्टेशन से प्रसारित कार्यक्रम की ध्वनि फिर पैदा हो जाएगी।

एफ० एम० सेटों में डिमाडुलेटर ट्यूब रेडियो तरंगों के आयाम के बदले उनकी फ्रीक्वेंसी या आवृत्ति की घट-बढ़ पर कार्य करती है, पर ट्यूब के बुनियादी कार्य में कोई अन्तर नहीं है।

ट्यूनिंग (समस्वरण)

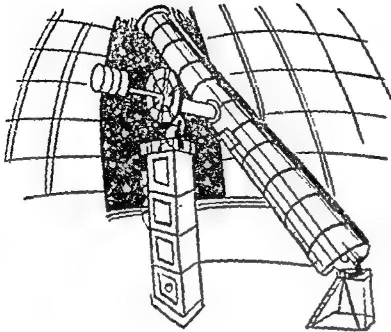


ट्यूनिंग से रिसीवर में इलेक्ट्रान मार्ग बदल जाता है

जब आप किसी रेडियो-सेट को ट्यून करते हैं, तब कोई विशेष स्टेशन चुनते हैं। खूंटी (नॉब) घुमाकर आप अपने सेट को रेडियो स्टेशन के अनुनाद (रेज़ोनेन्स) में ले जाते हैं, अर्थात् मिलाते हैं। इसकी तुलना उस स्थिति से की जा सकती है, जिसमें एक वेला के 'प' तार को खींचने से पास रखे हुए दूसरे वेला में आवाज़ होती है। दूसरे वेला का 'प' तार भी कम्पन करेगा और ध्वनि पैदा करेगा बशर्ते कि दोनों वेला 'मिले हुए' या समस्वरित हों। होता यह है कि पहले वेला का तार ठीक लम्बाई और आवृत्ति की ध्वनि-तरंगें पैदा करता है और जिससे दूसरे वेला का तार कम्पन करने लगता है।

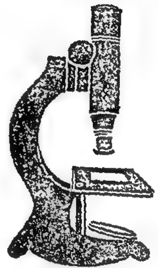
रेडियो-सेट में यह होता है कि नॉब या खूंटी को घुमाने से रेडियो के अन्दर इलेक्ट्रान मार्ग लम्बा या छोटा हो जाता है। रिसीवर के पास के अनेक रेडियो स्टेशन रिसीवर के ऐण्टेना या एरियल में इलेक्ट्रानों को आगे-पीछे चलाते हैं। प्रत्येक रेडियो स्टेशन एक भिन्न फ्रीक्वेंसी पर ब्राडकास्ट कर रहा है। इसलिए इलेक्ट्रान अलग-अलग फ्रीक्वेंसी पर आगे-पीछे चल रहे हैं। जब आप किसी रेडियो को ट्यून करते हैं, तब आप रेडियो में इलेक्ट्रान मार्ग की लम्बाई ठीक करते हैं, जिससे यह सिर्फ किसी एक फ्रीक्वेंसी पर आगे-पीछे चलनेवाले इलेक्ट्रानों को पकड़ सके। दूसरे शब्दों में, यदि आप ट्यूनिंग करके एक स्टेशन पकड़ते हैं तो और सब स्टेशनों को अपनी पकड़ से बाहर कर देते हैं।





अध्याय इक्कीस

प्रकाश



यह कोई आश्चर्य की बात नहीं कि प्रकाश विचारशील लोगों के लिए संसार की सबसे अधिक दिलचस्प चीजों में से एक रहा है, क्योंकि हम सबको प्रकाश का अनुभव होता है। प्रकाश न होने पर हमें बहुत बुरा मालूम होता है, क्योंकि तब हमें कुछ भी दिखाई नहीं देता; और जब प्रकाश होता है, तब हमारी आंखें हमें चारों ओर की दुनिया की प्रत्येक वस्तु का रूप, रंग और आकार बताती हैं।

प्रकाश बहुत दूर के तारों से विशाल आकाश को पार करता हुआ हमारी इस धरती पर पहुंचता है; और ज्योतिषियों की दूरबीनों और दूसरे उपकरणों के नाजुक लेंस और दर्पण दूर स्थित तारों का आकार, चाल, दूरी और यहां तक कि रासायनिक बनावट भी बताते हैं। दूसरी ओर, माइक्रोस्कोप या खुर्दबीन में प्रकाश कई लेंसों में से मुड़ता या वर्तित (रिफ्रैक्टेड) होता है, जिससे बैक्टीरिया या जीवाणुओं जैसी बहुत ही छोटी वस्तुओं की दुनिया बड़ी होकर दीखने लगती है। इस पुस्तक



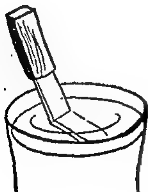




के पृष्ठों से परावर्तित या टकराकर लौटा हुआ प्रकाश पृष्ठों पर छपे हुए शब्दों का प्रतिबिंब आपकी आंखों में पहुंचता है। जब आपका मस्तिष्क शब्दों के इस प्रतिबिम्ब का अर्थ लगाता है, तब आपको पुस्तक का 'अर्थ' मालूम हो जाता है।

यह प्रकाश नाम की विचित्र वस्तु क्या है, जो हमें इस अपने चारों ओर मौजूद दुनिया को समझने में अनेक प्रकार से सहायता देती है ? अनेक शताब्दियों पहले लोग यह समझते थे कि प्रकाश हमारी आंखों से निकलनेवाली किरणें हैं। वे समझते थे कि प्रकाश के स्रोत की गर्मी या किसी अन्य गुण से ये किरणें हमारी आंखों में खिंच आती हैं। बाद में और लोगों ने यह कहा कि प्रकाश छोटे-छोटे कणों या कणिकाओं (कारपसल) की श्रेणी है जो प्रकाश के स्रोत से तेजी से निकलती हैं। एक विचार यह था कि प्रकाश एक कम्पनात्मक क्रिया है—प्रकाश के स्रोत और हमारी आंख के बीच का स्थान इस प्रकार कम्पन करता है कि प्रकाश का संवेदन हमारी आंख पर पहुंच जाता है। परन्तु प्रकाश, जैसाकि हम आगे चलकर देखेंगे, बहुत छोटी छोटी विद्युत् चुम्बकीय तरंगों की एक श्रेणी है—ये तरंगें रेडियो-तरंगों जैसी ही होती हैं—अन्तर इतना है कि ये बहुत छोटी होती हैं।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि



मिस्र के एक वैज्ञानिक क्लाडिअस टालेमी ने, जो ईसा की दूसरी शताब्दी में सिकन्दरिया में रहता था, प्रकाश के कुछ परीक्षण सबसे पहले किए थे। उसने देखा था कि जब प्रकाश पानी या कांच में से गुजरता है, तब वह मुड़ता-सा लगता है। पानी-भरे गिलास में एक चाकू डालकर आप स्वयं यह देख सकते हैं। यदि आप चाकू को एक विशेष कोण से देखें तो वह सचमुच मुड़ा हुआ लगेगा। आप जानते हैं कि वह मुड़ा हुआ नहीं है; और इसलिए आप निश्चयपूर्वक कह सकते हैं कि स्वयं

प्रकाश ही मुड़ा हुआ है। पर टालेमी यह विचित्र तथ्य देखकर ही चुप नहीं बैठ गया। उसने प्रकाश की क्रिया करने की रीति के बारे में कुछ सामान्य नियम निकाले।

फिर बारहवीं शताब्दी में अरब वैज्ञानिक अलहाज़ेन ने प्रकाश के बारे में बहुत-सी जानकारी प्रस्तुत की; यहां तक कि हमारे देखने की एक व्याख्या भी पेश की, अर्थात् यह बताया कि हमारी आंखें कैसे कार्य करती हैं। कुछ दशाब्दियों बाद सन् १२७६ में रॉजर बेकन नाम के अंग्रेज़ ने एक विशेष पुस्तक 'ओपस माजुस' लिखी जिसमें यह वर्णन था कि दूर की वस्तुओं को बड़ा करके देखने में कांच के लेंसों का प्रयोग कैसे किया जा सकता है। पर इस जानकारी का क्रियात्मक प्रयोग करने में ३०० वर्ष से भी अधिक लगे, क्योंकि सन् १६०० में जाकर इटालियन ज्योतिषी गैलीलियो ने अपनी पहली दूरबीन बनाई और ऐण्टन वान लीवेनहुक नामक डच द्वारा पहला माइक्रोस्कोप इसके भी प्रायः १०० वर्ष बाद बनाया गया।

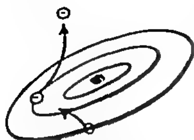

गैलीलियो

इधर और लोग यह समझने की कोशिश कर रहे थे कि प्रकाश एक स्थान से दूसरे स्थान पर कैसे पहुंच सकता है। अंग्रेज़ वैज्ञानिक सर आइज़क न्यूटन ने सन् १७०० के आसपास प्रकाश का 'कणिका सिद्धान्त' या कारपसल थ्योरी पेश की, जिससे उसका यह मतलब था कि प्रकाश बहुत छोटे-छोटे कणों का बना हुआ है। प्रकाश के स्रोत से निकलकर ये कण चलते हैं। क्रिस्चियन हुइगेन्स नामक डच ने प्रायः उसी समय यह विचार पेश किया कि प्रकाश कम्पनों द्वारा आकाश में उड़ता है।


लीवेनहुक

प्रकाश क्या है

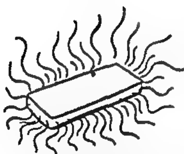
बिलकुल हाल में ही वैज्ञानिकों को यह पता चला है कि न तो न्यूटन का और न हुइगेन्स का विचार पूरी तरह सही था। उनमें से किसीका भी विचार पूरी तरह गलत भी नहीं था, क्योंकि प्रकाश कभी-कभी कणों की तरह व्यवहार करता है और कभी-कभी कम्पनों की तरह। वैज्ञानिक लोग प्रकाश को प्रायः



परमाणु में इलेक्ट्रानों के एक कक्षा से दूसरी में कूदने से प्रकाश पैदा होता है

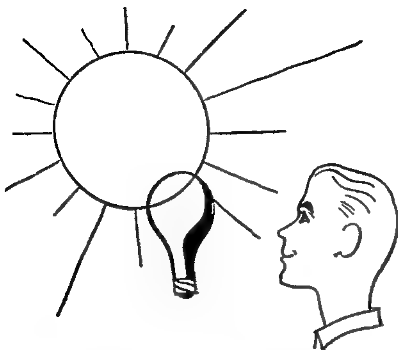
कम्पनात्मक समझते हैं, अर्थात् ये विद्युत् चुम्बकीय तरंगों की रेडियो तरंगों जैसी श्रेणी हैं। अन्तर यह है कि वे बहुत छोटी होती हैं और उनकी फ्रीक्वेंसी बहुत ऊंची होती है। पर ये तरंगें छोटे-छोटे विस्फोटों या गुच्छों के रूप में पैदा होती हैं (ये गुच्छे क्वाण्टा कहलाते हैं)। कभी-कभी तरंगों के गुच्छे कणों या फोटानों के रूप में व्यवहार करते हैं। इस प्रकार आप देखते हैं कि प्रकाश तरंग भी है और कण भी।

हम पहले पढ़ चुके हैं कि रेडियो तरंगें किसी ऐण्टेना में दिशा बदलनेवाले इलेक्ट्रानों की शीघ्र गति से पैदा होती हैं। कुछ-कुछ इसी प्रकार प्रकाश भी इलेक्ट्रान गति से पैदा होता है, पर यह इलेक्ट्रान गति स्वयं परमाणु के अन्दर होती है। उदाहरण के लिए, मान लीजिए कि एक लोहे का टुकड़ा गर्म करने पर सफेद-गर्म हो जाता है। वह तीव्र प्रकाश छोड़ता है। आपको याद होगा कि जब कोई वस्तु गर्म की जाती है, तब उस वस्तु के छटक परमाणु अधिकाधिक तेज गति में आ जाते हैं। जैसे-जैसे ये परमाणु अधिक तेज चलते हैं, वैसे ही वैसे उनके इलेक्ट्रान परमाणु नाभिकों के चारों ओर अधिकाधिक तेजी से चक्कर काटते हैं। उस समय एक विशेष बात होती है : एक भीतरी कक्षा के इलेक्ट्रान को चाल का एक विशेष धक्का मिलता है और वह अपनी कक्षा से बाहर निकल जाता है। प्रायः तुरन्त बाहरी कक्षा से एक और इलेक्ट्रान भीतरी कक्षा को पूरा करने के लिए अन्दर की ओर भागता है।



सफेद-गर्म लोहे के टुकड़े में बहुत सारे इलेक्ट्रान कक्षा से कूदते हैं

यह एक कक्षा से दूसरी में फुदकना बड़ी तेजी से किया जाता है। इलेक्ट्रान छोटी दूरियों को बड़ी तेज चाल से पार करते हैं, और जैसाकि आप जानते हैं, जब इलेक्ट्रान चलते हैं, तब विद्युत् चुम्बकीय तरंगें पैदा होती हैं। वे तरंगें बहुत छोटी होती हैं, क्योंकि इलेक्ट्रान कक्षाओं के बीच जो दूरी पार करते हैं, वह बहुत छोटी होती है। हम एक अकेली तरंग नहीं देख सकते और सफेद-गर्म लोहे में बहुत से इलेक्ट्रान कक्षाओं से फुदकते हैं। इस प्रकार लोहे से बहुत-सी तरंगें चलती हैं। हमारी आंखें प्रकाश के रूप में इन तरंगों को ही देखती हैं।

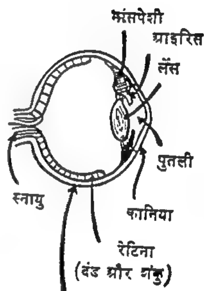


अध्याय बाईस

हम प्रकाश कैसे देखते हैं?

कान में ध्वनि-तरंगें एक झिल्ली को चलाती हैं, जो कुछ महीन रोमों में 'गुदगुदी या सरसराहट' करती है और मस्तिष्क इस 'गुदगुदी या सरसराहट' को ध्वनि समझता है। इसी प्रकार आंख में प्रकाश-तरंगें दंडों और शंकुओं की शक्ल के बहुत छोटे स्नायु-सिरों में गुदगुदी या सरसराहट करती हैं, और इस प्रकार उत्पन्न स्नायु-आवेगों को मस्तिष्क 'दृष्टि' समझता है।

आंख के गोले के पिछले हिस्से पर, जिसे रूपाधार या 'रेटिना' कहते हैं, लाखों छोटे-छोटे दंड और शंकु ढके रहते हैं, जो प्रकाश के प्रति सम्वेदक होते हैं। वे मिलकर मस्तिष्क को देखी हुई वस्तु के आकार, रूप और रंग के बारे में बताते हैं, पर वे तब ही ऐसा कर सकते हैं, जब उनपर वस्तु का स्पष्ट तीखा प्रतिबिंब पड़े। आंख का लेंस तीखा प्रतिबिंब बनाने का काम करता है।





लेंस एक पारदर्शक और लचीली झिल्ली से बना होता है, जो एक द्रव पदार्थ से भरी होती है। यह एक गोल मांसपेशी से

लटकता रहता है, जो लेंस का इस तरह फोकस या संगम करती रहती है कि रूपाधार पर तीखा प्रतिबिंब पड़े।

दूरबीन तथा माइक्रोस्कोप में फोकस करने के लिए लेंस को तब तक आगे-पीछे हटाते रहते हैं जब तक प्रतिबिंब इतना तीखा न हो जाए कि उसे आसानी से देखा जा सके। आप गोल मैगनीफाइंग ग्लास से, या पढ़ने के शीशे से, जो गोल कांच का बना होता है, थोड़ा-बहुत फोकस कर सकते हैं। कमरे में टेबल लैंप जलाकर बीच में खड़े हो जाइए और मैगनीफाइंग ग्लास को दीवार से परे कई फुट पकड़े रखिए।

मैगनीफाइंग ग्लास को धीरे-धीरे दीवार की ओर ले चलिए। अन्त में दीवार पर टेबल लैम्प का प्रतिबिंब फोसक में आ जाता है। आप देखेंगे कि प्रतिबिंब उलटा है—एक ही लेंस से बना हुआ प्रतिबिंब सदा उलटा होता है।

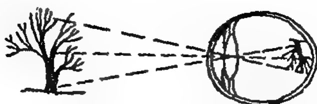


दूर की वस्तु देखते हुए लेंस पतला है

आंख की लेंसवाली मांसपेशी लगभग इसी तरह फोकस करती है, पर इसमें लेंस को मोटा या पतला करके फोकस किया जाता है। जब लेंस मोटा होता है, तब उसमें से गुज़रनेवाली प्रकाश-तरंगें या प्रकाश-किरणें अधिक मुड़ जाती हैं; जब लेंस पतला होता है, तब ये कम मुड़ती हैं। यह बात महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि इस प्रकार लेंस अपने-आपको दूर की और पास की वस्तुओं के लिए अनुकूल बना लेता है। उदाहरण के लिए, मान लीजिए कि आप प्रकाश का एक दूरस्थ बिन्दु देख रहे हैं। ऐसी अवस्था के लिए लेंस की मांसपेशी शिथिल पड़ जाएगी और लेंस को पतला हो जाने देगी। जब लेंस पतले रूप में आ जाता है, तब यह प्रकाश किरणों को इतना ही मोड़ता है कि आपके रूपाधार पर एक तीखा बिन्दु बन जाए। पर यदि आप किसी पास के प्रकाश-बिन्दु को देख रहे हैं तो पतला लेंस प्रकाश-किरणों को काफी नहीं मोड़ेगा और इससे बिन्दु फोकस या संगम के बाहर रहेगा। इससे बचने के लिए लेंस की मांसपेशी सिकुड़ती है और इस तरह लेंस अधिक मोटा हो जाता है। तब



पास की वस्तु देखते हुए लेंस मोटा है



लेंस रेटिना (रूपाधार) पर प्रतिबिंब बनाता है

मोटा लेंस किरणों को अधिक मोड़ता है और बिन्दु आपकी आंख के रूपाधार पर फोकस में आ जाता है।

रूपाधार पर प्रतिबिम्ब फोकस में आ जाने के बाद कुछ दंड और शंकु प्रकाशित हो जाएंगे और कुछ अप्रकाशित रहेंगे। जब आप प्रकाश के बिन्दु को देखते हैं तब अपेक्षाकृत थोड़े दंड और शंकु अधिक प्रकाशित होते हैं और उनके चारों ओरवाले दंड और शंकु प्रकाशहीन रहते हैं। प्रकाशित दंड और शंकु उद्दीपित होकर संदेश या स्नायु-आवेग मस्तिष्क को भेजते हैं। जो प्रकाशित हैं, वे मस्तिष्क को यह तथ्य सूचित करते हैं, और मस्तिष्क प्रकाशित दंडों और शंकुओं से प्राप्त सूचना को प्रकाश के एक छोटे वृत्त या घेरे के रूप में समझता है।

शायद आप सोचेंगे कि किसी दंड का शंकु पर पड़नेवाला तीव्र प्रकाश तीव्र स्नायु आवेग भेजेगा और निर्बल प्रकाश निर्बल आवेग पैदा करेगा, पर प्रत्येक स्नायु आवेग की तीव्रता समान होती है! पर हलका प्रकाश होने पर दंड या शंकु अपेक्षाकृत कम बार स्नायु आवेग भेजता है। प्रकाश जितना अधिक तीव्र होता है, उतनी ही अधिक बार दंड या शंकु स्नायु आवेग पैदा करता है।

ये स्नायु आवेग या संकेत योजक स्नायुओं द्वारा मस्तिष्क के दृष्टिकेन्द्र में पहुंचते हैं। दृष्टिकेन्द्र विशेष मस्तिष्क-कोशिकाओं (सेलों) का एक समूह है, जो दंडों और शंकुओं के संकेतों का अर्थ लगाती हैं, और उन्हें मिलाकर एक 'चित्र' के रूप में पेश करती हैं। जब कोई दंड या शंकु कभी-कभी संदेश भेज रहा

होता है, तब उस दंड या शंकु से जुड़ी हुई मस्तिष्क-कोशिकाओं को बहुत थोड़े संदेश प्राप्त हो रहे होते हैं। जब कोई दण्ड या शंकु बार-बार सन्देश भेजता है, तब उससे जुड़ी हुई मस्तिष्क-कोशिकाओं को बहुत-से सन्देश प्राप्त होते हैं।



अब इन मस्तिष्क-कोशिकाओं की तुलना छपे हुए पृष्ठ पर मौजूद बिन्दुओं से कीजिए। किसी अखबार में कोई चित्र देखिए। यदि आप बारीकी से देखें तो आपको पता चलेगा कि यह विभिन्न आकारों के बिन्दुओं से बना हुआ है। जहां बहुत सारे बड़े-बड़े बिन्दु होते हैं, वहां क्षेत्र काला है। जहां बिन्दु छोटे हैं, वहां यह सफेद होता है। जब आप चित्र से दूर खड़े होते हैं तब ये बिन्दु आपस में मिल जाते हैं। इसलिए आपको भिन्न-भिन्न सलेटी टोनों से बना हुआ चित्र ही दिखाई देता है। इसी प्रकार, दृष्टिकेन्द्र की मस्तिष्क-कोशिकाएं भिन्न-भिन्न मात्रा में उद्दीपित होकर बड़े या छोटे 'बिन्दु बनाती हैं'। दृष्टिकेन्द्र इन बिन्दुओं को मिलाकर प्रतिबिम्ब बना देता है, जो हम अपनी आंखों से देखते हैं।



तीव्र प्रकाश में आइरिस सिकुड़ गया है—पुतली छोटी है

दृष्टि की बद्धता

जब आप किसी प्रकाश की ओर देखते हैं और फिर उससे आंखें हटा लेते हैं, तब एक क्षण तक आपको प्रकाश 'दीखता' रहता है। इसका कारण यह है कि दण्ड और शंकुओं पर प्रकाश चमकना बन्द होते ही वे तुरन्त मस्तिष्क को सन्देश भेजना बन्द नहीं करते। प्रकाश से हट जाने पर भी वे 'प्रकाश' की सूचना देते रहते हैं। सामान्यतया यह बात एक सेकण्ड से भी बहुत कम देर तक होती है। इसे दृष्टि की बद्धता या बने रहना कहा जाता है, क्योंकि हमारी आंखें प्रकाश हट जाने के बाद भी 'देखती' रहती हैं। सिनेमा-चित्र या टेलीविजन का पर्दा देखते हुए यह बात हमारे लिए काफी महत्त्वपूर्ण होती है। और इसके बारे में हम आगे चलकर और जानकारी प्राप्त करेंगे।



हलके प्रकाश में आइरिस फैल गया है—पुतली बड़ी है

यदि प्रकाश बहुत तीव्र है तो दंड और शंकु प्रकाश से आपके

नजर हटा लेने के या अपनी आंखें बन्द कर लेने के बाद भी कई सेकंड तक अपने संदेश भेजते रहते हैं। तीव्र प्रकाश की ओर देखकर शायद आप कभी अस्थायी रूप से 'अन्धे' हुए हों। इससे सुख नहीं मिलता, बल्कि कुछ कष्ट ही हो सकता है।

आंख बहुत अधिक प्रकाश से अपने को बचाना चाहती है, और इसमें इस काम के लिए एक विशेष मांसपेशी होती है, जिसे 'आइरिस' कहते हैं। आइरिस आंख के गोले के सामनेवाले हिस्से में एक गोल मांसपेशी होता है, और इसके बीच में एक छेद होता है। यह छेद ही पुतली है। जब आप कहते हैं कि किसी आदमी की आंखें नीली या भूरी या काली हैं, तब आप उसकी आंख के आइरिस का ही वर्णन कर रहे होते हैं। जब प्रकाश तीव्र होता है, तब आइरिस सिकुड़ जाता है और पुतली छोटी हो जाती है। जब प्रकाश हलका होता है, तब यह फैल जाता है और पुतली बड़ी हो जाती है। पुतली बड़ी होने पर अधिक प्रकाश अंदर जा सकता है। धुंधले प्रकाश में एक दर्पण में देखकर और फिर तीव्र प्रकाश में दर्पण में देखकर आप अपनी आंखों में आइरिस की क्रिया की जांच कर सकते हैं। आप देखते हैं कि पुतली एकदम छोटी हो जाती है।

रंग

जब कोई लोहे का टुकड़ा क्रमशः अधिकाधिक गर्म किया जाता है, तब वह हलके लाल रंग से चमकने लगता है। शीघ्र ही यह चमकीला लाल हो जाता है; फिर नारंगी, पीला, नीला-सा सफेद हो जाता है। अन्त में, जब यह सफेद-गर्म हो जाता है तब इससे तीव्र सफेद प्रकाश निकलता है।

सिर्फ लाल तरंग दैर्घ्य (वेवलेंग्थ) परावर्तित होते हैं



इसे इस तरह समझा जा सकता है कि कक्षाओं से फुदकनेवाले बहुत-से इलेक्ट्रान लोहे के अधिकाधिक गर्म होने पर कम और कम दूरियां कूदते हैं। इन अधिकाधिक छोटी 'कूदों' से अधिकाधिक छोटी विद्युत् चुम्बकीय तरंगें पैदा होती हैं। आंख के कुछ शंकु सिर्फ बड़ी विद्युत् चुम्बकीय तरंगों पर अनुक्रिया

(रिस्पॉण्ड) करते हैं, और कुछ छोटी तरंगों पर। इस कारण कुछ शंकु लाल को 'देखते हैं' और कुछ नीले को 'देखते हैं'। वे मस्तिष्क को न केवल यह सूचित करते हैं कि उन्हें कितना अधिक या कम प्रकाश मिल रहा है, बल्कि वे यह भी सूचित करते हैं कि वह प्रकाश किस रंग का है। -

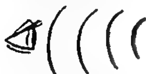
जब दृष्टिगम्य सारे रंग एकसाथ सूचित होते हैं, तब मस्तिष्क इसे 'सफेद' प्रकाश समझता है। इस प्रकार सफेद उन अनेक रंगों का सम्मिलित रूप है, जिन्हें 'शंकु' देख सकते हैं।

जब किसी सफेद वस्तु पर सफेद प्रकाश चमकता है, तब वह प्रायः सारा प्रकाश परावर्तित (रिफ्लेक्टेड) हो जाता है, जिससे वस्तु सफेद दिखाई देती है। पर यदि वस्तु लाल है तो रंग द्रव्य लाल को छोड़कर और सब तरंग-लम्बाइयों (वेवलेंग्यों) को चूस लेता है। सिर्फ लाल तरंगें परावर्तित होकर हमारी आंख पर आ पड़ती हैं, जिससे हमें वस्तु लाल लगती है।

किसी वस्तु का जो रंग द्रव्य परावर्तित प्रकाश से हमें दिखाई देता है, वह बहुत कुछ चलनी जैसा काम करता है। वह कुछ तरंग-लम्बाइयों को अपने में चला जाने देता है, पर अन्य तरंग-लम्बाइयों को पीछे लौटा देता है। काली वस्तु प्रकाश की प्रायः सारी तरंग-लम्बाइयों को अपने में से गुज़र जाने देती है। इसलिए बिलकुल भी प्रकाश परावर्तित नहीं होता; और हम कहते हैं कि उस वस्तु का कोई रंग नहीं है, या वह काली है।



रेडियो
रेडियो तरंगें पकड़ता है



आंख प्रकाश तरंगें पकड़ती है

गर्मी या ऊष्मा

ऊंचे ताप तक गर्म की हुई वस्तु प्रकाश ही नहीं छोड़ती; वह ऊष्मा भी छोड़ती है। जब आप आग के सामने खड़े होते हैं, तब इसके प्रकाश को देख सकते हैं, और इसकी ऊष्मा का अनुभव कर सकते हैं। ये दो भिन्न संवेदन इलेक्ट्रानों की गति से ही पैदा होते हैं। जैसाकि हम पहले कह चुके हैं, प्रकाश तब होता है जब इलेक्ट्रान बहुत थोड़ी दूरियां चलते हैं, या एक परमाणु-कक्षा से दूसरी परमाणु-कक्षा में पहुंचते हैं। जब इलेक्ट्रान कुछ

अधिक दूरी पार करते हैं, तब उनसे उत्पन्न विद्युत् चुम्बकीय तरंगें बड़ी होती हैं । ये बड़ी तरंगें ऊष्मा पर गर्मी का संवेदन पैदा करती हैं ।

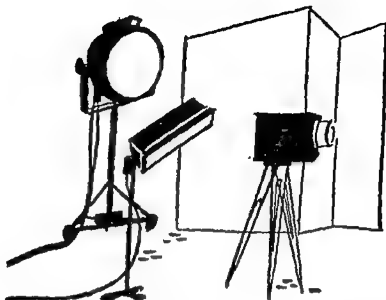
हम जान चुके हैं कि रेडियो तरंगें, ऊष्मा तरंगें और प्रकाश तरंगें सब की सब भिन्न-भिन्न लम्बाइयों की विद्युत् चुम्बकीय तरंगें होती हैं । रेडियो तरंगों को पकड़ने के लिए हमें रेडियो का प्रयोग करना पड़ता है । प्रकाश तरंगों पर हमारी आंखें अनुक्रिया करती हैं और हमारी त्वचा के कुछ स्नायु-सिरे ऊष्मा तरंगों पर अनुक्रिया करते हैं, जिससे हम ऊष्मा 'अनुभव' करते हैं ।



कुछ स्नायुएं
ऊष्मा तरंगें पकड़ती हैं

पर ऊष्मा तरंगें एक और भी क्रिया करती हैं । वे पास की वस्तुओं को गर्म कर देती हैं, अर्थात् वे अणु-सक्रियता बढ़ा देती हैं और इन पास की वस्तुओं के अणुओं को पहले से तेज़ चाल से चला देती हैं । वे यह क्रिया कुछ-कुछ उसी प्रकार पैदा करती हैं, जैसे रेडियो तरंगें आपके रेडियो के ऐण्टेना में इले-क्ट्रानों को आगे-पीछे चला देती हैं । जब वे किसी वस्तु से टकराती हैं, तब उस वस्तु के अणुओं की गति पहले से तेज़ कर देती हैं, जिससे वस्तु 'गर्म' हो जाती है ।



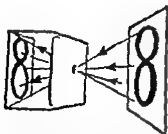


अध्याय तेईस

फोटोग्राफी

अलेक्जैण्डर ग्राहम बेल के मन में एक ऐसा यांत्रिक कान बनाने का विचार आया था जो ध्वनि से प्रतिक्रिया करे। इस विचार से टेलीफोन का आविष्कार हुआ। टामस अलवा एडिसन ध्वनि या संगीत का स्थायी अभिलेख बनाना चाहता था; और उसका परिणाम हुआ उसकी 'बोलनेवाली मशीन'। कुछ-कुछ इसी तरह गुजरी हुई शताब्दियों के लोगों ने मनुष्य की आंख का अध्ययन किया और सोचा कि क्या ऐसी यांत्रिक आंख नहीं बनाई जा सकती जोकि किसी दृश्य का स्थायी अंकन कर सके या चित्र बना सके।

यांत्रिक 'आंख' के, जिसे हम कैमरा कहते हैं, बुनियादी सिद्धान्त एक अरब वैज्ञानिक अलहाज़ेन ने बारहवीं शताब्दी में ही प्रस्तुत कर दिए थे। यह माना जाता है कि बैटिस्टा पोर्टा ने सन् १५५३ में पहला कैमरा बनाया, पर यह बड़ी अनगढ़ भद्दी-सी चीज थी, जो किसी चपटे तल पर किसी दृश्य का छोटा-सा प्रतिबिंब-मात्र बनाती थी। उस समय फोटोग्राफिक फिल्म जैसी चीज तो थी ही नहीं, जिसका प्रयोग करके दृश्य का स्थायी अंकन किया जा सके।



पहले कैमरे में एक चपटे तल पर सिर्फ एक प्रतिबिंब आता था उसमें चित्र नहीं बनता था

सन् १८२२ से पहले तक फोटोग्राफी की रासायनिक क्रियाओं में इतना सुधार नहीं हुआ था कि सफल फोटो खींचे जा सकें। तब भी सबसे पहला फोटोग्राफ बहुत घटिया-सा था, पर इसे बनाने में कई घंटे लग गए थे। तो भी पहला फोटोग्राफ बनानेवाला जे० एन० न्येप्स नाम का फ्रांसीसी अपने बहुत वर्षों के परीक्षण और कार्य की इतनी सफलता पर बड़ा प्रसन्न हुआ था। यह एक महत्त्वपूर्ण कार्य का आरम्भ था।

कुछ वर्ष बाद एक और फ्रांसीसी लुई जे० एम० डैगर ने फोटोग्राफी में प्रयुक्त रासायनिक प्रक्रम में कई सुधार किए। सन् १८२६ में न्येप्स और डैगर ने साझा कर लिया। दस वर्ष तक कठिन परिश्रम करने के बाद सन् १८३६ में उन्होंने पहली काफी अच्छी फोटोग्राफिक विधि निकाल ली। आजकल प्रयोग में आनेवाले फिल्म और पेपर के स्थान पर उन्होंने धातु की चादरों पर फोटो बनाए। ये फोटो (डैगर के नाम पर) 'डैगरो टाइप' या 'टिन टाइप' कहलाते थे।

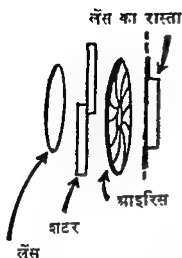


डैगर

यह फोटोग्राफिक प्रक्रम अब भी बड़ा झंझट का और धीरे-धीरे होनेवाला था और दूसरे लोग फोटो खींचने के और-और अच्छे तरीके खोज रहे थे। इंग्लैंड में टैलबट ने सन् १८३६ में ही रासायनिक द्रव्य से निकले हुए कागज पर फोटो खींचने का एक तरीका निकाला था। अगले कुछ वर्षों में इस प्रक्रम में सुधार किया गया, पर अब भी यह पूरी तरह सन्तोषजनक नहीं बना। फिर सन् १८८६ में संयुक्त राज्य अमेरिका के जार्ज ईस्टमैन ने एक लचीली और पारदर्शक फोटोग्राफिक फिल्म बनाई, जो बहुत कुछ आज प्रयोग में आनेवाली फिल्म जैसी ही थी। इस फिल्म को कैमरे में ऐक्सपोजर के बाद कुछ रासायनिक प्रक्रमों से डिवेलप (परिस्फुट) किया जा सकता है। अन्त में फिल्म से फोटोग्राफिक कागज पर चित्र के प्रिंट या कापियां बनाई जा सकती हैं। इन प्रक्रमों के विवरण पर विचार करने से पहले हम कैमरे के कार्य करने के ढंग की चर्चा करेंगे।



टिनटाइप

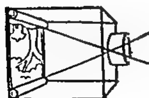


कैमरा–आइरिस खुला है



कैमरा–आइरिस बंद है





फिल्म रेटिना (रूपाधार) है

कैमरा

फोटोग्राफिक कैमरे की बनावट और कार्य करने का तरीका मनुष्य की आंख से इतना अधिक सादृश्य रखता है कि देखकर आश्चर्य होता है। आंख में 'आइरिस', लेंस, रूपाधार (रेटिना) और पलक होती है, जिसे बन्द करके प्रकाश का आना रोका जा सकता है। कैमरे में भी एक आइरिस, लेंस, 'रेटिना' और 'पलक' होती है।

कैमरे में आइरिस वही कार्य करता है जो आइरिस आंख में करता है। दोनों प्रकाश आने के छेद का आकार घटाते-बढ़ाते हैं। जब प्रकाश काफी होता है, तब आंख का आइरिस सिकुड़कर पुतली को छोटा कर देता है, जिससे आंख में कम प्रकाश आ पाता है। इसी प्रकार कैमरे के आइरिस को कम प्रकाश आने देने के लिए, फोटोग्राफरों की भाषा में, 'स्टाप डाउन' किया जा सकता है।

कैमरे की 'पलक' शटर है, जिसे खोला और बंद किया जा सकता है। जब यह खुला होता है, तब प्रकाश कैमरे में जाता है। सामान्यतया चित्र खींचते समय एक सेकंड के बहुत थोड़े हिस्से के लिए ही शटर खोलना चाहिए। यदि यह बहुत देर खुला रह जाए तो कैमरे के रूपाधार पर बहुत अधिक प्रकाश पड़ जाता है। ऐसा होने पर चित्र 'ओवर-ऐक्सपोज़र' या अधिक ऐक्सपोज़र के कारण खराब हो जाएगा। इसके बारे में आगे हम और बातें बताएंगे।

कैमरे का लेंस कांच का होता है और उसे कैमरे के पिछले भाग से, जहां रूपाधार होता है, पास या दूर सरकाकर उचित स्थान पर लाया जा सकता है। उचित स्थान पर लाने का यह काम 'फोकसिंग' या संगमन कहलाता है। ठीक-ठीक फोकस किए हुए कैमरे में जिस दृश्य का फोटो लिया जा रहा है, लेंस उसका तीखा-स्पष्ट प्रतिबिंब कैमरे के रूपाधार पर डालता है।

कैमरे में रूपाधार फोटोग्राफिक फिल्म है और आंख के रूपाधार की तरह वह भी प्रकाश की संवेदी है। यह फिल्म एक

पारदर्शक प्लास्टिक की बनी होती है, जिसपर जिलेटिन चढ़ा रहता है। जिलेटिन में चांदी और ब्रोमीन के बने हुए एक रासायनिक यौगिक सिलवर (चांदी) ब्रोमाइड के बहुत सारे सूक्ष्म कण होते हैं। फिल्म के प्रत्येक वर्ग इंच पर ये लाखों सूक्ष्म कण होते हैं। जब इनमें से किसी एक पर प्रकाश पड़ता है, तब सिलवर ब्रोमाइड के कुछ अणु टूटकर ब्रोमीन और चांदी के परमाणुओं के रूप में आ जाते हैं। यदि प्रकाश हलका होता है तो सिर्फ थोड़े-से अणु टूटते हैं, पर यदि प्रकाश तीव्र होता है तो बहुत सारे अणु टूट जाते हैं।

कैमरे में फिल्म को प्रकाश में खुला रखने के बाद उसे कैमरे से निकालकर एक डिवेलपिंग घोल में रखा जाता है। यह केमिकल चांदी के परमाणुओं को फिल्म पर फिक्स्ड (स्थिर) कर देता है, अर्थात् पक्के तौर से जमा देता है। इसके बाद फिल्म को 'हाइपो' के घोल में धोया जाता है, जिससे सिलवर ब्रोमाइड के कोई अनटूटे अणु हों तो वे हट जाते हैं। इसके बाद सिर्फ चांदी के परमाणु रह जाते हैं। अन्त में फिल्म को साफ पानी में धोकर सुखा लिया जाता है।



अब फिल्म पर जहां तीव्र प्रकाश पड़ा है, वहां वह बहुत काली है; और जहां हलका प्रकाश पड़ा है, वहां वह पारदर्शक है। सुपर-माइक्रोस्कोप, अर्थात् असाधारण प्रकार के माइक्रोस्कोप से काले क्षेत्र चांदी के परमाणुओं के बड़े समुदाय दिखाई देंगे। जिस दृश्य का फोटो लिया गया है, उसके प्रकाशमान हिस्से फिल्म पर बहुत काले दिखाई देते हैं, और अपेक्षतया काले हिस्से सफेद दिखाई देते हैं। इसलिए फिल्म को 'नेगेटिव' या 'उलट' कहते हैं। इसपर प्रत्येक चीज मूल दृश्य की उलटी या नेगेटिव है।

नेगेटिव से फोटोग्राफिक कागज़ का प्रयोग करके प्रिंट बनाए जाते हैं। इस कागज़ पर वही रसायन चढ़ा रहता है जो फोटोग्राफिक फिल्म पर होता है। नेगेटिव फिल्म इस कागज़ के ऊपर रख दी जाती है, और उसपर तीव्र प्रकाश डाला जाता है। जहां नेगेटिव काला है, वहां से बहुत कम प्रकाश अन्दर जा पाता है।



जहां नेगेटिव पारदर्शक है वहां से बहुत-सा प्रकाश अंदर चला जाता है। प्रकाश की इस कमी और अधिकता से कागज़ पर लगे हुए सिलवर ब्रोमाइड अणुओं से चांदी के परमाणुओं की कम-अधिक मात्राएं टूटकर अलग होती हैं। इसके बाद इस कागज़ को केमिकल घोलों में डालने के बाद काले और सफेद क्षेत्र ठीक स्थान पर दिखाई देते हैं, जिससे असली दृश्य का चित्र बन जाता है।



और तैयार प्रिंट ऐसा लगता है

अंडर एक्सपोज़्ड नेगेटिव से बनाया गया प्रिंट



ओवर एक्सपोज़्ड नेगेटिव से बनाया गया प्रिंट



अपना फोटो खिचवाना

यदि आप फोटोग्राफर की दुकान पर अपनी फोटो खिचवाने जाएं, तो वह आपको अपने कैमरे के सामने बिठाएगा। फिर वह कुछ बल्ब जलाएगा, कैमरे में से आपको देखेगा, और कैमरे को ठीक-ठाक करेगा। अन्त में वह कैमरे का शटर बन्द कर देगा, कैमरे में फिल्म चढ़ाएगा और आपसे क्षण-भर स्थिर बैठने और मुस्कराने के लिए कहेगा, और इसके बाद वह आपका चित्र खींच लेगा।

कैमरा ठीक-ठाक करते हुए वह तीन बातें करता है। आपका प्रतिबिम्ब तीखे फोकस में लाने के लिए वह लेंस को आगे-पीछे सरकाता है। इसके बाद वह आइरिस को ठीक-ठाक करता है जिससे प्रकाश की उचित मात्रा कैमरे में आए। अन्त में, वह शटर की चाल ठीक करता है, जिससे शटर उचित समय तक ही खुला रहे। इससे फिल्म प्रकाश में ठीक समय तक ही खुली रहती है, और इसका बड़ा महत्त्व है। यदि ऐक्सपोजर बहुत लम्बा हो जाए, तो फिल्म ओवर-ऐक्सपोज़ हो जाएगी; अर्थात् इतना अधिक प्रकाश अन्दर आ जाएगा कि फिल्म पर चढ़े हुए सिलवर ब्रोमाइड के अधिकतर अणु टूट जाएंगे। इससे फिल्म पर चांदी के इतने सारे अणु आ जाते हैं कि वह सारा बहुत काला हो जाता है और इसके प्रिंट बहुत हलके होंगे। यदि शटर बहुत ही थोड़ी देर खुला रहे, तो फिल्म अण्डर-एक्सपोज़ या कम एक्सपोज होगी और चांदी के काफी अणु फिल्म पर नहीं होंगे और सारी फिल्म प्राय: पारदर्शक होगी, जिससे बहुत गहरे प्रिंट बनेंगे।

फोटोग्राफर आपका चित्र खींच लेने के बाद फिल्म को धोता है और उससे प्रिंट बनाता है। आपका चित्र खींचे जाने के समय आप जैसे लगते थे, उसका स्थायी अंकन इन फोटुओं में होता है। सन् २००० में आपके पोते अपने मित्रों को ये चित्र दिखा सकते हैं और कह सकते हैं, "हमारे दादा-दादी जवानी में ऐसे लगते थे !"

बिल्कुल ठीक



रंगीन फोटोग्राफी

आपने स्वाभाविक रंग के चित्र देखे होंगे और यह देखकर आश्चर्य किया होगा कि फोटोग्राफिक फिल्म कितना सौंदर्य पकड़ सकती है। रंगीन फिल्म इसे जैसे पकड़ती है, वह भी आश्चर्यजनक है। रंगीन फिल्म ऊपर बताई गई काली और सफेद फिल्म जैसी ही होती है। पर इसपर एक की जगह जिलेटिन की तीन तहें होती हैं। प्रत्येक तह में सिल्वर ब्रोमाइड के बहुत सारे कण होते हैं। पहली तह नीले प्रकाश की, दूसरी तह हरे प्रकाश की और तीसरी तह लाल प्रकाश की संवेदी होती है। जब यह फिल्म कैमरे में ऐक्सपोज की जाती है और फिर डिवेलप की जाती है, तब तीनों प्रतिबिम्बों के रूप में आ जाती हैं, जिनमें से एक-दूसरी के ऊपर होती हैं। पहली तह नीली, दूसरी हरी और तीसरी लाल होती है।

जब नेगेटिव में से प्रकाश अन्दर जाता है, तब तीनों प्रतिबिंब मिलकर वह रंगीन चित्र बनाते हैं, जो आप देखते हैं। रंगीन नेगेटिव से उसी तरह प्रिंट बनाए जा सकते हैं, जैसे काले-सफेद नेगेटिव से। रंगीन प्रिंट बनाने में एक विशेष फोटोग्राफी पेपर की जरूरत होती है। इस पेपर पर रंगीन नेगेटिव की तरह जिलेटिन की तीन तहें होती हैं। जब नेगेटिव से प्रिंट बनाते हैं तब उसे कागज़ के ऊपर रखकर तीव्र प्रकाश करते हैं। इसके बाद प्रिंट पेपर को केमिकलों से धोया जाता है; और प्रिंट पेपर की तीन तहें नेगेटिव के रंग पकड़ लेती हैं।

लाल तह

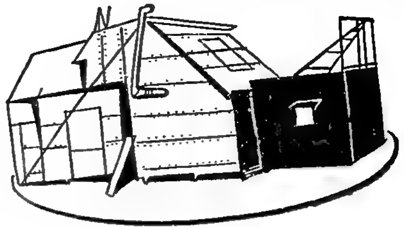
हरी तह

नीली तह

फिल्म बेस

रंगीन फिल्म
बहुत बड़े रूप में—
क्रास सेक्शन (काट)

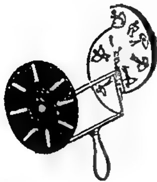
पहला चलचित्र स्टूडियो



अध्याय चौबीस

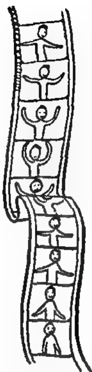
चलचित्र

जब आप सिनेमाघर में चित्र देखने जाते हैं, तब आप इस बात पर विचार नहीं करते कि चित्र कैसे 'चलते हैं'; और वे कौन लोग थे, जिन्होंने चित्रों को चलाने की रीति निकाली। चलते-फिरते चित्रों का आविष्कार करने का श्रेय टामस अलवा एडिसन को दिया जाता है, पर एडिसन स्वयं सबसे पहले यह स्वीकार करता है कि उससे पहले के बहुत सारे लोगों को भी इसका श्रेय मिलना चाहिए। एडिसन के समय से बहुत पहले, जैसाकि हमने अध्याय इक्कीस से तेईस तक बताया था, लोग प्रकाश, मनुष्य की आंख और कैमरे का अध्ययन कर रहे थे। और इसकी उत्पादन-विधि और प्रयोग सीख रहे थे।



मनुष्य की आंख का शुरू में अध्ययन करनेवालों में एक व्यक्ति का कार्य चलचित्रों के निर्माण में विशेष महत्त्वपूर्ण रहा और वह था एक अंग्रेज पीटर मार्क रोजा। उसने सन् १८२४ में दृष्टि की बद्धता के बारे में कुछ मनोरंजक तथ्य बनाए। कुछ वर्ष बाद बैल्जियम में डा० जोसेफ ऐण्टायन प्लेटम ने और वियेना में डा० साइमन वान स्टॉम्फर ने अपने बनाए हुए कुछ साधनों में दृष्टि की बद्धता का उपयोग किया। ये साधन कुछ पटरियां थीं, जिनपर छोटी-छोटी तस्वीरें बनी हुई थीं। जब इन पटरियों

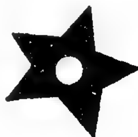
को घुमाया जाता था, तब चित्र ऐसे मिले हुए लगते थे कि चलता हुआ चित्र बन जाता था। सन् १८६० में यूनाइटेड स्टेट्स में कोलमैन सेलर्स ने एक ऐसा ही यन्त्र बनाया, पर उसने बनावटी चित्रों के स्थान पर अपने पुत्र के कील गाड़ते समय के चित्रों की एक शृंखला का प्रयोग किया।



इन यंत्रों से कुछ क्षण का कार्य-व्यापार ही दीख सकता था, क्योंकि एक घूमती हुई पटरी पर बहुत-से चित्र नहीं आ सकते थे। एडिसन की समझ में आया कि लम्बी व्यापार-शृंखला दिखाने के लिए चित्रों की लम्बी पट्टी की आवश्यकता है। जब ईस्टमैन ने सन् १८८६ में अपनी फोटोग्राफिक फिल्म उत्तम रूप में तैयार कर ली, तब उसने एडिसन को एक ऐसी चीज़ दी जिससे लम्बी पट्टी बनाई जा सकती थी, जिसमें बहुत-से चित्र आ सकें। एडिसन ने अपने चलचित्र कैमरे में इस फिल्म का उपयोग किया और उसने स्थिर चित्रों की शृंखला पर्दे पर डालने के लिए उसके पीछे तीव्र प्रकाश रखा। वे चित्र मिलकर इकट्ठे हो गए। उसमें गति और कार्य-व्यापार हुआ। इस प्रकार एक नये उद्योग, अर्थात् चलचित्रों का जन्म हुआ।

चित्र कैसे चलते हैं

पर गतिहीन या स्थिर चित्रों की श्रेणी को पर्दे पर इस तरह कैसे मिलाया जा सकता है कि चलचित्र बन जाएं? इसे समझने के लिए हमें सबसे पहले यह याद रखना चाहिए कि हमारी आंखों को एक विशेष आदत है, जिसे दृष्टिबद्धता कहा जाता है, जिसके कारण आंखें किसी प्रकाश को इसके बुझ जाने के बाद भी क्षण-भर देखती रहती हैं।



आप इस पृष्ठ पर दिए हुए तारे के केन्द्रवर्ती बिन्दु पर कुछ सेकंड तक लगातार सीधे ताकते रहकर स्वयं इस बात की जांच कर सकते हैं। इसकी ओर देखने के बाद अपनी नज़र हटाकर दीवार पर ले जाइए और अपनी आंखों को जल्दी-जल्दी



झपकाइए। आपको कुछ क्षण तक तारा 'दीखता रहेगा'।

कुछ-कुछ इसी तरह, जब कोई अचल चित्र पर्दे पर डाला जाता है, और फिर एकाएक प्रकाश बन्द कर दिया जाता है, तब आंखें एक सेकंड के कुछ हिस्से तक इसे फिर भी 'देखती' रहती हैं। यदि इसी बीच एक-दूसरा अचल चित्र पर्दे पर लाया जाए, तो आंखों को यह चेत नहीं होगा कि पर्दा क्षण-भर के लिए अंधेरा कर दिया गया है। मान लीजिए कि पहले चित्र में एक गेंद हवा में उड़ती दिखाई गई है। यह अभी खिलाड़ी के हाथों से चली है। दूसरे चित्र में इसे अपने रास्ते पर एक या दो इंच आगे दिखाया गया है। फिर एक तीसरे चित्र में कुछ और आगे दिखाया गया है। एक के बाद दूसरा चित्र तेज़ी से आता-जाता है और प्रत्येक चित्र में गेंद पहलेवाले चित्र की अपेक्षा कुछ आगे दिखाई देती है। दो चित्रों के बीच के अंधेरेवाले समय में दृष्टि की बद्धता के कारण आंखों को गेंद तेज़ी से टोकरी की ओर जाती हुई और अन्त में टोकरी में पहुंचती हुई मालूम होती है बशर्ते कि 'शॉट' अच्छा लिया गया हो।

चित्र एक-दूसरे के बाद बड़ी तेज़ी से आते हैं। एक सेकंड में २४ चित्र एक-दूसरे के बाद पर्दे पर आते रहते हैं। प्रत्येक चित्र पर्दे पर इतनी थोड़ी देर रहता है और वे एक-दूसरे के बाद इतनी जल्दी आते हैं कि आंखें अलग-अलग चित्रों में भेद नहीं कर सकतीं। आंखों में ये सब मिलकर सचमुच चलते-फिरते चित्रों का प्रभाव पैदा करते हैं।

मूवी या चलचित्र बनाना

नाटक के अनुसार नायक को अपना हाथ अपने सिर तक उठाना है। प्रकाश कर दिया जाता है और कैमरा नायक पर फोकस कर दिया जाता है। डायरेक्टर के संकेत पर कैमरा कार्य करने लगता है और नायक अपना हाथ अपने सिर की ओर उठाने लगता है।

कैमरे में यह प्रतिक्रिया होती है : फिल्म की पट्टी लगभग एक इंच आगे बढ़ती है और कैमरे का शटर तेज़ी से खुलता है और बंद हो जाता है। लगभग ५/८ इंच चौड़ा और ७/८ इंच लम्बा एक अचल चित्र खिंच गया है। फिल्म को तेज़ी से खींचा जाता है, जिससे वह एक इंच और चल लेती है। शटर फिर खुलता और बंद होता है, और दूसरा चित्र ले लेता है। यही बात एक सेकंड में २४ बार होती है। हर बार शटर इतनी जल्दी खुलता और बंद होता है कि क्रिया 'रुक जाती है'; दूसरे शब्दों में खींचा गया चित्र अचल होता है।



जिन चित्रों से मूवी बनती है, उनमें से प्रत्येक का असली आकार यह है

प्रत्येक बादवाले चित्र में नायक का हाथ पहले से कुछ ऊंचा दिखाई देता है। पहले में यह नीचे है, दूसरे में इंच के कुछ भाग तक ऊपर उठा हुआ है, तीसरे में यह और भी ऊंचा है। सब मिलाकर सिर तक चलते हुए हाथ की सारी क्रिया दिखाने के लिए ५० चित्र होंगे। जब फिल्म की वह पट्टी डिवेलप की जाती है और मूवी प्रोजेक्टर में चलाई जाती है, तब आंख की दृष्टिबद्धता अचल चित्रों के क्रम को मिलाकर चलचित्र बना देती है।



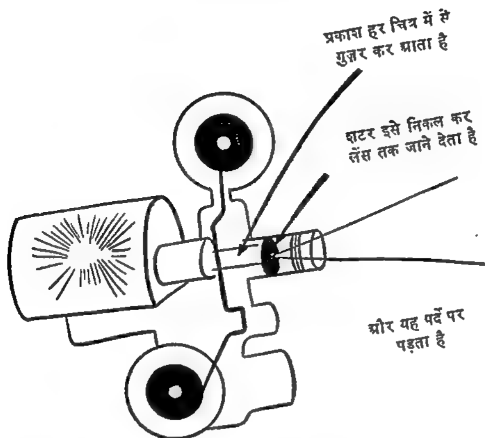
कुछ चौड़े पर्दे वाली मूवी इस आकार के चित्र बनाती है

वास्तव में मूल फिल्म प्रोजेक्टर में नहीं चलाई जाती। फिल्म की और पट्टियों पर इस फिल्म के प्रिंट उसी तरह बना लिए जाते हैं, जिस तरह नेगेटिव से फोटोग्राफिक प्रिंट बनाए जाते हैं। फिर ये प्रिंट सिनेमाघरों को भेज दिए जाते हैं। एक ही मूल फिल्म से सैकड़ों फिल्में बनाई जा सकती हैं, जिससे वही सिनेमाचित्र एक ही समय अनेक स्थानों पर दिखाया जा सकता है।

प्रोजेक्टर

जब फिल्म प्रोजेक्टर में चलाई जाती है, तब प्रत्येक अचल चित्र एक तीव्र प्रकाश के सामने आता है और एक शटर जल्दी-जल्दी बंद होता है और खुलता है। इस प्रकार प्रकाश चित्र में से

गुजरता है और सिनेमा के पर्दे पर इसका प्रतिबिंब फेंकता है। इस प्रकार प्रत्येक सेकंड में २४ चित्र पर्दे पर डाले जाते हैं, पर आंखें उन्हें मिलाकर एक चलता हुआ चित्र बना देती हैं।



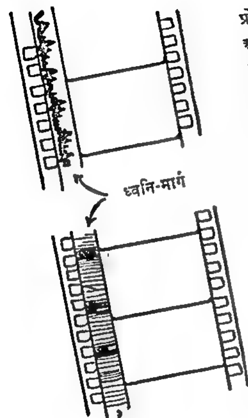


अध्याय पच्चीस

सवाक् चलचित्र

टामस अलवा एडिसन एक विलक्षण पुरुष था। उसने न केवल पर्दे पर चित्रों के चलने का विचार पेश किया, बल्कि उनके 'बोलने' का भी सुझाव रखा। सन् १८९० में उसने अपने चलचित्र प्रोजेक्टर को अपनी बोलनेवाली मशीन से जोड़कर बोलनेवाले चलचित्र का निर्माण किया, पर बोलनेवाली मशीन या ग्रामोफोन से बहुत हलकी ध्वनि पैदा होती थी। ऐम्प्लीफाइंग इलेक्ट्रान ट्यूब का आविष्कार भी नहीं हुआ था। इसलिए, यद्यपि चलचित्र इतना बड़ा बनाया जा सकता था कि बहुत-से लोग इसे देख सकें तो भी ध्वनि इतनी हलकी होती थी कि सिर्फ थोड़े-से लोग इसे सुन सकते थे। बोलनेवाले चित्रों की उन्नति आगे अनेक वर्ष तक रुकी रही और इलेक्ट्रान ट्यूबें अच्छी किस्म की बन जाने पर ही उनकी आगे उन्नति हुई।

पर अन्त में लोगों ने ध्वनि का फोटोग्राफिक रिकार्ड बनाने का तरीका निकाल लिया। यह रिकार्ड सिनेमाघर में चित्र में दिखाने के समय बजाया जाता है और उससे उत्पन्न ध्वनि को प्रवर्धित कर दिया जाता है, जिससे दर्शक न केवल चलचित्र देखते हैं बल्कि पात्रों की बात भी सुनते हैं।



ध्वनि का फोटोग्राफिक रिकार्ड बनाना

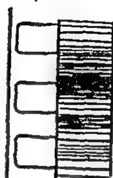
यदि आप फिल्म की वह पट्टी देखें जिसे सिनेमाघर के प्रोजेक्टर पर चलाकर बोलते हुए चित्र बनाए जाते हैं, तो आपको अचल चित्रों की एक श्रेणी दिखाई देगी। इन चित्रों से पर्दे पर चलचित्र बनते हैं। फिल्म के एक किनारे के पास आपको एक संकरी पट्टी भी दिखाई देगी, जिसमें या तो एक तरंगवत् या टेढ़ी-मेढ़ी रेखा होगी और या काले या सफेद क्षेत्र होंगे। यह संकरी पट्टी 'ध्वनि-मार्ग' (साउंड ट्रैक) कहलाती है और यह असल में सिनेमा-थिएटर में सुनाई देनेवाले भाषण, संगीत और अन्य ध्वनियों का अभंग फोटोग्राफ है।

जब कोई चलचित्र बनाया जाता है, तब आंख से दीखनेवाली क्रिया का फोटो खींचा जाता है और उसी समय अभिनेताओं के बोले हुए शब्दों का भी 'फोटो' खींचा जाता है। यह ध्वनि फोटोग्राफिक ध्वनि को प्रकाश में बदलकर और फिर फिल्म के ध्वनि-मार्ग में से प्रकाश गुजारकर की जाती है।

ध्वनि को विशेष इलेक्ट्रान ट्यूबों की एक श्रेणी द्वारा प्रकाश में बदला जाता है। पहले एक माइक्रोफोन ध्वनि को पकड़ता है और उसे बिजली के आवेगों में बदल देता है। यह वही बात है जो टेलीफोन में होती है। इन आवेगों को इलेक्ट्रान ट्यूबों में प्रवधित किया जाता है और फिर बिजली के विशेष लट्टू में से भेजा जाता है। यह लट्टू वैसा नहीं होता जिसे आप घरों में जलाते हैं, बल्कि एक ट्यूब होती है जिसका चमकीलापन बहुत थोड़े समय में बहुत अधिक घटता-बढ़ता अर्थात् परिवर्तित हो सकता है। यह एक सेकंड के कुछ लाखवें हिस्से में चमकीले से धुंधला और धुंधले से फिर चमकीला हो सकता है।

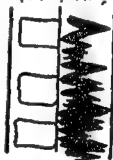
इस प्रकार ध्वनि को विद्युत्-आवेगों में और फिर प्रकाश-आवेगों में बदला जाता है। तीव्र ध्वनि से तीव्र प्रकाश पैदा होगा और हलकी ध्वनि से हलका प्रकाश पैदा होगा। जब भिन्न-भिन्न तीव्रता का यह प्रकाश फिल्म के ध्वनि-मार्ग पर पड़ता है, तब चांदी के

परमाणुओं की भिन्न-भिन्न संख्या दिखाई देती है। यह वही क्रिया है, जो फोटो बनाते समय होती है। चांदी के परमाणु इसलिए बनते हैं, क्योंकि प्रकाश की क्रिया से सिलवर ब्रोमाइड के अणु टूट जाते हैं।



वेरिएबल डेंसिटी ट्रैक

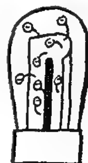
फिल्म को डिवेलप कर लेने के बाद ध्वनि-मार्ग मूल ध्वनि के ऊंचा या हलका होने के अनुसार सफेद या काला होगा। एक हिस्सा काला होगा, जो ऊंची ध्वनि को सूचित करता है; दूसरा सफेद होगा, जो हलकी ध्वनि का सूचक है। जब ध्वनि-मार्ग चलचित्र प्रोजेक्टर में से गुज़रता है, तब नीचे बताई गई रीति से ध्वनि फिर पैदा हो जाती है। तब दर्शकों में बैठने पर आप बाजा बजने की और अभिनेताओं के बोलने की आवाज़ सुनते हैं।



वेरिएबल एरिया ट्रैक

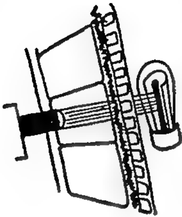
जिस तरह के ध्वनि-मार्ग का अभी वर्णन किया गया है उसे परिवर्ती घनत्व मार्ग या वेरिएबल डेन्सिटी ट्रैक कहा जाता है, क्योंकि यह पारदर्शक से बदलते-बदलते बहुत काले या घने तक पहुंचता है। एक और तरह का भी ध्वनि-मार्ग होता है जिसमें टेढ़ी-मेढ़ी या तरंगवत् रेखा होती है। इसे परिवर्ती क्षेत्र मार्ग या वेरिएबल एरिया ट्रैक कहते हैं, क्योंकि तरंगवत् रेखा से घिरा हुआ काला क्षेत्र बदलता रहता है। दोनों ध्वनि-मार्गों का चलचित्र प्रोजेक्टर में प्रयोग करने पर एक ही प्रभाव होता है।

ध्वनि का पुनः उत्पादन



फोटो ट्यूब, एक बहुत विशेष प्रकार की इलेक्ट्रान ट्यूब होती है, बोलचित्र प्रोजेक्टर का प्राण है। इसका काम है फिल्म के ध्वनि-मार्ग पर बने हुए ध्वनि के चित्रों को फिर ध्वनि में परिवर्तित करना। फोटो ट्यूब सारा काम नहीं करती, पर यह पहला महत्त्वपूर्ण कार्य कर देती है।

फोटो ट्यूब एक विशेष इलेक्ट्रान ट्यूब होती है, जिसमें दो भाग होते हैं—एक मुड़ी हुई धातु की चादर और मुड़ा हुआ धातु



का दण्ड। धातु की चादर पर कोई विशेप प्रकार का द्रव्य, जैसे सीज़ियम चढ़ा रहता है। इस द्रव्य पर प्रकाश पड़ने पर यह एक विचित्र क्रिया करता रहता है—यह इलेक्ट्रान छोड़ता है। उस द्रव्य के परमाणु अपने कुछ इलेक्ट्रानों को बहुत मज़बूती से नहीं पकड़े रहते। जब इन परमाणुओं पर प्रकाश पड़ता है, तब इलेक्ट्रान अलग हो जाते हैं। इसे 'प्रकाश-विद्युतीय प्रभाव' (फोटो इलेक्ट्रिक इफेक्ट) कहते हैं। इस प्रकार फोटो ट्यूब में मुक्त इलेक्ट्रान धातु-दण्ड पर पहुंच जाते हैं—दूसरे शब्दों में, बिजली धातु की चादर से धातु-दण्ड में बहने लगती है।

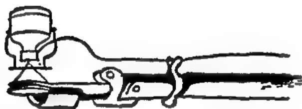
जब प्रकाश तीव्र होता है, तब बहुत-से इलेक्ट्रान दण्ड पर पहुंचते हैं; और जब प्रकाश हलका होता है, तब बहुत थोड़े इलेक्ट्रान वहां पहुंचते हैं। इस प्रकार बिजली का ऐसा प्रवाह पैदा हो जाता है, जिसकी तीव्रता प्रकाश की तीव्रता के परिवर्तन के साथ परिवर्तित होती जाती है।

बोलचित्र प्रोजेक्टर में फोटो ट्यूब फिल्म के ध्वनि-मार्ग के सामने रखी जाती है। ध्वनि-मार्ग के पीछे तीव्र प्रकाश रखा जाता है, जिससे प्रकाश मार्ग को पार करके फोटो ट्यूब में पहुंचता है। जब मार्ग काला होता है, तब उसमें से बहुत कम प्रकाश बाहर जाता है; पर जब मार्ग पारदर्शक होता है, तब तीव्र प्रकाश मार्ग को पार करके फोटो ट्यूब में पहुंचता है।

इस प्रकार ध्वनि-मार्ग के सफेद और काले क्षेत्रों से कम या अधिक तीव्रतावाले प्रकाश-आवेग पैदा हो जाते हैं, और ये घटते-बढ़ते प्रकाश-आवेग फोटो ट्यूब में जाकर कम-अधिक तीव्रतावाले विद्युत्-आवेगों में बदल जाते हैं। ये विद्युत्-आवेग इलेक्ट्रान ट्यूबों में, जो रेडियो में प्रयुक्त ऐम्प्लीफाइंग ट्यूबों जैसी होती हैं, प्रवर्धित होते हैं। अत्यधिक सबल होकर ये विद्युत्-आवेग अन्त में एक लाउडस्पीकर में से गुज़रते हैं, जो उन्हें ध्वनि में बदल देता है।

निश्चय ही यह एक मुग्धकारी प्रक्रम है। जब स्टूडियो में

अभिनेता कहता है 'नमस्कार', तब उसकी ध्वनि प्रकाश आवेगों में बदल जाती है और फिल्म पर इसका चित्र अंकित हो जाता है। सिनेमाघर में वह चित्र फोटो ट्यूब की मदद से फिर ध्वनि में बदल जाता है और आप सुनते हैं कि अभिनेता कह रहा है, 'नमस्कार!'





अध्याय छब्बीस

टेलीविज़न



चलचित्रों में स्टूडियो के किसी दृश्य को फिल्म पर अंकित किया जा सकता है; और बाद में किसी भी समय सिनेमाघर के पर्दे पर उसे प्रदर्शित किया जा सकता है; पर टेलीविज़न से स्टूडियोवाला दृश्य टेलीविज़न रिसीवर के दृश्यपट पर तत्काल दिखाया जा सकता है। फिल्म को डेवलप करने और कापी बनाने, तथा उसे सिनेमाघर भेजने का कोई व्यवधान इसमें नहीं होता। टेलीविज़न में दृश्य को बिजली के आवेगों में बदल दिया जाता है और इन आवेगों को विद्युत् चुम्बकीय या रेडियो तरंगों के रूप में प्रसारित किया जाता है। रिसीवर अर्थात् टेलीविज़न सेट, विद्युत् चुम्बकीय तरंगों को बिजली के आवेगों में बदल देता है और अन्त में वे प्रकाश में परिवर्तित हो जाते हैं। यह प्रकाश स्टूडियो के दृश्य को प्रदर्शित करने के लिए रिसीवर के पर्दे पर प्रकाश के चलते-फिरते बिन्दुओं की प्रतिकृति के रूप में दिखाई देता है। यह बात आश्चर्यजनक प्रतीत होगी पर यह सारी क्रिया-शृंखला एक सेकंड के बहुत थोड़े-से हिस्से में होती है।

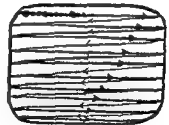
जिन लोगों के प्रयत्नों से टेलीविज़न बन सका, उनके नामों

की सूची सचमुच बहुत लम्बी है। इस सूची में पहलेवाले उन सब वैज्ञानिकों को गिनना होगा जिन्होंने प्रकाश, बिजली और रेडियो विषयक अध्ययन और परीक्षण किए। इसके अतिरिक्त, इसके बाद के उन वैज्ञानिकों का नाम भी निश्चित रूप से रखना होगा, जैसे बोरिस रोज़िंग और डा० ब्लाडीमिर ज़ोरीकिन, जिन्होंने पहले के वैज्ञानिकों द्वारा संचित ज्ञान के आधार पर निर्माण करके टेलीविजन जैसी अद्भुत वस्तु बनाई।

चित्र कैसे दूरसारित (टेलीकास्ट) किया जाता है

किसी चित्र को प्रसारित, या दूरसारित (टेलीकास्ट) करने से पहले उसे छोटे-छोटे टुकड़ों की एक श्रेणी में तोड़ना पड़ता है। कोई चित्र इस रीति से कैसे तोड़ा जा सकता है, इसकी कुछ धारणा बनाने के लिए किसी अखबार के चित्र को बारीकी से देखिए, जैसेकि आपने तब देखा था जब हम यह बतला रहे थे कि आंख के दण्ड और शंकु किस तरह चित्र बनाते हैं। ध्यान से देखने पर पता चलेगा कि यह चित्र छोटे-छोटे बिन्दुओं की एक के बाद एक बनी हुई पंक्तियों से बना है।

कुछ बिन्दु बड़े हैं, कुछ छोटे। बहुत सारे बड़े बिन्दुओं के मिलने से काला क्षेत्र बनता है। छोटे बिन्दुओं के मिलने से सफेद क्षेत्र बनता है।



बिन्दुपरिवर्तक पर्दे पर इस तरह चलेगा, पर प्रत्येक बिन्दु पर पहुंचने के लिए रेखाएं बहुत पास-पास होंगी

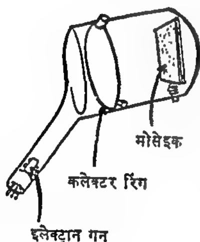
यदि इनमें से प्रत्येक बिन्दु को एक बिजली आवेग—बड़े बिन्दुओं के लिए प्रबल आवेग और छोटे बिन्दुओं के लिए हलके आवेग—में बदल दिया जाए तो चित्र को दूरसारित या टेली-कास्ट करने की दिशा में पहला काम पूरा हो जाएगा। थोड़ी देर के लिए मान लीजिए कि बिन्दुओं को बिजली आवेगों में बदलनेवाले उपकरण को हम 'बिन्दु परिवर्तक' कहते हैं। चित्र को दूरसारित या टेलीकास्ट करने के लिए बिन्दु परिवर्तक चित्र के ऊपरले बाएं हाथ के कोने से काम शुरू करता है और बिन्दुओं की ऊपरली पंक्ति पर चलता है। बारी-बारी प्रत्येक बिन्दु पर

पहुंचता हुआ विन्दु परिवर्तक उस विन्दु को विजली आवेग में वदल देता है। छोटे विन्दु से छोटा आवेग और वड़े विन्दु से वड़ा आवेग पैदा होता है।

विन्दुओं की पहली पंक्ति पूरी करके विन्दु परिवर्तक कूद-कर वाईं ओर आ जाता है और दूसरी पंक्ति पर चलने लगता है। यह वैसे ही होता है जैसे पुस्तक पढ़ते समय आपकी आंख चलती है। आप वाईं ओर से दाईं ओर पढ़ते हैं और पृष्ठ के नीचे की ओर एक-एक पंक्ति उतरते जाते हैं।

जव विन्दु परिवर्तक एक के वाद दूसरे विन्दु पर विजली आवेग में वदलता जाता है, तव रिसीवर पर आपका टेली-विजन सेट इन कम-अधिक तीव्रतावाले विजली आवेगों को छोटे-वड़े आकारोंवाले 'विन्दुओं' में वदलता जाता है। यह क्रिया इतनी तेज़ी से होती है कि ये विन्दु मिलकर टेलीविजन स्टूडियो में हो रही क्रिया का चलता-फिरता चित्र प्रस्तुत करते हैं।

आइकनोस्कोप

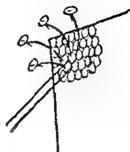


कैमरा ट्यूब

हम जिस 'विन्दु परिवर्तक' की वात कर रहे हैं, वह एक वहुत विशेष प्रकार की इलेक्ट्रान ट्यूव होती है, जो टेलीविजन कैमरे का प्राण है। कैमरा ट्यूवें विभिन्न प्रकार की होती हैं, पर सवके कार्य करने के सिद्धान्त सामान्य ही हैं। एक किस्म आइकनोस्कोप होता है। इनमें तीन आवश्यक भाग होते हैं—एक मोसेइक, एक कलेक्टर रिंग (संग्राहक घेरा), और एक इलेक्ट्रान गन या वन्दूक।

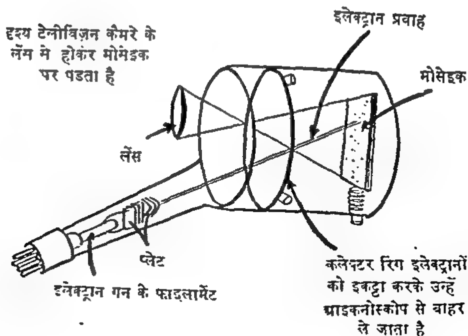
मोसेइक एक धातु की प्लेट होती है जिसपर इन्सुलेटिंग या अचालक द्रव्य चढ़ा रहता है। अचालक द्रव्य के एक तल पर चांदी की छोटी-छोटी लाखों वूंदें या गोल कण होते हैं, जिनमें से प्रत्येक पर सीज़ियम जैसा एक विशेष पदार्थ चढ़ा रहता है (सीज़ियम वही द्रव्य है जिसका प्रयोग फोटो ट्यूव में होता है। इसका उल्लेख पिछले अध्याय में हो चुका है)। इस प्रकार चांदी का प्रत्येक कण वहुत छोटी फोटो ट्यूव की तरह कार्य करता है। मोसेइक ऐसे छोटे-छोटे लाखों 'फोटो ट्यूवों' का वना होता है।

जब किसी फोटो ट्यूब पर प्रकाश पड़ता है, तब इससे इलेक्ट्रान छूटते हैं। प्रकाश जितना अधिक तीव्र होगा उतने ही अधिक इलेक्ट्रान छूटेंगे। ये इलेक्ट्रान ऋणात्मक विद्युत् आवेश-वाले होते हैं। इसलिए इलेक्ट्रानों के चले जाने से फोटो ट्यूब पर धनात्मक आवेश रह जाता है। इसलिए मोसेइक पर डाला गया चित्र धनात्मक विद्युत् आवेशों की एक प्रतिकृति में बदल जाएगा ; अथवा हम यह कह सकते हैं कि चित्र विद्युत् आवेश के विभिन्न आकारोंवाले 'बिन्दुओं' के रूप में टूट गया है।



फोटो ट्यूब द्वारा छोड़े गए इलेक्ट्रानों को कलेक्टर रिंग या संग्राहक घेरा इकट्ठा कर लेता है ; और इस प्रकार वे आइकनोस्कोप से हट जाते हैं।

इलेक्ट्रान गन में एक तन्तु और एक प्लेट होती है, जिसमें एक छोटा छेद होता है। तन्तु इलेक्ट्रानों के स्रोत के रूप में कार्य करता है। वे इससे सब दिशाओं में उड़ते हैं, पर उनमें से



अधिकतर को प्लेट पकड़ लेती है। फिर भी उनमें से कुछ छेद में से निकल भागते है— ठीक वैसे ही जैसे जलते हुए लट्टू के सामने रखे हुए गत्ते के छेद में से कुछ प्रकाश निकल जाए। यह बाल जैसा महीन इलेक्ट्रान-प्रवाह एक-दूसरे से समकोण पर रखे हुए दो प्लेट समूहों द्वारा एक बार एक ओर, और फिर दूसरी ओर मोड़ा जाता है।

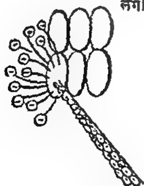
पहला प्लेट समुदाय इलेक्ट्रान प्रवाह को ऊपर और नीचे मोड़ता है। यह मोड़ने की क्रिया प्लेटों पर धनात्मक और ऋणात्मक आवेग की भिन्न-भिन्न मात्राएं रखकर पैदा की जाती है। उदाहरण के लिए, यदि ऊपर की प्लेट पर एक धनात्मक आवेश रखा जाए और नीचे की प्लेट पर एक ऋणात्मक आवेश रखा जाए, तो इलेक्ट्रान प्रवाह (जो ऋणात्मक आवेशवाले इलेक्ट्रानों का बना हुआ है) ऊपरली प्लेट की ओर तथा निचली प्लेट की ओर से मुड़ेगा। यदि धनात्मक और ऋणात्मक आवेशों की मात्रा कम-अधिक कर दी जाए, तो इलेक्ट्रान प्रवाह को विभिन्न मात्राओं में ऊपर या नीचे मोड़ा जा सकता है।

दूसरा प्लेट समुदाय इलेक्ट्रान प्रवाह को दाईं या बाईं ओर मोड़ता है। इस प्रकार आप देखते हैं कि दोनों प्लेट समुदायों के विद्युत् आवेशों को कम-अधिक करके इलेक्ट्रान प्रवाह को मोसेइक के किसी भी भाग तक भेजा जा सकता है।

इस प्रकार, इलेक्ट्रान प्रवाह को मोसेइक के ऊपरले बाएं कोने से आरम्भ किया जाता है। यह बाईं ओर से दाईं ओर फोटो ट्यूबों की पहली पंक्ति पर चलता है। फिर बाईं ओर लौट आता है और दूसरी पंक्ति पर चलता है, और इस प्रकार नीचे तक सारे मोसेइक पर चलता जाता है।

इसका प्रयोजन यह है कि प्रत्येक फोटो ट्यूब को बारी-बारी वे इलेक्ट्रान फिर प्राप्त करा दिए जाएं, जो प्रकाश के टकराने पर इसने छोड़े हैं। मान लीजिए कि एक फोटो ट्यूब ने एक हजार इलेक्ट्रान छोड़े। यह मोसेइक का ढांचा बनानेवाली धातु

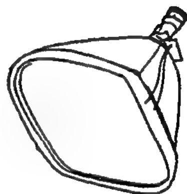
यदि किसी 'फोटोट्यूब' से १००० इलेक्ट्रान निकल गए हैं तो यह उन्हें दण्ड (बीम) से वापस प्राप्त कर लेगी



की प्लेट में लगभग एक हज़ार इलेक्ट्रान आकर्षित करती है। वे धातु की प्लेट पर अचालक वस्तु होने के कारण उससे फोटो ट्यूब में नहीं जा सकते। जब इलेक्ट्रान गन से चलनेवाला इलेक्ट्रान प्रवाह फोटो ट्यूब को फिर इलेक्ट्रान प्राप्त कराता है, तब वे हज़ार इलेक्ट्रान धातु की प्लेट से हट जाते हैं।

धातु की प्लेट से प्रवाहित होनेवाले ये इलेक्ट्रान एक बिजली आवेग बनाते हैं—यह बिजली आवेग फोटो ट्यूब पर पड़नेवाले प्रकाश का समानुपाती होता है। जब प्रकाश तीव्र होता है, तब बिजली आवेग भी तीव्र होता है।

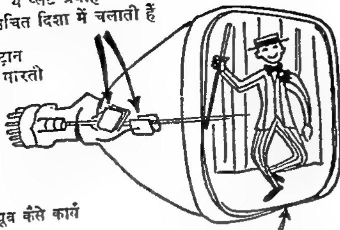
जैसे-जैसे इलेक्ट्रान प्रवाह एक फोटो ट्यूब से दूसरी ट्यूब पर पहुंचता है, वैसे-वैसे आवेग बड़ी जल्दी-जल्दी एक-दूसरे के पीछे आते हैं। तब उन्हें प्रवर्धित किया जाता है और उनसे बहुत कुछ उसी तरह टेलीविज़न-वाहक तरंगों को माडुलेट या परिवर्तित किया जाता है, जैसे रेडियो माइक्रोफोन से आनेवाले बिजली आवेग रेडियो वाहक तरंगों को माडुलेट या परिवर्तित करते हैं। इनसे बनी हुई तरंगें टेलीविजन सेट में इलेक्ट्रान गति या बिजली आवेग पैदा करती हैं। इसके बाद इन आवेगों को टेलीविज़न के पर्दे पर चित्र में बदला जाता है।



कैथोड-रे ट्यूब

रिसीवर या टेलीविज़न सेट

टेलीविज़न सेट में एक बहुत विशेष प्रकार की इलेक्ट्रान ट्यूब होती है जो 'कैथोड-रे ट्यूब' कहलाती है। इस ट्यूब में आइकनोस्कोप की तरह की इलेक्ट्रान गन जैसी इलेक्ट्रान गन होती है, जो ट्यूब के सिरे में एक प्रतिदीप्त (फ्लओरेसेंट) पर्दे पर इलेक्ट्रानों का प्रवाह फेंकती है। इस पर्दे पर प्रतिदीप्त द्रव्य चढ़ा रहता है, जो इलेक्ट्रानों के इसपर टकराने पर प्रतिदीप्त हो जाता है अर्थात् प्रकाश से चमकता है। इलेक्ट्रानों से प्रतिदीप्त द्रव्य के परमाणुओं में इलेक्ट्रान एक कक्षा से दूसरी कक्षा में कूदने लगते हैं, और जैसाकि हमने अध्याय इक्कीस में पढ़ा



था, कक्षान्तर में कूदनेवाले इलेक्ट्रान प्रकाश पैदा करते हैं। इस प्रकार, जहां कहीं इलेक्ट्रान प्रवाह प्रतिदीप्त पर्दे पर टकराता है, वहीं प्रकाश का एक बिन्दु दिखाई देता है। इलेक्ट्रान प्रवाह जितना प्रबल होता है, प्रकाश का बिन्दु उतना ही चमकीला होता है।

कैथोड-रे ट्यूब की इलेक्ट्रान गन इलेक्ट्रान प्रवाह को ट्रांसमिटर आइकनोस्कोप की इलेक्ट्रान गन के बिलकुल अनुसार ही मोड़ती है। दोनों प्रवाह एकसाथ अपने-अपने पर्दों के ऊपरले भागों को पार करते हैं; और फिर बारी-बारी दूसरी, तीसरी और नीचे की पंक्तियों में पहुंच जाते हैं।

कैथोड-रे ट्यूब के इलेक्ट्रान प्रवाह की तीव्रता आइकनोस्कोप मोसेइक से चलनेवाले बिजली आवेगों की तीव्रता के परिवर्तन के अनुसार बदलती रहती है। जब मोसेइक से तीव्र आवेश चलता है, तब कैथोड-रे ट्यूब का इलेक्ट्रान प्रवाह तीव्र होता है। प्रतिदीप्त पर्दे पर एक चमकीला बिन्दु दिखाई देता है। आवेग हलका होने पर बिन्दु हलका होता है। इस प्रकार आइकनोस्कोप मोसेइक के घटते-बढ़ते विद्युत् आवेशवाले 'बिन्दु', जो दूरगामित या टेलीकास्ट किए जा रहे दृश्य के प्रकाश की

कम-अधिक मात्राओं से पैदा होते हैं, प्रतिदीप्त पर्दे पर प्रकाश के चलते-फिरते बिन्दुओं के रूप में फिर दिखाई देते हैं। ये चमकीले और धुंधले बिन्दु प्रतिदीप्त पर्दे पर टेलीकास्ट किए जानेवाले दृश्य का चित्र बना देते हैं।

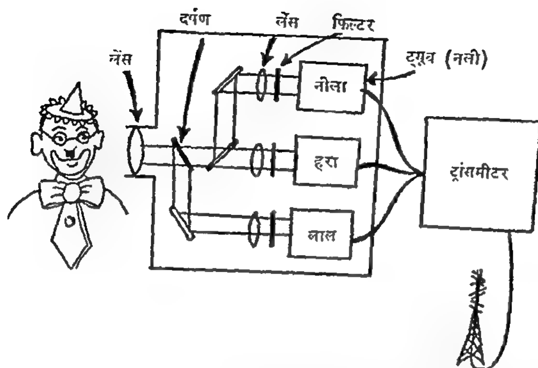
प्रति सेकंड ३० चित्र बनाने के लिए सारा पर्दा एक सेकंड में ३० बार ढका जाता है। हमारी आंखें अपनी दृष्टि-बद्धता के कारण इन अलग-अलग चित्रों को मिलाकर टेलीविज़न के स्टूडियो में हो रहे कार्य-व्यापार का चलता-फिरता दृश्य बना लेती हैं।

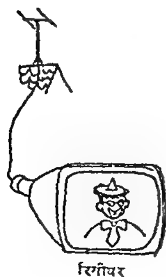
रंगीन टेलीविज़न

क्या आपको रंगीन फोटो लेने की रीति याद है? उनमें हम तीन पृथक् तहोंवाली फिल्म प्रयोग में लाते हैं। एक नीले की संवेदक होती है, दूसरी हरे की और तीसरी लाल की। इन्हें मिला देने से चित्रों में विभिन्न रंग पैदा हो जाते हैं।

इसी प्रकार रंगीन टेलीविज़न चित्रों को तीन रंगों—लाल, हरे और नीले—में तोड़ लेता है। इस तरह तीन अलग-अलग चित्र टेलीकास्ट होते हैं। एक लाल रंग का, एक हरे रंग का और एक नीले रंग का। कैमरे में लेंसों, दर्पणों और फिल्टरों की एक व्यवस्था चित्र को इस प्रकार अलग-अलग रंगों में बांट देती है।

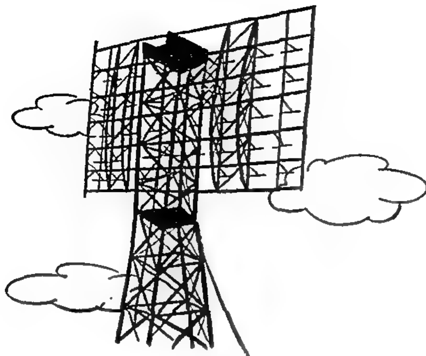
फिर रिसीवर में तीन अलग-अलग चित्रों को दुबारा जोड़ दिया जाता है। एक तरह की 'रिसीवर कलर-पिक्चर ट्यूब' में काले और सफेद चित्रवाली ट्यूब की एक इलेक्ट्रान गन के स्थान पर तीन इलेक्ट्रान गनें होती हैं। इसके अतिरिक्त प्रतिदीप्त पर्दे पर तीन विभिन्न प्रकार के प्रतिदीप्त द्रव्य चढ़े रहते हैं। एक प्रकार का द्रव्य नीला चमकता है, दूसरा हरा और तीसरा लाल। कार्य के समय तीन इलेक्ट्रान गनों में से प्रत्येक टेलीकास्ट किए जा रहे रंगीन चित्र के सिर्फ एक रंग पर अनुक्रिया करती है।




रिसीवर

उदाहरण के लिए, इनमें से एक इलेक्ट्रान गन नीले चित्र पर क्रिया करती है। क्रिया के समय इसके इलेक्ट्रान प्रतिदीप्त पर्दे के सिर्फ नीले बिन्दुओं पर चोट करते हैं। दूसरी इलेक्ट्रान गन सिर्फ हरे बिन्दुओं पर इलेक्ट्रान फेंकती है। तीसरी इलेक्ट्रान गन के छूनेवाले इलेक्ट्रान सिर्फ लाल बिन्दुओं पर चोट करते हैं। इस प्रकार पिक्चर ट्यूब के प्रतिदीप्त पर्दे पर आपको जो चित्र दिखाई देता है, वह तीन पृथक् बिन्दुओं से बना होता है। वे मिलकर रंगीन चित्र बनाते हैं, जो आपको दिखाई देता है।

टेलीविज़न पर भेजे गए रंगीन चित्र काले और सफेद चित्रोंवाले टेलीविज़न सेटों पर भी देखे जा सकते हैं। काले और सफेद चित्रोंवाले सेट तीनों विभिन्न चित्रों को उनकी पिक्चर ट्यूब की इलेक्ट्रान गन पर पहुंचने से पहले इकट्ठा कर देते हैं। इस प्रकार काले और सफेद चित्रवाली ट्यूब वही चित्र प्रदर्शित करती है, पर सिर्फ काले और सफेद रंग में ही।



अध्याय सत्ताईस

रेडार

टेलीविजन की सहायता से हम दूर का दृश्य देख लेते हैं, जिसे टेलीविजन स्टूडियो का ट्रांसमिटर दूर फेंककर हमारे रिसीवर पर पहुंचा देता है। पर रेडार की सहायता से दूर की वस्तुओं की रूपरेखा रिसीवर के दृश्यपट पर देखी जा सकती है; यद्यपि वहां दृश्य को टेलीकास्ट करनेवाला कोई दूरस्थ ट्रांसमिटर नहीं है। शायद इससे भी अधिक विलक्षण बात यह है कि रेडार अंधेरे में या घने बादलों के आर-पार देख सकता है। रात के समय उड़नेवाला विमानचालक रेडार के दृश्यपट पर दूरस्थ मकानों को या शायद कई मीलों दूर स्थित खतरनाक पहाड़ी चोटी को देख सकता है।

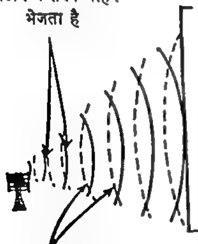
इस प्रकार रेडार का प्रयोग करके विमानों को अंधेरे में अपनी मंज़िल पर पहुंचाया जा सकता है। युद्ध के दिनों में बमवर्षक रात के समय या घने बादलों के समय इसकी सहायता से अपने लक्ष्यों का पता लगाते हैं। धरती पर मौजूद रेडार सेट

अंधेरे या बादलों के समय बहुत दूर मौजूद शत्रु के विमानों को 'देख' सकते हैं और उनपर विमान वेधक तोप चला सकते हैं। युद्ध-पोतों के रेडार सेटों की सहायता से रात के समय दुश्मन के जहाजों या तटीय संस्थानों पर ठीक निशाना ताककर बमबारी की जा सकती है।

रेडार कैसे कार्य करता है

रेडार 'प्रतिध्वनि' के सिद्धान्त पर कार्य करता है। यदि आप किसी पहाड़ी से लगभग आधा मील दूर खड़े हो जाएं और वहां जोर की आवाज करें और फिर प्रतिध्वनि के समय को ठीक-ठीक नाप लें, तो उस पहाड़ी की दूरी ठीक-ठीक निकाल सकते हैं। कुछ-कुछ इसी प्रकार रेडार सेट रेडियो तरंगें भेजता है और तरंगों को लौटने में लगा हुआ समय नाप लेता है।

किसी रेडार सेट में एक ट्रांसमिटर और एक रिसीवर होता है। ट्रांसमिटर कुछ-कुछ रेडियो स्टेशन की तरह कार्य करता है, और रिसीवर टेलीविजन सेट की तरह कार्य करता है, और टकराकर लौटी हुई रेडियो तरंगों को एक चित्र में बदल देता है।



ट्रांसमिटर एक बहुत विशेष प्रकार का ब्राडकास्टिंग स्टेशन होता है। यह नियमित समय के बाद हाई फ्रीक्वेंसी रेडियो तरंगों के छोटे-छोटे स्फोट आकाश में छोड़ता है। ये तरंगें इकट्ठी होकर एक तीखे तरंग-दण्ड (वेव-बीम) का रूप ले लेती हैं। तरंगों का प्रत्येक स्फोट एक सेकंड के लगभग दस लाखवें हिस्से तक ही रहता है, और स्फोटों के बीच में एक सेकंड के कुछ हजारवें हिस्से के समय तक रुकावट रहती है। दूसरे शब्दों में, ट्रांसमिटर एक सेकंड के दस लाखवें हिस्से के समय तक तरंगें भेजता है, फिर जरा रुक जाता है, और उसके बाद फिर तरंगें भेजता है; और तब तक इसी तरह करता रहता है, जब तक रेडार सेट चलता रहे।

ये रेडियो तरंगें बादलों को पार कर जाती हैं और अंधेरा भी इनके मार्ग में बाधा नहीं डालता। वे ट्रांसमिटर से चलकर तब तक ऋजु (सीधी) रेखा में चलती जाती हैं, जब तक वे मकान जैसी किसी ठोस चीज़ से न टकराएं। तब वे टकराकर लौटती हैं—बहुत कुछ उसी तरह जैसे प्रकाश किसी वस्तु से टकराकर परावर्तित होता है। लौटी हुई तरंगें रेडार सेट में आकर कैथोड-रे ट्यूब के दृश्यपट पर प्रकाश के एक छोटे बिन्दु में बदल जाती हैं।

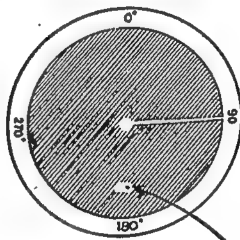
यदि जानेवाला तरंग-दण्ड सिर्फ एक दिशा में भेजा जाए, तो उससे रिसीवर को आगे के दृश्य का कुछ अच्छा अन्दाज़ा नहीं होगा। पर, उदाहरण के लिए, किसी विमान के रेडार सेट में ट्रांसमिटर का ऐण्टेना जल्दी-जल्दी घूमता रहता है, जिससे वह जहाज़ से नीचे के सारे क्षेत्र को बार-बार जांच लेता है। यह बहुत कुछ वैसा ही है जैसा टेलीविज़न ट्रांसमिटर के कैमरा ट्यूब में जांच—'प्रभाव' या 'स्कैनिंग इफेक्ट'-होता है।

कल्पना कीजिए कि विमान से नीचे का क्षेत्र समतल भूमि है। तब रेडियो तरंगों का प्रत्येक स्फोट बाहर जाकर एकसार रूप में लौटेगा और रिसीवर के कैथोड-रे ट्यूब के दृश्यपट के सारे तल पर एक-सी चमक होगी। पर मान लीजिए कि विमान किसी ऊंचे मकान के ऊपर है। मकान से टकरानेवाले रेडियो तरंगों के स्फोटों को विमान तक वापस पहुंचने के लिए कम दूरी चलनी होगी। इसलिए मकान से टकराकर लौटनेवाले ये स्फोट उसके आसपास की जमीन से लौटनेवाले स्फोटों से पहले आ जाएंगे और कैथोड-रे ट्यूब के दृश्यपट पर प्रकाश बिन्दु पैदा करेंगे। इनसे बना हुआ 'चित्र' विमान की दृष्टि से मकान के स्थूल नक्शे जैसा दिखाई देगा। विमान की स्थिति पर्दे के केन्द्र के बिन्दु से सूचित होती है। इससे चालक को विमान के स्थान की दृष्टि से मकान की ठीक स्थिति का पता चल जाएगा। यदि वह चाहे तो सीधा इसके ऊपर से उड़ान कर सकता है, और चाहे तो

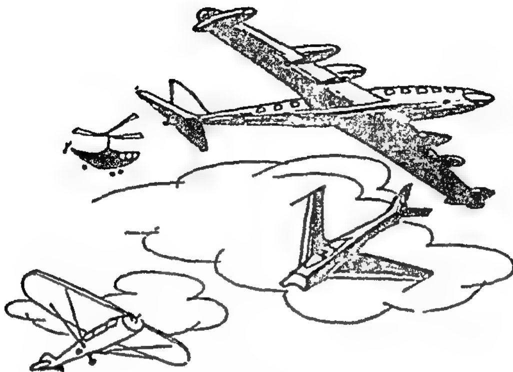


मुड़ सकता है। आप समझ सकते हैं कि रात में विमान चालक के लिए या हिमखंडों से भरे हुए समुद्र में रात के समय जहाज चलानेवाले कप्तान के लिए यह उपकरण कितना मूल्यवान है।

धरती पर लगे हुए रेडार से इसी तरह दूर उड़ते हुए विमानों का पता लगाया जा सकता है। धरती के रेडार के पर्दे पर विमान प्रकाश के बिन्दु-सा दिखाई देता है। हवाई अड्डे कोहरे के समय रेडार द्वारा विमानों को उतरने या न उतरने का निर्देशन करते हैं। धरती पर मौजूद प्रेक्षक रेडार द्वारा यह देख सकता है कि विमान कहां है, और रेडियो द्वारा चालक को आदेश दे सकता है।



विमान के रेडार का पर्दा
कुछ-कुछ ऐसा लगेगा



अध्याय अट्ठाईस
विमान

जब से मनुष्यों ने चिड़ियों के उड़ने पर सबसे पहले विचार आरम्भ किया, तब से उनके मन में यह प्रश्न रहा होगा कि हम भी पंख लगाकर उड़ क्यों नहीं सकते। यह देखकर कि चिड़ियां अपने पंख इतनी आसानी से हिलाती हैं और उड़ जाती हैं, पुराने स्वप्न-द्रष्टाओं को यह बात तर्कसंगत मालूम होती थी कि आदमी भी किसी प्रकार के चलनेवाले पंख बना सके तो वह भी उसी तरह उड़ सकता है। ओविड नाम के एक रोमन कवि ने, जो ईसा के समय में हुआ था, दो आदमियों की एक कल्पित कथा लिखी थी जो परों से बनाए हुए पंखों द्वारा जेलखाने से निकल भागे थे। तेरहवीं शताब्दी का अंग्रेज वैज्ञानिक रोजर बेकन उड़ने के प्रश्न पर वैज्ञानिक रीति से अध्ययन करनेवाला शायद पहला आदमी था। उसने चिड़ियों के नमूने पर पंख फड़फड़ानेवाला यंत्र बनाया। उसने सोचा कि हाथ और टांग हिलाने से पंख चलने लगेंगे और मनुष्य उड़ सकेगा।

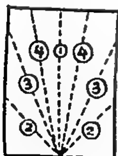
बाद में और लोगों ने यह सिद्ध किया कि मनुष्य की मांस-पेशियां इतनी मजबूत नहीं कि वे पंखों को चला सकें और आदमी उड़ सकें। पर, कई सदियों तक मनुष्य इस दिशा में परीक्षण करते रहे। उनकी समझ में यह नहीं आया कि 'उड़नेवाली मशीनों को' सफल करने के लिए कोई शक्ति का स्रोत, जैसे गैसोलीन इंजन, आवश्यक है।



डा विंची की एक पंख फड़फड़ाने वाली मशीन

पन्द्रहवीं शताब्दी के इटालियन कलाकार लेओनार्डो डा विंची ने, जो चित्रकार, मूर्तिकार, इंजीनियर और आविष्कारक के रूप में बड़ा प्रसिद्ध है, पंख फड़फड़ाने की कई योजनाएं तैयार कीं; पर वह इससे भी आगे बढ़ा। उसने उड़ान के लिए घूमनेवाले पंखों की एक शृंखला के प्रयोग का एक सुझाव रखा और इस प्रकार हमारे आधुनिक हेलीकाप्टर की ४०० वर्ष पहले कल्पना की। उसे विमान के 'प्रोपेलर' या 'नोदक' की कल्पना करनेवाला पहला व्यक्ति माना जाता है और पैराशूट या हवाई छतरी के आविष्कार का श्रेय भी दिया जाता है। उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में बहुत-से आदमी किसी न किसी उड़नेवाली मशीन का परीक्षण करते रहे, पर उनका कार्य कटु निराशा की लम्बी कहानी था। यद्यपि वे लोग (हिलनेवाले पंखों के मुकाबिले में) स्थिर पंख के सिद्धान्त पर करीब-करीब पहुंच चुके थे, पर उनके पास उड़ने के लिए काफी शक्तिशाली इंजन नहीं था। इसके अतिरिक्त, वे स्थिरता (स्टेबिलिटी) और कण्ट्रोल के सिद्धान्त भी नहीं समझते थे।

कागज़ के ग्लाइडर को मोडने का क्रम



इससे तहें स्पष्ट होती हैं

ग्लाइडिंग

एक अंग्रेज वैज्ञानिक सर जार्ज केले ने सन् १८०० में कुछ अपने छोटे नमूने के ग्लाइडर परीक्षणों से स्थिर पंख का सिद्धान्त कायम करने में मदद दी। सन् १८४२ में विलियन हेनसन ने इंग्लैंड में एक तरह का विमान पेटेंट कराया, जिसका नाम उसने 'एरियल' रखा। यह एक मनगढ़ रचना थी, जिसे वह भाप के इंजन से चलाना चाहता था। अन्तर्दहन इंजनों का अभी

आविष्कार भी नहीं हुआ था। हेनसन ने अपने एरियलों से यूरोपियन नगरों के बीच नियमित उड़ान-सेवा चलाने के लिए एक कम्पनी भी बनाई, पर वह एक भी ऐसा विमान न बना सका जो उड़ता। इसलिए उसने अंत में यह काम छोड़ दिया।

पर हेनसन के साझीदार जान स्ट्रिंगफेलो ने यह काम नहीं छोड़ा और वह नमूने के विमानों से अपने विचारों की जांच-परख करता रहा। सन् १८४८ में उसने १० फुट लम्बे पंखवाला एक नमूने का विमान बनाया, जिसे भाप के इंजन से शक्ति दी गई, जिससे वह साठ फुट से कुछ अधिक सचमुच उड़ा। यह पहला अवसर था जब कोई नमूने का विमान शक्ति द्वारा उड़ाया गया हो। यह आगे की ओर एक कदम था।


मोड़ १


मोड़ २

पर अभी बहुत कुछ करना शेष था। अधिकाधिक बड़े नमूने के ग्लाइडर बनाए जा रहे थे; और सन् १८५५ के आसपास फ्रांस के ले ब्रिस नामक जहाजी कप्तान ने एक इतना बड़ा ग्लाइडर बनाया था, जो उसे आकाश में लगभग एक फर्लांग ले जा सके। और लोग, जिनमें जर्मनी के लिए लिलिएन्थल-बंधु और संयुक्त राज्य अमेरिका के मॉण्टगोमरी और कैन्यूट भी थे, ग्लाइडिंग के परीक्षण करते रहे और उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त तक ग्लाइडिंग एक आम-सी चीज हो गई।


मोड़ ३


मोड़ ४

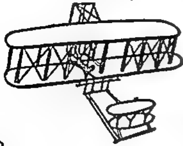
इस पृष्ठ पर बताई गई रीति से, कागज मोड़कर आप परीक्षण के लिए एक बहुत सादा ग्लाइडर बना सकते हैं। निचले किनारे पर दो पेपर क्लिप लगाइए और उन्हें तब तक आगे-पीछे सरकाइए जब तक ग्लाइडर संतुलित न हो जाए और बिना नीचे आए न उड़ने लगे। आगे चलकर हम यह बताएंगे कि इस कागज के ग्लाइडर से विमान नियंत्रण के सिद्धान्त किस प्रकार बनाए जा सकते हैं।

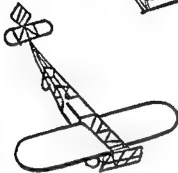


शक्ति-प्रेरित उड़ान

उड़ान के असली शौकीन लोग सदा यह कल्पना करते रहे हैं कि ग्लाइडर में इंजन लगाया जा सके, जिससे वह शक्ति-

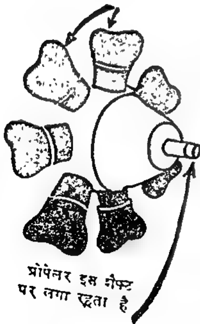
राइट का पहला सफल विमान





ब्लेरियो का विमान

रेडियल इंजन सिलिंडर



प्रोपेलर इस शैफ्ट पर लगा रहता है

प्रेरित होकर ऊपर को उड़ान कर सके। इंग्लैंड में सर हीरम मैक्सिम ने, फ्रांस में क्लिमेंट ऐडर ने और संयुक्त राज्य अमेरिका में डा० सैमुअल पी० लांग्ले ने कोशिश की—पहले दो ने भाप की शक्ति से और लांग्ले ने गैसोलीन इंजन से विमान उड़ाने की कोशिश की। इन तीनों में से लांग्ले शायद सफलता के सबसे अधिक निकट पहुंच गया था। पर सन् १९०३ में उसके उड़ने के दो प्रयत्न व्यर्थ हो गए।

जिस साल लांग्ले असफल हुआ, उसी साल डेटन (ओहायो) के राइट-बन्धु, विलवर और ओविल, सफल हो गए। १७ दिसम्बर, १९०३ को किटि हाक, नार्थकैरोलिना में उनका अपने बनाए हुए गैसोलीन इंजन से शक्ति देनेवाला भद्दा, भारी-भरकम जहाज़ धरती से ऊपर उठा। ओविल कण्ट्रोल पर था और यह १२० फुट उड़ा। उस समय उनका वर्षों का कठोर परिश्रम सफल हो गया और दूसरे लोगों की आशाएं और आकांक्षाएं भी, जिन्होंने वर्षों पहले परिश्रम किया था और योजनाएं बनाई थीं, सफल हो गईं।

अगले कुछ वर्षों में विमान की उन्नति बड़ी तेज़ी से हुई। सन् १९०९ में लुई ब्लेरियो ३१ मील चौड़े इंग्लिश चैनल के पार ५० मील प्रति घंटे की औसत चाल से उड़ा। सन् १९१३ में रूस में सिकोरस्की का 'ऐरोबस' उड़ाया गया। यह अपने समय की दृष्टि से बहुत भारी था। इसका भार ३००० पौंड था और इसमें चार इंजन तथा एक कोठरी थी, और १६ मुसाफिरों के लिए स्थान था। आजकल के दो लाख पौण्ड से अधिक भारवाले और कई सौ मील प्रति घंटे की चालवाले और सौ से भी अधिक मुसाफिरों को लेकर उड़नेवाले विशालकाय जहाज़ों की तुलना में यह जहाज़ बेशक छोटा था।

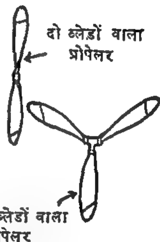
विमान आगे कैसे चलता है?

विमान को, उड़ा सकने से पहले, हवा में आगे की ओर खींचना पड़ता है। इसके बाद वह हवा, जिसमें से विमान दौड़ता

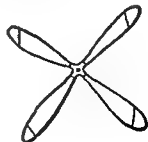
है, विमान के पंखों पर कार्य करती है और विमान को धरती से ऊपर उठा देती है।

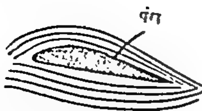
इस प्रकार स्पष्ट है कि विमान के उड़ने का ढंग समझने के लिए सबसे पहले हमें यह समझना चाहिए कि विमान हवा में आगे की ओर कैसे खिंचता है। प्रोपेलर, जो यह कार्य करता है, अन्तर्दहन इंजन से चलता है—यह इंजन मोटरों में लगे हुए अन्तर्दहन इंजनों जैसा ही होता है, पर दोनों में कुछ फर्क भी है। प्रथम तो विमान के इंजन यथासम्भव हलके होने चाहिएं, क्योंकि इंजन जितने हलके होंगे उतना ही अधिक बोझा इंजन ढो सकेगा। दूसरे बहुत-से विमान-इंजनों में सिलिण्डर एक पंक्ति में होने के बजाय एक गोल घेरे में लगे होते हैं। ऐसा इंजन 'रेडियल इंजन' कहलाता है, क्योंकि प्रत्येक सिलिण्डर उस वृत्त की त्रिज्या (रेडिअस) पर होता है जिसमें इंजन बन्द रहता है।

प्रोपेलर इंजन के शैफ्ट पर लगा होता है, इसलिए जब इंजन चलता है तब यह घूमता है; और जब प्रोपेलर घूमता है, तब यह वायु पर इस तरह क्रिया करता है कि यह हवा में तेजी से खिंच जाता है। इंजन और विमान प्रोपेलर से जुड़े होते हैं। इसलिए सारा विमान उसके साथ हवा में खिंचता है। जरा यह देखिए कि विमान को उड़ाने में प्रोपेलर अपना काम कैसे करता है।

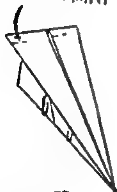


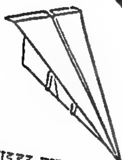
प्रोपेलर में दो, तीन या चार ब्लेड होते हैं; और प्रत्येक ब्लेड गहरा होता है। जब प्रोपेलर हवा में चलता है, तब यह हवा को ऊपर को काटता है और इसे पीछे को धकेलता है। अणुओं की दृष्टि से इस क्रिया को देखा जाए, तो वायु के अणु एक क्षण के लिए प्रोपेलर ब्लेडों के ठीक पीछे एक जगह ढकेल दिए जाते हैं। दूसरे शब्दों में, ब्लेडों के हवा काटने के प्रभाव से उनके पीछे एक ऊंची दाबवाला क्षेत्र बन जाता है, जिससे अणु ब्लेडों के पिछले हिस्से पर सामनेवाले हिस्से की अपेक्षा अधिक


चार ब्लेडों वाला प्रोपेलर

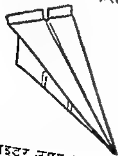


हवा पंख के ऊपर और नीचे से बहती है





इससे ग्लाइडर डाइव करता है



इससे ग्लाइडर ऊपर चढ़ता है

जोर से गमवारी करते हैं । इससे ब्लेडों की पीठ पर बननेवाली दाब उन्हें आगे धकेलती है और इस प्रकार प्रोपेलर विमान को हवा में खींचता है ।

विमान आकाश में कैसे टिकता है ?

जब पंख हवा में आगे की ओर चलते हैं, तब उनपर जो उठानेवाला प्रभाव पड़ता है, उससे विमान आकाश में टिका रहता है । पंख ऊपर की ओर कुछ टेढ़े, सामने की ओर कुछ भारी होते हैं और पीछे को पतले होते जाते हैं । जब पंख आगे चलता है, तब यह हवा को रास्ते से हटा देता है । पंख के ऊपर गुजरनेवाली हवा को टेढ़ा चलना पड़ता है । टेढ़े रास्ते के अधिक लम्बा होने के कारण हवा के अणुओं को कुछ फैल जाना पड़ता है । इसका अर्थ यह है कि पंख के ठीक नीचे हवा के जितने अणु हैं, पंख के ठीक ऊपर उससे कुछ कम अणु हैं । किसी तल पर वायु की दाब उस तल पर मौजूद हवा के परमाणुओं की संख्या से निर्धारित होती है । क्योंकि पंख-तल के नीचे अधिक परमाणु हैं, इसलिए हवा की दाब पंख के ऊपर की अपेक्षा पंख के नीचे अधिक है । दूसरे शब्दों में, जब पंख हवा में आगे को चल रहे हैं, तब उनपर ऊपर को धक्का लगता है और इस उठाव से विमान हवा में टिका रहता है ।

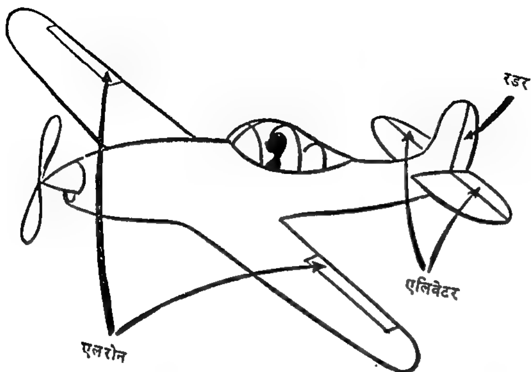
विमान को कैसे कण्ट्रोल किया जाता है ?

विमान को परिचालित या स्टीयर करना पड़ता है, जिससे यह न केवल दाएं-बाएं न जाए, बल्कि ऊपर-नीचे भी न जाए । यह परिचालन या स्टियरिंग विमान के पंखों और पूंछ या टेल में लगे हुए हिलाए जा सकनेवाले कण्ट्रोल-तलों से किया जाता है । ये कण्ट्रोल-तल 'एलरोन', 'एलिवेटर' और 'रडर' कहलाते हैं ।

विमान की पूंछ में एक फिन और दो स्टैबिलाइज़र होते हैं, जो उड़ने के समय का संतुलन बनाए रखते हैं । स्टैबिलाइजरों से जुड़े हुए दो हिलाए जा सकनेवाले तल होते हैं, जो एलिवेटर

कहलाते हैं। चालक एक डंडे को हिलाकर एलिवेटरों को ऊपर कर सकता है और एक पहिए को हिलाकर उन्हें नीचा कर सकता है। जब उन्हें नीचा कर दिया जाता है, तब उनके नीचे उनके ऊपर की अपेक्षा वायु की दाब अधिक हो जाती है। इसके परिणामस्वरूप विमान की टेल को ऊपर की ओर धक्का मिलता है। इसका अर्थ यह है कि विमान नीचे आ जाता है, या 'डाइव' करता है। दूसरी ओर, यदि एलिवेटरों को ऊपर कर दिया जाए तो विमान की टेल को नीचे को धक्का लगता है और विमान ऊपर की ओर चढ़ता है। आप अपने कागज़ के ग्लाइडर से ये क्रियाएं करके देख सकते हैं। पिछले पृष्ठ के किनारे दिखाए गए तरीके से पंखों के पिछले किनारे नीचे मोड़ दिए जाते हैं; और देखिए कि ऐसा करने से ग्लाइडर कब नीचे आया। इसी प्रकार, इसके पिछले किनारे को ऊपर मोड़ दीजिए और देखिए कि ग्लाइडर कैसे ऊपर आता है। एलरोन पंखों के पिछले किनारों पर चल भाग या हिलाए जा सकने योग्य हिस्से होते हैं, और अन्त में एक एलरोन होता है और वे लिवरों तथा तारों द्वारा इस तरह जुड़े रहते है कि जब एक नीचे चलता है, तब दूसरा ऊपर जाता है। विमान एलरोनों से बैंकिंग कर सकता है, अर्थात् एक तरफ को टेढ़ा हो सकता है। यह एक महत्त्वपूर्ण काम है, विशेष रूप से मुड़ने के समय; क्योंकि जब एक एलरोन ऊपर चलाया जाता है, तब इसके ऊपरवाले हिस्से पर पड़नेवाली हवा की धार उस पंख पर नीचे को बल लगाती है। उसी समय दूसरा एलरोन नीचे किया जाता है, जिससे इसके पंख को ऊपर की ओर धक्का लगता है। इस प्रकार विमान, जिस दिशा में एलरोन चलाए जाएंगे उसके अनुसार दाईं या बाईं ओर घूमेगा।

रडर मुड़ने में मदद करता है। चालक पैडिल चलाकर रडर को दाईं ओर या बाईं ओर हिलाता है। जब वह इसे दाईं ओर हिलाता है तब इसपर पड़नेवाली हवा की दाब विमान की पूंछ



को बाईं ओर चला देती है। यह क्रिया एलरोन के संचलन से
मिलकर विमान को झुका या मोड़ देती है। सिर्फ रडर कण्ट्रोल
से मोड़ घूमने में कठिनाई होती है। विमान का आगे की ओर
संचलन इसे उसी दिशा में चलाता रहेगा, चाहे रडर का प्रयोग
करके पूंछ को एक ओर या दूसरी ओर कर दिया जाए। दूसरे शब्दों
में, विमान मोड़ घूमने से पहले अपनी गति की पहलीवाली दिशा
में कुछ दूर तक आगे को बढ़ता चला जाएगा; पर यदि उसी
समय एलरोनों का प्रयोग करके विमान को टेढ़ा कर दिया जाए,
तो सारा विमान आसानी से मुड़ जाएगा।

बड़े विमान में चालक अपने बल से कण्ट्रोल-तलों को नहीं
चला सकता। वे बहुत बड़े होते हैं और बहुत अधिक प्रयास
की ज़रूरत होती है। इस कारण बिजली की मोटरें या ऐसे
ही अन्य साधन प्रयोग में लाए जाते हैं। चालक कण्ट्रोलों को
चलाता है, जिससे मोटरें चल पड़ती हैं, तब वे एलरोनों,
एलिवेटरों और रडरों को चलाती हैं।

हेलीकाप्टर



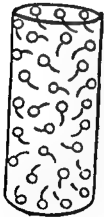
हेलीकाप्टर, जो लियोनार्डो डा विंची ने कोई ४०० वर्ष पहले सुझाया था, एक घूमनेवाले पंखवाला साधन होता है जो आवश्यक उठाव या लिफ्ट देने के लिए विमान के ऊपर तीन या चार ब्लेडवाले 'प्रोपेलर' को घुमाता है। कण्ट्रोल के लिए ब्लेडों को थोड़ा हिलाया जाता है, जिससे वे एक ओर की अपेक्षा दूसरी ओर अधिक 'लिफ्ट' देते हैं। उदाहरण के लिए आगे की ओर झुकाने पर हेलीकाप्टर आगे को खिंचता है; पर यदि ब्लेड न झुकाए जाएं, तो हेलीकाप्टर हवा में गतिहीन अवस्था में ही मंडराता रहेगा।

अध्याय उन्तीस

प्रतिक्रिया-इंजन



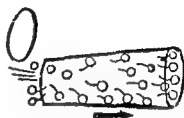
लगभग २७० वर्ष पहले प्रसिद्ध अंग्रेज वैज्ञानिक सर आइज़क न्यूटन ने कहा था : 'प्रत्येक क्रिया (एक्शन) की समान और विपरीत प्रतिक्रिया (रिएक्शन) होती है।' पर इस बुनियादी भौतिक नियम को प्रत्यक्ष करानेवाले राकेटों और जेट विमानों को कई मील प्रति मिनट की चाल पर आकाश में घुरघुराते हुए देखकर सबसे अधिक आश्चर्य उन्हींको हुआ होता। ऐसे विमानों में प्रयुक्त जेट इंजन प्रतिक्रिया-इंजन होता है। प्रतिक्रिया विमान को हवा में वैसे ही धकेलती है जैसे वह राकेटों को आकाश में भेजती है।



प्रतिक्रिया किसे कहते हैं ?

यदि हमारे पास एक लम्बा सिलिण्डर हो, जो उदाहरण के लिए टीन के बन्द डिब्बे जैसा हो, और बहुत बल से दबाई हुई हवा से भरा हुआ हो, तो हवा के अणु सिलिण्डर के सब

पार्श्वों और दोनों सिरों पर बमवारी करेंगे। सिलिण्डर में चलने की कोई प्रवृत्ति होगी, क्योंकि उसके प्रत्येक सिरे पर उतने ही अणु बमवारी कर रहे होते हैं।

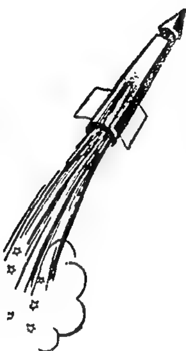


पर यदि हम सिलिण्डर का एक सिरा एकाएक हटा दें तो सिलिण्डर चलने को प्रवृत्त होगा। यह बन्द सिरे की दिशा में चलेगा। कारण यह है कि खुले सिरे पर अब ऐसी कोई चीज नहीं, जिसपर हवा के परमाणु टक्कर मार सकें। इस बमवारी से सिलिण्डर चलने को प्रवृत्त होगा। दूसरे शब्दों में, सिलिण्डर के सिरे पर बमवारी करनेवाले अणुओं की क्रिया सिलिण्डर के चलने की प्रतिक्रिया पैदा करती है।

वास्तव में वायु इतनी तेज़ी से निकलकर भागेगी कि संचलन बहुत हलका होगा ; पर यदि सिलिण्डर के अन्दर ऊंची दाव कायम रखी जा सके तो वह बंद सिरे पर अणुओं की बमवारी से आगे चलता रहेगा। प्रतिक्रिया इंजन में यही होता है। ऊंची दाव कायम रखने के लिए ईंधन जलाया जाता है। परिणामतः धक्का बना रहता है।

आप घीया की शकल के मामूली रबड़ के गुब्बारे से एक तरह का प्रतिक्रिया-इंजन बना सकते हैं। गुब्बारे में फूंक भरिए, उसे अपनी हथेली पर रखिए और फिर मुंह से हटा दीजिए! पर यह परीक्षण रहने के कमरे में, या ऐसे स्थान में नहीं करना चाहिए जहां गिर सकनेवाली वस्तुएं रखी हों, क्योंकि जब तक गुब्बारे में से हवा नहीं निकलेगी तब तक वह एक या दो क्षण तक बड़ी तेज़ी से चारों ओर घूमता रहेगा। याद रखिए कि गुब्बारा इस कारण नहीं चलता कि हवा मुंह में से निकल रही है, बल्कि इस कारण चलता है कि गुब्बारे में दबी हुई हवा के अणु गुब्बारे के बन्द, सामनेवाले सिरे पर बमवारी कर रहे हैं। वे गुब्बारे को आगे धकेल रहे हैं।





प्रतिक्रिया-इंजन के दो रूप

प्रतिक्रिया-इंजन के दो रूप होते हैं। वे बुनियादी तौर से एक-दूसरे से इस बात में भिन्न होते हैं कि एक में ईंधन के साथ आक्सीजन भी होती है जबकि दूसरे में वह नहीं होती। आपको याद होगा कि हर ईंधन के जलने के लिए आक्सीजन की ज़रूरत होती है। पहले प्रकार का प्रतिक्रिया-इंजन, जो 'रासायनिक ईंधन' या 'राकेट' प्रतिक्रिया-इंजन कहलाता है, अपनी आक्सीजन अपने साथ रखता है। दूसरे प्रकार का प्रतिक्रिया-इंजन जो वायु-प्रवाह-इंजन कहलाता है, आवश्यक आक्सीजन के लिए हवा पर निर्भर होता है।

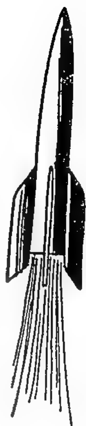
रासायनिक ईंधन-प्रतिक्रिया-इंजन

शायद आकाशीय राकेट रासायनिक ईंधन-प्रतिक्रिया-इंजन का सबसे प्रसिद्ध उदाहरण है। यह बारूद जैसे किसी रासायनिक यौगिक के अणुओं में बंधी आक्सीजन अपने लिए अपने साथ रखता है। बारूद गन्धक, कार्बन और पोटैशियम नाइट्रेट से बना होता है। पोटैशियम नाइट्रेट का रासायनिक सूत्र KNO_3 है (प्रत्येक अणु में एक परमाणु पोटैशियम का, एक परमाणु नाइट्रोजन का और तीन परमाणु आक्सीजन के होते हैं)। जब बारूद प्रज्वलित किया जाता है, तब आक्सीजन और कार्बन मिलाकर कार्बन डाइआक्साइड (CO_2) बनाते हैं। पोटैशियम नाइट्रेट के अणुओं के टूटने से नाइट्रोजन मुक्त हो जाती है।

कार्बन डाइआक्साइड और नाइट्रोजन गैसें है और उनके अणु राकेट सिलिण्डर में घिरे हुए स्थान पर बमबारी करते हुए चारों ओर तेज़ी से दौड़ते है। सिलिण्डर का पिछला सिरा खुला होने के कारण उस सिरे से अणु बिना रुकावट बाहर जा सकते हैं। इसलिए सिलिण्डर के अगले बन्द सिरे पर बमबारी करते हुए अणुओं की क्रिया वह प्रतिक्रिया पैदा करती है जो राकेट को आगे धकेलती है।

इसे स्पष्ट करने के लिए एक तेज़ दौड़ते हुए अणु को देखिए,

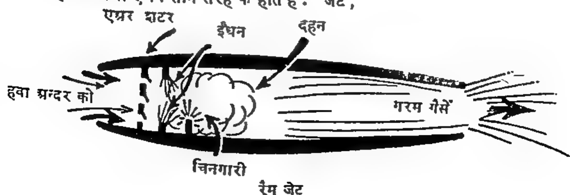
जो राकेट सिलिण्डर के अगले बन्द सिरे की ओर तेजी से आगे दौड़ रहा है। यह अगले सिरे पर टकराता है और विपरीत दिशा में उछल जाता है। इस प्रकार यह अणु सिलिण्डर को आगे की ओर एक बहुत बड़ा धक्का देता है। यदि सिलिण्डर का पिछला सिरा बंद होता, तो अणु पिछले सिरे से टकराता और सिलिण्डर को पीछे की ओर को हलका धक्का देता। ये दोनों धक्के एक-दूसरे को प्रायः संतुलित कर देते और सिलिण्डर में चलने की कोई प्रवृत्ति न होती। पर पिछला सिरा खुला होने के कारण सिलिण्डर को आगे की ओर धक्का देने के बाद अणु राकेट सिलिण्डर से बाहर निकल जाता है। जरा सोचिए कि अरबों-खरबों अणु यही क्रिया कर रहे हैं। अब आप समझ सकते हैं कि ये अरबों अणु, जो आगे की ओर दौड़ते हैं और सिलिण्डर के अगले सिरों पर बमबारी करते हैं, किस प्रकार राकेट को आगे की ओर एक प्रबल धक्का देते हैं।



अगले अध्याय में हम राकेटों पर अधिक बारीकी से विचार करेंगे। मनुष्य हवा में सैकड़ों मील दूर राकेट भेज चुका है। शायद हाल में ही किसी दिन कोई अन्तरिक्षयान, जो राकेट इंजनों से चल रहा होगा, मनुष्य को चन्द्रमा, मंगल और अन्य उपग्रहों में ले जाएगा।

वायु-प्रवाह (एयर-स्ट्रीम) प्रतिक्रिया-इंजन

वायु-प्रवाह-प्रतिक्रिया-एंजन तीन तरह के होते हैं: 'जेट',

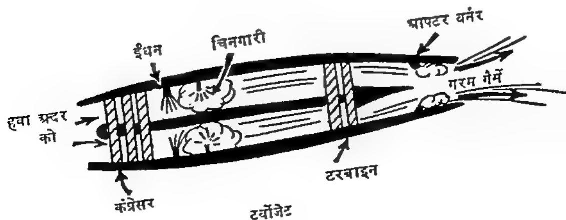


रैम जेट

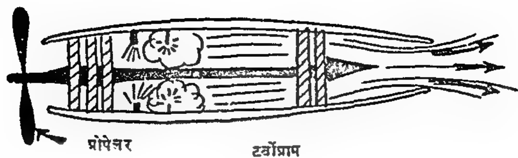
'रैम जेट' और 'टर्वोप्राप जेट'। इन सबमें ईंधन के जलने के लिए आवश्यक आक्सीजन चारों ओर की हवा से ली जाती है।

इन तीनों में रैम जेट सबसे सादा होता है। साररूप में यह एक लम्बी नली होती है जिसमें एयर शटर, ईंधन छिड़कने की व्यवस्था और अगले सिरे पर एक स्पार्क प्लग होता है। जब रैम जेट तेज़ चाल से आगे की ओर चलता है, तब हवा लेनेवाले सिरे पर संचलन के ज़ोर से हवा घुस आती है। तब हवा में ईंधन छिड़का जाता है और एक चिनगारी इसे प्रज्वलित कर देती है। दहन से ऊंची दाब पैदा हो जाती है, जिससे एयर शटर थोड़ी देर को बंद हो जाते हैं। यह ऊंची दाब अगले सिरे से नहीं निकल सकती। इसलिए ऊंची दाबवाली गैसों को नली के पिछले हिस्से से भागना होगा।

ऊंची दाब चूंकि अगले सिरे पर होती है और वह पिछली तरफ मुक्त होती है, इसलिए यह रैम जेट को आगे को धकेलती है। ज्योंही ऊंची दाब खत्म हो जाती है, त्योंही आगे की ओर संचलन से एयर शटर खुल जाते हैं जिससे अधिक वायु अन्दर घुस सकती है। फिर ईंधन हवा में छिड़का जाता है और दहन दुबारा होता है। ये क्रियाएं बार-बार दोहराई जाती हैं।



टर्वोजेट



विमानों के लिए जेट और टर्बोजेट बहुत अधिक सन्तोषजनक हैं, क्योंकि उनसे एक समान धक्का लगता है। रैम जेट से जोर के धक्के लगते हैं, पर उनके बीच में रुकावट आ जाती है। जेट इंजन भी एक लम्बी नली होती है। इसमें एक घुमानेवाला तंत्र रहता है, जो दहन कोठरी में हवा खींचता है। घुमानेवाले तन्त्र के पीछे एक टरबाइन होता है जो एक शैफ्ट द्वारा कम्प्रेसर रोटर से जुड़ा रहता है। कार्य करने के समय ऊंची दाबवाली गैसें टरबाइन को घुमाती हैं; और टरबाइन कम्प्रेसर रोटर को घुमाता है। कम्प्रेसर रोटर दहन कोठरी में लगातार हवा खींचता रहता है। ईंधन संपीडित वायु में लगातार बौछार रूप में पड़ता रहता है, और यह स्थिर ज्वाला से जलता है। इस प्रकार दहन कोठरी गर्म ऊंची दाबवाली गैस से निरन्तर भरी रहती है। यह गैस टरबाइन में से गुजरती है और नली के पिछले हिस्से में से बाहर हो जाती है। कम्प्रेसर में अगले सिरे पर ऊंची दाब है, पर पिछले सिरे पर दाब हट जाती है। इसलिए ऊंची दाब जेट को आगे धकेलती है। बहुत-से जेटों में एक आफ्टर बरनर (बाद में जलानेवाला) होता है। यह जेट की टेल के पास रखा हुआ साधन गर्म गैसों के प्रवाह में और ईंधन छिड़कता रहता है और आगे की ओर को अतिरिक्त धक्का पैदा करता है।

टर्बोप्राप इंजन जेट से बहुत मिलता-जुलता होता है। इसमें एक और हिस्सा, प्रोपेलर, होता है। प्रोपेलर और ऐग्जास्ट जेट,

दोनों विमान को धकेलते हैं। प्रोपेलर को टरबाइन घुमाता है। टर्बोप्राप इंजन का टरबाइन बहुत भारी और बड़ा होता है, जिससे वह यह अतिरिक्त काम कर सके। टर्बोप्राप इंजन विमान को उतना तेज नहीं चलाता जितना जेट इंजन, पर यह अधिक कार्यदक्ष होता है।

इन पिछले दो अध्यायों में हमने विमानों के तीन प्रकार के इंजनों पर विचार किया है: पिस्टन इंजन, जेट और टर्बोप्राप। पिछले दो इंजन अभी नये हैं और आप सोच सकते हैं कि वे शीघ्र ही पिस्टन इंजन का स्थान ले लेंगे, पर वैज्ञानिक कहते हैं कि ऐसी सम्भावना नहीं है। पिस्टन इंजन अपेक्षाकृत हलकी चाल और छोटी यात्राओं के लिए बहुत अच्छा है। लम्बी यात्राओं के लिए टर्बोप्राप उससे अच्छा है, क्योंकि यह विमान को अधिक तेज चाल से चला सकता है; और अनेक दृष्टियों से यह एक सरल इंजन है। एक समुद्र-तट से दूसरे समुद्र-तट की, या महासागरों के आर-पार यात्राओं के लिए जेट पसन्द किया जाता है। यह विमान को ६०० मील प्रति घंटे तक की चाल से धकेल सकता है। इसका अर्थ यह है कि आप न्यूयार्क से उड़कर लगभग पांच घण्टे में कैलीफोर्निया पहुंच सकते हैं।

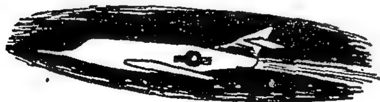
ध्वनि-बाधा (साउंड बैरियर)

सुधरे हुए पिस्टन इंजनों, जेटों और राकेटों से विमान अधिकाधिक तेज उड़ाए जाने लगे हैं। अब से कुछ वर्ष पहले लोग ऐसी बाधा पर पहुंच गए थे, जिसने कुछ समय तक चाल में और वृद्धि रोक दी। यह बाधा लगभग ७६० मील प्रति घण्टे पर प्रतीत होती थी। जब कोई विमान इस चाल पर पहुंचता था, तब वह एकाएक कांपने और उछलने लगता था। मानो वह दबाई हुई हवा के घने समूहों पर टकरा रहा हो। कभी-कभी यह टक्कर इतनी तेज होती थी कि पंख विमान से टूटकर अलग जा पड़ते थे।



बात यह थी कि विमान 'ध्वनि' की बाधा पर पहुंच गया था—इसे ध्वनि की बाधा इसलिए कहते थे क्योंकि इसका ध्वनि की चाल से सीधा सम्बन्ध था। असल में ७६० मील प्रति घंटा, समुद्र-तल पर ध्वनि की चाल है। आपको याद होगा कि (अध्याय पन्द्रह में) ध्वनि पर विचार करते हुए हमने देखा था कि ध्वनि संपीडिका तरंगों की श्रेणी के रूप में चलती है। हवा के अणु धक्के से इकट्ठे हो जाते हैं और ये संपीडित क्षेत्र ध्वनिस्रोत से बाहर की ओर चलते हैं।

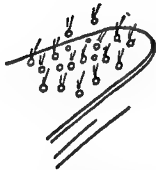
जब कोई विमान ध्वनि की चाल से धीमे चलता है, तब विमान से बननेवाली ध्वनि-तरंगें विमान से आगे-आगे चलती जाती हैं, पर जब विमान की चाल बढ़कर ध्वनि की चाल के बराबर हो जाती है, तब यह ध्वनि-तरंगों के साथ-साथ चलता है। इस समय संपीडिका तरंगें विमान से आगे नहीं जा सकतीं। इसलिए वे विमान के पंखों और फ्यूज़लेज या धड़ के आगे इकट्ठी हो जाती हैं। परिणामतः विमान के आगे ऊंची दाब-वाली हवा की एक दीवार खड़ी हो जाती है। अब यदि विमान इससे तेज़ जाना चाहता है, तो उसे इस दीवार को तोड़कर जाना होगा। आप समझ सकते हैं कि इस बाधा को तोड़कर आगे जाना विमान के लिए कितना कठिन होगा।



डगलस स्काई राकेट

ध्वनि की चाल से अधिक तेज़ चाल पर चलता हुआ विमान ध्वनि-तरंगों को पीछे छोड़ जाता है, जहां वे विमान को कोई कष्ट नहीं दे सकतीं। चाल बढ़ाते या घटाते हुए जब विमान ध्वनि बाधा में से गुज़रता है, तभी उसे संपीडिका तरंगों का

सामना करना पड़ता है। लोगों ने विमानों के नये रूप बनाए हैं, जिनसे वे बिना किसी कठिनाई के इस बाधा को पार कर लेते हैं। ऐसे विमान 'सुपर-सोनिक' विमान कहलाते हैं। सोनिक का अर्थ है ध्वनि। इस प्रकार सुपर सोनिक का अर्थ है ध्वनि से अधिक तेज। उदाहरण के लिए डगलस 'स्काई राकेट' एक सुपर सोनिक विमान है, जो ध्वनि की चाल से दुगुनी चाल पर उड़ चुका है। उसकी सुई जैसी नाक (अगला भाग) और पतले पीछे को सिमटे हुए पंख देखिए। इस रूप के कारण विमान ध्वनि-बाधा या ऊंची दाबवाले क्षेत्र को काफी आसानी से काटता चला जाता है।



पंख तलों पर चोट करने वाली हवा के अणु धातु को गरम कर देते हैं

ऊष्मा-बाधा (हीट बैरियर)

और अधिक तेज चाल हो जाने पर एक और समस्या आती है। यह समस्या है गर्मी या ऊष्मा की।

क्या आपको याद है कि हमने अध्याय पांच में ऊष्मा की क्या परिभाषा की थी? हमने कहा था कि अणुओं का एक विशेष चाल से चलना ही ऊष्मा है। जब अणु धीरे-धीरे चलते हैं, तब वस्तु ठण्डी होती है। जब अणु तेजी से चलते हैं, तब वस्तु गर्म हो जाती है।

अब यह देखिए कि विमान को वायु में अधिकाधिक तेज चलाने पर गर्मी का उसपर क्या प्रभाव पड़ता है। हम ध्वनि की चाल से बहुत दूर निकल जाते हैं और मान लीजिए कि १५०० मील प्रति घंटा की चाल पर पहुंच जाते हैं। इस वेग पर हवा के अणु तेज चाल से पंखों के पास चल रहे हैं, अर्थात् हवा के अणु-पंखों पर बहुत जोर से और बार-बार चोट कर रहे हैं, पर यही बात तो अंगीठी पर रखी हुई पतीली पर होती है। आग में से तेजी से चलते हुए अणु पतीली से टकराते हैं और इसे गर्म कर देते हैं। इसी प्रकार विमान के पंखों और फ्यूज़लेज से टकराकर हवा के अणु उन्हें गर्म कर देते हैं।

विमान जितना तेज़ चलेगा, उसके पंखों और धड़ की धातु उतनी ही गर्म हो जाएगी। तेज़ चाल पर पंख इतने गर्म हो जाएंगे कि धातु नरम और बेकार हो जाएगी। बहुत तेज़ चालवाले विमानों की यह एक बड़ी समस्या है। एक सुझाव यह है कि विमानों को बहुत अधिक ऊंचाई पर उड़ाया जाए, जहां बहुत ही कम हवा है, जो पंखों पर टकराकर उन्हें गर्म न कर सके। पर यदि वहां हवा बहुत कम है तो विमान को आकाश में रखने के लिए आवश्यक लिफ्ट या उठाव पंखों को कौन देगा? इसके जो और समाधान सुझाए गए हैं, उनमें पंखों को ठण्डा रखना और बहुत ऊंचे तापों पर कठोर रहनेवाली धातु प्रयोग करना है। पंखों को अच्छी तरह ठण्डा करने के लिए बहुत सारे और भारी सामान की जरूरत होगी और विमान सिर्फ वही बोझ ले जा सकेगा। दूसरी ओर ऊंचे तापों पर नरम न पड़नेवाली धातुओं का प्रयोग बहुत लाभदायक हो सकता है।

राकेटों के प्रयोग से, जो विमान को वायुमण्डल में से ऊपर ले जाएंगे, गर्मी या ऊष्मा की समस्या से बचाया जा सकता है; सिर्फ उस समय यह समस्या रहेगी, जब विमान ऊपर जाता हुआ वायुमण्डल में से गुज़रेगा या ज़मीन पर उतरेगा।

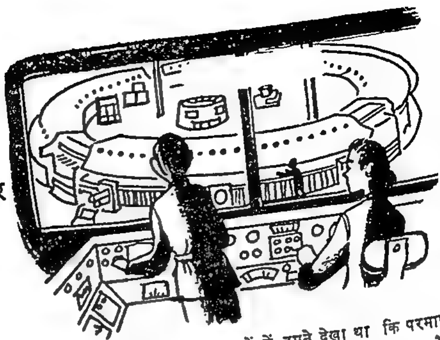
बहुत अधिक ऊंचाइयों पर ऊष्मा बाधा नहीं होती





अध्याय तीस

नाभिकीय विज्ञान और परमाणु-शक्ति



दूसरे और तीसरे अध्यायों में हमने देखा था कि परमाणु प्रोटानों, न्यूट्रानों और इलेक्ट्रानों के बने होते हैं। प्रोटान और न्यूट्रान परमाणु के नाभिकों में केन्द्रित हैं। प्रोटानों की संख्या से यह निर्धारित होता है कि वह परमाणु आक्सीजन, लोहा, तांबा यूरेनियम या कोई और तत्त्व है।

बहुत समय तक लोग यह समझते रहे कि परमाणुओं का विभाजन नहीं हो सकता, आप अणुओं को तो परमाणुओं में खंडित कर सकते हैं। वे कहते थे कि बस इससे आगे और कुछ नहीं हो सकता। वे बताते थे कि आप किसी परमाणु से कुछ इलेक्ट्रान ले सकते हैं, पर परमाणु का नाभिक या न्यूक्लियस नहीं तोड़ा जा सकता।

पर परमाणु के बारे में आगे अध्ययन करने पर लोगों ने यह देखा कि यह बात गलत है। क्योंकि कुछ परमाणु अपने प्रोटान छोड़ देते हैं और एक तत्त्व से दूसरे तत्त्व में बदल जाते हैं। उदाहरण के लिए, रेडियम का एक परमाणु, जिसके नाभिक में ८८ प्रोटान होते हैं, आपसे-आप बदल जाता है। यह बारी-बारी ६ प्रोटान छोड़कर सीसा बन जाता है। इस तरह प्रोटान

छोड़ता हुआ रेडियम परमाणु रेडिएशन या विकिरणों और ऊष्मा या गर्मी के रूप में बहुत-सी ऊर्जा (शक्ति) भी छोड़ता है। इस प्रकार भिन्न तत्त्वों में बदल सकनेवाले तत्त्व थोड़े-से ही हैं।

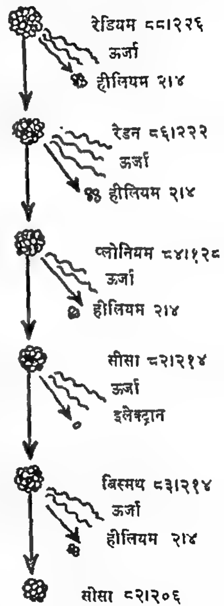
दूसरी ओर तत्त्वों के नाभिकों में और प्रोटान जोड़कर भी उन्हें बदला जा सकता है। उदाहरण के लिए, हमने अध्याय तीन में बताया था कि मनुष्यों ने यूरेनियम तथा अन्य भारी तत्त्वों के परमाणुओं पर नाभिकीय गोलियों से बमबारी करके नये तत्त्वों की एक पूरी की पूरी श्रेणी की रचना की है। इन बमबारियों से परमाणुओं को तोड़ा भी जा सकता है। जब परमाणु बदलते हैं तब दोनों ही अवस्थाओं में ऊर्जा मुक्त होती है। ऊर्जा का यह मुक्त होना ही परमाणु ऊर्जा का आधार है।

परमाणु को तोड़ना

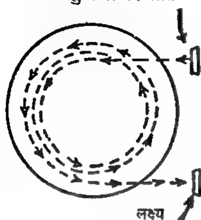
परमाणु के भीतरी भाग का या परमाणुओं के नाभिकों का अध्ययन 'नाभिकीय विज्ञान' कहलाता है। नाभिक की भीतरी बनावट के बारे में और अधिक जानकारी प्राप्त करने की कोशिश करते हुए मनुष्यों ने आश्चर्यजनक उपकरण बनाए हैं, क्योंकि नाभिक-सम्बन्धी ज्ञान मनुष्य जाति के लाभ के लिए अनेक प्रकार से काम में लाया जा सकता है। हम परमाणुओं को इस तरह तोड़ने की जानकारी प्राप्त कर चुके है, जिससे ऊर्जा की बहुत बड़ी राशियां प्राप्त हों। इस परमाणु ऊर्जा से पनडुब्बियां चलाई जा रही हैं और बिजलीघरों में जनरेटर चलाए जा रहे हैं; और हमने अस्थायी परमाणु (जैसे रेडियम अस्थायी परमाणु है) बनाना सीख लिया है। ऐसे अस्थायी परमाणु इलाज, खेती और उद्योग के बहुत-से कामों में आते हैं। इसपर हम आगे फिर विचार करेंगे।

पहले एक प्रकार के परमाणु खण्डक पर विचार कीजिए। पृष्ठ १७४ के ऊपर दिए हुए चित्र से आप समझ सकते हैं कि यह पुए की शक्ल की वस्तु होती है। इसके भीतर एक खोखला घेरा होता है। एक वैकुअम पम्प घेरे में बहुत अधिक शून्य बनाए रखता है। घेरे के चारों ओर भारी विद्युत्-चुम्बक होते हैं।

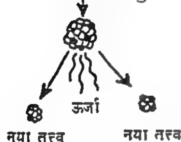
रेडियम का सीसे में तत्त्वांतरण (बदलना)



दाईं ओर के अंक तत्त्व के परमाणु के प्रोटानों और परमाणु-भारों के सूचक हैं



परमाणु खंडक क्रिया करता हुआ



खंडन—कण परमाणु को तोड़कर नए तत्व बना देता है



सायुज्यन—कण परमाणु से मिलकर नया तत्व बनाता है

परमाणु खण्डक इस प्रकार कार्य करता है : प्रोटानों या अन्य परमाणु कणों पर घेरे में निशाना मारा जाता है। वहां विद्युत्-चुम्बक से बननेवाले प्रत्यावर्ती चुम्बकीय क्षेत्र कणों को आगे धकेलते हैं। कण प्रत्येक परिक्रमा के साथ एक अतिरिक्त चुम्बकीय धक्का प्राप्त करके अधिकाधिक तेज़ी से चक्कर काटते हैं। अन्त में जब वे अभीष्ट चाल से चलने लगते हैं, जो १,००,००० मील प्रति सेकंड से काफी अधिक होती है, तब वे घेरे से उड़कर एक लक्ष्य पर पड़ते हैं। यह लक्ष्य उन परमाणुओं का बना होता है जिन्हें खंडित करता है।

परमाणुओं के कण विभिन्न प्रकार के परमाणुओं पर अलग-अलग ढंग से क्रिया करते हैं—क्रिया की रीति कणों के प्रकार, उनकी चाल और लक्ष्य परमाणुओं के प्रकार पर निर्भर होती है। कुछ अवस्थाओं में लक्ष्य परमाणु सचमुच खण्डित होकर छोटे परमाणुओं के रूप में आ जाते हैं। दूसरी अवस्थाओं में परमाणु कण लक्ष्य परमाणुओं से मिलकर अधिक बड़े और अधिक जटिल परमाणु बना लेते हैं।

विखण्डन और सायुज्यन

जब परमाणु टूटते हैं, तब यह प्रक्रम 'विखंडन' (फिशन) कहलाता है। जब परमाणु कण परमाणुओं में घुसकर नये अधिक संकुल परमाणु बनाते हैं, तब वह प्रक्रम 'सायुज्यन' (फ्यूजन) कहलाता है। दोनों प्रक्रमों में बहुत बड़ी मात्रा में ऊर्जा मुक्त होती है। ऊर्जा का यह मुक्त होना ही परमाणु-शक्ति और परमाणु बम का आधार है।

सन् १६०५ में प्रसिद्ध जर्मन-स्विस वैज्ञानिक अलबर्ट आइन्स्टीन ने खंडन या सायुज्यन से पैदा हो सकनेवाली ऊर्जा की मात्रा के बारे में एक सिद्धान्त बनाया। यह संहति और ऊर्जा की तुल्यांकता का सिद्धांत है। सरल भाषा में इसका अर्थ यह है कि प्रत्येक भौतिक पदार्थ को ऊर्जा में बदला जा सकता है; और इसी तरह ऊर्जा को भौतिक पदार्थों में बदला जा सकता है।

एकाएक आप यह समझेंगे कि यह वही चीज है जो सामान्य

दहन में होती है। पर आपको याद होगा कि दहन में परमाणु स्वयं अपरिवर्तित रहते हैं। जब कोयला जलता है तब राख रह जाती है, और शेष कोयला कार्बनडाइआक्साइड और अन्य गैसों के रूप में चिमनी से बाहर निकल जाता है। आइन्स्टीन के सूत्र के अनुसार, जब कोई पदार्थ ऊर्जा में परिवर्तित किया जाता है, तब परमाणु लोप हो जाते हैं। वे प्रकाश, ऊष्मा और अन्य विद्युत्-चुम्बकीय तरंगों में परिवर्तित हो जाते हैं जो सबके सब ऊर्जा के रूप हैं।



आइन्स्टीन के सरल सूत्र के अनुसार प्राप्त होनेवाली ऊर्जा परिवर्तित किए जानेवाले पदार्थ की संहति या भार गुणा प्रकाश का वेग गुणा प्रकाश का वेग के बराबर होती है; अथवा समीकरण के रूप में :

$$E = MC^2$$

जिसमें E ऊर्जा है, M संहति है और C प्रकाश का वेग है। इस सूत्र का अर्थ यह हुआ कि किसी पदार्थ की १ पौंड संहति को पूरी तरह ऊर्जा में बदलने पर ऊष्मा की उतनी ही मात्रा पैदा होगी जितनी २,८०,००,००,००० पौंड कोयला जलाने से पैदा होती है!



नाभिक में
८ प्रोटान
८ न्यूट्रान

आक्सीजन का एक समस्थानिक

अभी तक वैज्ञानिक यह नहीं जान सके कि संहति को पूरी तरह ऊर्जा में कैसे बदला जाए। पर आंशिक परिवर्तन, उदाहरण के लिए, यूरेनियम तत्व के एक रूप से आरम्भ करके, किया जा सकता है। इस यूरेनियम के परमाणुओं को खण्डन-प्रक्रम द्वारा अधिक सरल परमाणुओं में खण्डित किया जा सकता है। इन अधिक सरल परमाणुओं के भार यूरेनियम परमाणुओं के भारों से कुछ कम (लगभग ०·१ प्रतिशत कम) होते हैं। इस अन्तर से उस अंश का पता चलता है जो ऊर्जा में परिवर्तित किया गया है।



नाभिक में
८ प्रोटान
९ न्यूट्रान

आक्सीजन का एक समस्थानिक

जब सायुज्यन के प्रक्रम से परमाणुओं को संयोजित किया जा सकता है, तब जिन परमाणुओं से हमने प्रक्रम शुरू किया था उनकी कुछ संहति ऊर्जा में बदल जाती है। उदाहरण के लिए, यदि हम दो हाइड्रोजन परमाणुओं के नाभिक (या दो प्रोटान)



लें और उन्हें दो न्यूट्रानों से मिला दें तो अन्त में हमें एक होलियम परमाणु प्राप्त होगा। संहति में लगभग ०·७५ प्रतिशत की कमी होगी। यह संहति ऊर्जा में बदल जाती है।

इस प्रकार आप समझ सकते हैं कि यद्यपि संहति को पूरी तरह ऊर्जा में नहीं बदला जा सकता, पर आंशिक परिवर्तन किए जा सकते हैं और इन आंशिक परिवर्तनों से ऊर्जा की बहुत मात्रा मुक्त होगी।

विखण्डन प्रक्रम

विखण्डन से पैदा होनेवाली परमाणु ऊर्जा की कहानी कहने से पहले हमें परमाणुओं के बारे में एक तथ्य और बता देना चाहिए। वह तथ्य यह है कि एक तत्त्व के सब परमाणु नाभिक सर्वसम, अर्थात् सब दृष्टियों से एक-से, नहीं होते। उनमें न्यूट्रानों की संख्या अलग-अलग हो सकती है।

एक तत्त्व के ये विविध रूप 'समस्थानिक या आइसोटोप' कहलाते हैं। अधिकतर तत्त्वों के एक से अधिक रूप या आइसोटोप होते हैं। आक्सीजन के तीन समस्थानिक होते हैं। यूरेनियम के दो समस्थानिक होते हैं। अधिक परिचित यूरेनियम में ९२ प्रोट्रान और १४६ न्यूट्रान होते हैं, और इसका परमाणु भार २३८ होता है। यूरेनियम के कम परिचित समस्थानिक में भी ९२ प्रोटान होते हैं। पर न्यूट्रान सिर्फ १४६ तथा परमाणु भार २३५ होता है। इन दोनों समस्थानिकों को आम तौर से 'यू-२३८' और 'यू-२३५' कहा जाता है। यूरेनियम के प्रत्येक १४० परमाणुओं में से लगभग एक यू-२३५ होता है और शेष यू-२३८ होते हैं।

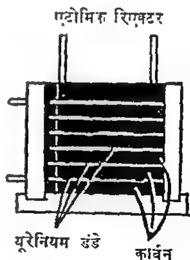
यू-२३५ में न्यूट्रानों की कमी से इसके परमाणुओं में एक विचित्र प्रकार की अस्थायिता आ गई प्रतीत होती है। यदि कोई घूमता हुआ न्यूट्रान यू-२३५ परमाणु के नाभिक में पहुंच जाए, तो नाभिक प्रायः कम से कम दो टुकड़ों में टूट जाएगा। ये टुकड़े तेज चाल से एक-दूसरे से परे हो जाएंगे। इनमें शुरू के यू-२३५ परमाणु के सब प्रोटान और अधिकतर न्यूट्रान होते हैं।

उदाहरण के लिए, हो सकता है कि एक टुकड़े में ५६ प्रोटान और ८२ न्यूट्रान हों। यह टुकड़ा बेरियम तत्त्व का एक परमाणु है। दूसरे टुकड़े में ३६ प्रोटान और ४८ न्यूट्रान हो सकते हैं। यह क्रिप्टान नामक तत्त्व का एक परमाणु है। इस प्रकार सब प्रोटान पूरे हो जाते हैं, पर कुछ न्यूट्रान बाकी रह जाते हैं। ये न्यूट्रान सब दिशाओं में उड़ जाते हैं।

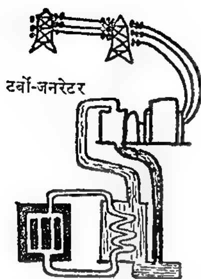
यदि आसपास यू-२३५ के और परमाणु हों, तो हो सकता है कि पहले खण्डन से बचे हुए न्यूट्रान उनमें से कुछ में भी खण्डन पैदा कर देंगे। असल में यदि आसपास काफी यू-२३५ परमाणु हैं, तो शृंखला-प्रक्रिया (चेन रिऐक्शन) शुरू हो जाएगी। क्या इससे आप समझ सकते हैं कि परमाणविक शृंखला-प्रक्रियावाली 'पाइल' में क्या होता है?

परमाणु-शक्ति भट्ठी (रिएक्टर)

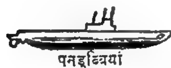
शृंखला-प्रक्रियावाले पाइलों या परमाणु-शक्ति भट्ठियों में यूरेनियम की बड़ी राशियां होती हैं। यूरेनियम को दूसरी वस्तुओं के साथ इस तरह सावधानी से रखा जाता है, जिससे शृंखला-प्रक्रिया चलती रह सके, पर फिर भी नियंत्रित रहे। यदि वह बिना नियंत्रण चलती रहे, तो भयंकर विस्फोट पैदा करेगी। परमाणु बम में इसी प्रकार का प्रक्रम होता है : यू-२३५ की संहतियां इस प्रकार रखी जाती हैं कि अनियंत्रित शृंखला-प्रक्रिया पैदा होती है। सब यू-२३५ परमाणु एकदम टूट जाते हैं, जिससे खण्डन ऊर्जा मुक्त होकर विकिरण और गर्मी की अन्धा करनेवाली चमक पैदा होती है।



बहुत-सी भट्ठियों में प्रयुक्त यूरेनियम सामान्य यूरेनियम होता है। १४० परमाणुओं में सिर्फ एक परमाणु यू-२३५ होता है, शेष यू-२३८ होते हैं। यह मिश्रण कुछ समस्याएं पैदा करता है जिन्हें शृंखला-प्रक्रिया शुरू होने से पहले हल कर लेना जरूरी है, क्योंकि यू-२३५ परमाणु तो न्यूट्रानों को पकड़ने पर खण्डित होंगे पर यू-२३८ परमाणु खण्डित नहीं होंगे। पर फिर भी, क्योंकि वहां यू-२३८ परमाणु १४० गुने हैं इसलिए ये अधिकतर



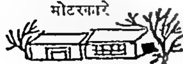
परमाणु ऊर्जा
पावर प्लांट


पनडुब्बियां


जहाज़


विमान


मोटरकारें


मकान गर्म करना

न्यूट्रानों को पकड़ लेंगे। इस प्रकार शृंखला-प्रक्रिया तब तक आरम्भ नहीं होगी जब तक हम यू-२३५ परमाणुओं के लिए अधिक न्यूट्रान पकड़ना सम्भव न कर दें। न्यूट्रान की चाल हलकी करके हम यह कर सकते है, क्योंकि यू-२३८ परमाणु हलके न्यूट्रानों को प्रायः नहीं पकड़ते, पर यू-२३५ परमाणु उन्हें पकड़ लेंगे।

न्यूट्रानों की चाल कम करने के लिए यूरेनियम डण्डों की शकल में भट्ठी में रखा जाता है और डण्डों के चारों ओर कार्बन जैसा कोई न्यूट्रानों की चाल कम करनेवाला या मॉडरेटर रखा जाता है। अब जब कोई यू-२३५ परमाणु टूटता है और कई न्यूट्रान छोड़ता है, तब कार्बन में गुजरते समय न्यूट्रानों की चाल हलकी हो जाती है। इसलिए दूसरे यू-२३५ परमाणुओं द्वारा इनके पकड़े जाने की और उनके खण्डित किए जाने की बहुत गुंजाइश हो जाती है। यूरेनियम डण्डों और कार्बन का अनुपात बदलकर शृंखला-प्रक्रिया को तेज या हलका किया जा सकता है।

शृंखला-प्रक्रिया में बहुत अधिक गर्मी या ऊष्मा पैदा होती है। इस ऊष्मा का पानी उबालने और भाप बनाने में प्रयोग किया जा सकता है, तब उस भाप का भाप की चरखी चलाने में प्रयोग हो सकता है और उससे कोई मशीन या बिजली का जनरेटर चलाया जा सकता है। परमाणु ऊर्जा से बिजली की मात्रा का अधिकाधिक उत्पादन किया जा रहा है। किसी दिन हमारे प्रयोग में आनेवाली अधिकतर बिजली इसी प्रकार बनाई जाएगी।

पनडुब्बियां अब भी परमाणु ऊर्जा से चल रही हैं। वैज्ञानिक कहते हैं कि जहाज, रेल के इंजन और विमान भी और सम्भवतः मोटरकारें भी किसी दिन इसीका प्रयोग करेंगी; और शायद किसी दिन मकान भी तहखाने में लगे हुए एक छोटे रिऐक्टर से गर्म किए जाएंगे। छोटी भट्ठी में, जिसका प्रयोग मोटरकार या मकान में हो सके, बड़ी समस्या यह है कि उसके रेडिएशन या विकिरण से बचना होगा। इसकी चर्चा नीचे की गई है।

खतरा !



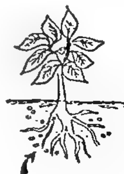
यू-२३५ के खण्डन से न केवल गर्मी ही पैदा होती है, वल्कि खतरनाक विकिरण (रेडिएशन) भी पैदा होते हैं। इन विकिरणों का जीवित वस्तुओं पर बहुत प्रभाव होता है। कुछ क्षण भी उन्हें स्पर्श करनेवाला व्यक्ति बीमार होकर मर जाएगा। इस कारण परमाणु भट्ठियों के चारों ओर कंकरीट या अन्य सामान की मोटी दीवारें बनाकर सावधानी से बचाव किया जाता है। कई फुट मोटी दीवारें विकिरणों को हलका कर देती हैं और अन्त में रोक देती हैं।

पर एक और भी खतरा है। खंडन प्रक्रम से होनेवाले विकिरण आसपास के पदार्थों को इस तरह बदल देते हैं कि वे पदार्थ भी खतरनाक विकिरण करने लगें। ऐसे पदार्थ रेडियो-ऐक्टिव या विकिरणशील हो गए कहे जाते हैं। उदाहरण के लिए, मान लो कि किसी परमाणु-भट्ठी में हवा घुस जाए और फिर वह निकल जाए—यह हवा रेडियो-सक्रिय हो जाएगी और इसे सांस में लेना खतरनाक होगा।


रेडियो एक्टिविटी डिटेक्टर

रेडियो-ऐक्टिव द्रव्यों का प्रयोग करना

पर रेडियो-ऐक्टिविटी का लाभदायक प्रयोग किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, किसी परमाणु-भट्ठी में रेडियो-ऐक्टिव बनाए गए द्रव्यों की थोड़ी मात्रा पौधों की खाद में मिलाई जा सकती है, और फिर यह खाद पौधों को दी जा सकती है। इसके बाद वैज्ञानिक बहुत अधिक संवेदक साधनों से रेडियो-ऐक्टिव खाद के पौधे में पहुंचने पर उसकी जांच करते हैं। इस जांच से उन्हें यह समझने में मदद मिलती है कि पौधे अपना भोजन कैसे प्रयोग में लाते हैं।


रेडियो एक्टिव खाद

इसी प्रकार, रेडियो-ऐक्टिव द्रव्यों के प्रयोग से यह जाना जाता है कि हमारे शरीर में ग्रन्थियां और अंग कैसे कार्य करते हैं। इसके अलावा, वे डाक्टरों को विभिन्न रोगों की पहचान और इलाज में मदद दे सकते हैं। उदाहरण के लिए, जब गरदन

में थाइराइड ग्रन्थि ठीक तरह कार्य नहीं करती, तब आदमी थका हुआ और सुस्ती अनुभव करता है, बहुत चिड़चिड़ा और नाजुक हो जाता है। रोगी को रेडियो-ऐक्टिव आयोडीन की बहुत थोड़ी मात्रा देकर डाक्टर यह निश्चय कर सकता है कि थाइराइड ग्रन्थि कितनी अच्छी तरह कार्य कर रही है। थाइराइड अलग-अलग दर से आयोडीन को चूसता है और यह दर ग्रन्थि के ठीक तरह कार्य करने की मात्रा पर निर्भर है।

सायुज्यन को अब तक नियंत्रित नहीं किया जा सका। मनुष्य ने भयंकर हाइड्रोजन बम में सायुज्यन का प्रयोग किया है, पर और किसी प्रयोजन के लिए हम इस प्रक्रम को हलका नहीं कर सके। हम पहले अध्याय चार में एक सायुज्यन प्रक्रम का उल्लेख कर चुके हैं, जिसमें हाइड्रोजन हिस्सा लेता है। सायुज्यन में हाइड्रोजन के दो नाभिक या दो प्रोटान दो न्यूट्रानों से मिलकर एक हीलियम परमाणु का नाभिक बनाते है।

इस प्रकार सायुज्यन करने के लिए बहुत अधिक ताप और दाब की आवश्यकता होती है। ऐसे ही हाइड्रोजन बम को चलाने के लिए एक विशेष झटका मारनेवाला साधन काम में लाया जा सकता है। उदाहरण के लिए, 'घोड़ा या झटका मारनेवाला' (ट्रिगर) प्रचलित यूरेनियम परमाणु-बम हो सकता है। जब परमाणु-बम फटता है, तब सायुज्यन के क्षेत्र में ताप कई करोड़ डिग्री हो जाता है। मनुष्य को ज्ञात कोई भी द्रव्य इतनी गर्मी में नहीं रह सकता। इस प्रकार कम से कम इस समय सायुज्यन की ऊर्जा को नियंत्रित करने का कोई उपाय नहीं है। हमें आशा रखनी चाहिए कि किसी दिन मनुष्य सायुज्यन प्रक्रम को हलका करने का और इसे छोटे पैमाने पर पैदा करने का तरीका निकाल लेगा जिससे इससे उपयोगी काम लिया जा सके। जब वह समय आ जाएगा तब मनुष्य जाति के पास अनन्त ऊर्जा होगी। हाइड्रोजन बहुत है और असीमित ऊर्जा से मनुष्य विज्ञान, उद्योग और कलाओं के क्षेत्र में क्या नहीं कर सकेगा!

अध्याय इकत्तीस

आविष्कारों की दुनिया

आवश्यकता आविष्कार की जननी है। मनुष्य को जिस वस्तु की आवश्यकता होती है, वह उसकी प्राप्ति के लिए प्रयत्न करता है, युक्तियां सोचता है उसके निर्माण के लिए। इस प्रकार एक-एक आविष्कार का विकसित स्वरूप सामने आने में वर्षों लग जाते हैं। उनके लिए बराबर प्रयत्न किए जाते हैं, प्रयोग में लाकर तौला। परखा जाता है—परन्तु कई बार ऐसा भी होता है कि आकस्मिक रूप से कोई वस्तु नये आविष्कार के रूप में अचानक सामने आ जाती है। उदाहरण के लिए एक्सरे का आविष्कार रोंतजन द्वारा बिल्कुल आकस्मिक रूप से हुआ, जबकि क्यूरी दंपति ने वर्षों के परीक्षण के बाद रेडियम का पता लगाया। आकस्मिक रूप से किसी नई बात की पहचान के लिए एक विशेष आंख होनी चाहिए। पानी से भरे टब में हम घुसने लगते हैं तो उसका बहुत-सा पानी छलक कर बाहर आ जाता है—पर इसे सिद्धांत रूप में आर्किमिडीज ने ही समझा—सामान्य आदमी सदियों से यह देखता आया है पर उसे इसमें कोई असामान्य बात दिखाई नहीं दी।



आर्किमिडीज प्रयोगशाला में


टेलीफोन

रडार
संकेत ग्रहण करने वाली
तश्तरी



अनेक आविष्कार युद्ध के कारणों से हुए। नाजी वैज्ञानिकों ने इंग्लैंड को नष्ट करने के लिए राकेटों और प्रक्षेपास्त्रों का आविष्कार किया था। इसी प्रकार अणु बम का पहले-पहल प्रयोग जापान को पराजित करने के लिए किया गया। रडार आदि का निर्माण मित्र राष्ट्रों ने आत्मरक्षा के लिए किया।

यह बात ठीक है कि आवश्यकता होने पर ही आदमी हाथ-पांव मारता है, परन्तु यह बात भी सच है कि किसी बात को कार्यरूप में परिवर्तित करने से पूर्व बहुत से मनीषी कल्पना लोक की उड़ान भरते हैं। आदमी ने पक्षियों को आकाश में उड़ते हुए देखा—वह सोचने लगा कि उसे भी उड़ना चाहिए। उसने अपने शरीर पर पंख चिपकाये, कृत्रिम पंख बनाकर उड़ने की कोशिश की, कितने लोगों ने अपने हाथ-पांव तुड़वाये और कष्ट उठाये, जाने दीं—पर आखिर यह सपना साकार हुआ। लियोनार्दो दा विंची ने उड़न मशीनों के ढांचे बनाये। उसके बाद की पीढ़ियों ने उसकी कल्पनाओं को अमली जामा पहनाया। इस तरह विज्ञान का यह कारवां हमेशा चलता रहता है।

सौ-सवा सौ साल पहले की बात स्मरण करके आज हंसी आती है। उस समय अमरीका के पेटेन्ट ब्यूरो के निदेशक ने कहा था, 'जितने आविष्कार होने थे, वे पूरे हो चुके है। इसलिए यह पेटेण्ट आफिस बंद कर देना चाहिए। अब इस कार्यालय की कोई आवश्यकता नहीं—क्योंकि जिन चीजों की जरूरतें थी, वे हमने तैयार कर ली हैं।' परन्तु उसके बाद जो अत्यधिक महत्वपूर्ण आविष्कार हुए हैं उनकी संख्या पिछली पूरी शताब्दियों में हुए आविष्कारों से कहीं अधिक है। बिजली के लट्टू, विमान, रेडियो, सिनेमा, मोटरकार, टेलीविजन, परमाणु भट्टी, रडार, कम्प्यूटर, रोबोट, टेलीफोन, सिलिकान चिप, कृत्रिम उपग्रह, लेसर, राकेट, वीडियो फोन, कृत्रिम हृदय रोपण, आप्टिक फाइबर, अंतरिक्ष उड़ान आदि ऐसे अद्भुत कार्य हैं जिनकी उस समय कल्पना भी प्रायः कठिन थी। इससे यही सिद्ध होता है कि मानव की और अधिक जानने, और अधिक करने की जिज्ञासा

शान्त नहीं हो सकेगी।

आज मानव ने अन्तरिक्ष की रहस्यपूर्ण पहेली को सुलझाने की पहल भी की है और नित नूतन ऐसे आविष्कार हो रहे हैं जिनमें से अनेक स्वयं मानव के लिए आश्चर्यप्रद हैं।

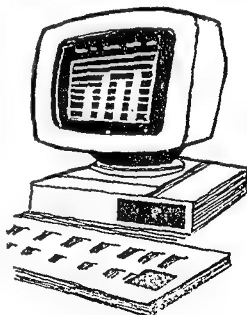
यहां विज्ञान के आविष्कारों की कुछ अत्याधुनिक प्रगति की झांकी प्रस्तुत की जा रही है। मानव को स्वयं अनुमान नहीं कि इस प्रगति की कोई सीमा है या नहीं—वस्तुतः ज्ञान अनन्त है, उसका कोई पारावार नहीं।

आज विज्ञान निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया बन चुका है। इस प्रक्रिया द्वारा पुराने आविष्कारों और वैज्ञानिक सिद्धांतों में संशोधन और परिवर्धन होते रहते हैं और अनेक नई तथा उपयोगी मान्यताओं का निर्माण होता है। इस प्रक्रिया का दूसरा चरण है—नवीन आविष्कार, खोज और वैज्ञानिक सिद्धांतों की स्थापना। आज कोई बड़े से बड़ा वैज्ञानिक भी नहीं कह सकता कि विज्ञान द्वारा प्राप्त करने को अब कुछ नहीं बचा।

आज का युग कम्प्यूटर का युग है। भारत कम्प्यूटरों के प्रयोग, निर्माण और निर्यात के क्षेत्र में विकासशील देशों में अग्रणी है।

कम्प्यूटर

प्रत्येक युग में आदमी अपने हिसाब-किताब के लिए किसी न किसी प्रकार की मशीन का प्रयोग करता आया है। पहले कंकरों, लकीरों और अंगुलियों के पोरवों पर गणना की जाती थी। उसके बाद गिनतारा (Abacus) आया। यह खिलौना यंत्र आदमी का बहुत सहायक रहा। आज भी इसका प्रयोग बन्द नहीं हुआ है। मशीन के नाम पर पहले-पहल जान नेपियर ने लघुगणक (Logarithms) का आविष्कार किया। इसमें गुणा, भाग आदि का कार्य बहुत सरलता से होता था। अंकों वाले लघुगणकों का आज भी खूब प्रयोग हो रहा है। इस कार्य के लिए स्लाइड रूल (Slide rule) का आविष्कार किया गया।



चार्ल्स बैबेज ने 19वीं शताब्दी के आरम्भ में कम्प्यूटर बनाया। वह उसमें और भी सुधार करना चाहता था पर कर न सका। कम्प्यूटर में बहुत पेचीदा विद्युत परिपथ या सरकिट

होते थे और मशीन बड़ी थी और उससे काम लेना काफी कठिन था, परन्तु जब से समाकलित (Integrated) सरकिट और ट्रांजिस्टर का निर्माण हुआ तब से कम्प्यूटर उद्योग में क्रांति हुई। यह सरकिट बहुत छोटे आकार का होता है, सस्ता और मजबूत भी होता है।

आज तो कम्प्यूटर ने संसार में क्रांति ला दी है। हिसाब के अतिरिक्त वह अन्य कई कार्य भी करता है। जो प्रश्न आदमी कई दिनों या महीनों भी में नहीं सुलझा सकता, कम्प्यूटर उन्हें चुटकी बजाते हल कर देता है। आज मनुष्य उनसे अनेक कार्य लेने लगा है। कम्प्यूटर में पहले विशेष संकेतों में आदेश और सूचनाएं भरनी होती हैं। उनसे ही कम्प्यूटर काम करता है। इसे (Programme)कहते हैं। यदि मशीन उत्तर गलत देती है तो इसमें मशीन का दोष नहीं, प्रोग्राम का दोष माना जाता है, क्योंकि मशीन गलत नहीं हो सकती।

कम्प्यूटर कई प्रकार के होते हैं। साधारण गणक से लेकर स्मरणशक्ति (Memory) वाली मशीनें। इनमें सूचनाएं इकट्ठी रहती हैं और उनका प्रयोग बाद में किया जा सकता है। इसकी मनुष्य के मस्तिष्क से तुलना की जा सकती है परन्तु यह कम्प्यूटर मनुष्य के मस्तिष्क की अपेक्षा बहुत तेजी से काम करता है। अब ऐसी अनेक मशीनों का प्रयोग होने लगा है जिनमें कम्प्यूटर लगे रहते हैं। वे उनका आवश्यक अंग बन गये हैं।

लेसर

लेसर यानी (Light amplification simulated emission of radiation) अर्थ है कि लेसर में होने वाला प्रकाश किसी दूसरे प्रकाश से प्रेरित होता है। इसके प्रकाश में इतनी अधिक ऊर्जा होती है कि वह सख्त धातुओं को भी काट डालती है।

लेसर तीन भागों में बांटा जा सकता है 1. प्रकाश ठोस पदार्थ में पैदा होता है 2. गैस में और, 3. अर्ध चालकों में।

लेसर किरणें दूरियां मापने के काम में भी आती हैं। यहां तक कि पृथ्वी और चन्द्रमा की बीच की दूरी का सही ज्ञान इनसे हो सकता है।

परमाणु-शक्ति के क्षेत्र में भी वैज्ञानिक कार्बन डाई-आक्साइड गैस युक्त गैसीय लेसर के प्रयोग की बड़ी आशाएं रखते हैं।

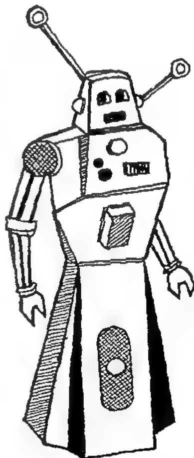
लेसर का विशेष लाभ यह है कि जहां एक्स--रे नहीं पहुंचता, वहां यानी शरीर के अति सूक्ष्म सैलों में लेसर पहुंचकर यह पता लगा लेता है कि उनमें रोगाणु कैसे पहुंचते और उन्हें कैसे विकृत करते हैं। लेसर उनके थ्री डाइमेंशनल चित्र उतारकर उनके अध्ययन में बहुत सहायक होता है। अत्याधुनिक रोग 'एड्स' का अध्ययन इसी लेसर के जरिये किया जा रहा है।

रोबो

रोबो (Robot) 'चैक' भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ है--दास। चलती-फिरती कम्प्यूटरीकृत मशीनें रोबो कहलाती हैं। इनमें सूचनाओं और निर्देशों को भर दिया जाता है और ये मशीनें स्वयं निर्णय लेती हैं कि कौन-सा कार्य किस तरह से किया जाए।

अधिकतर इन रोबो मशीनों से उस तरह का कार्य लिया जाता है जो कठिनतम और खतरनाक हो। इनका उपयोग उन बड़े-बड़े कारखानों में किया जाता है जहां सदा आदमी के प्राणों के लिए संकट बना रहता है। रोबो इतनी सरलता से कार्य करता है कि कारखानों में प्रतिदिन होने वाली दुर्घटनाएं बहुत कम हो गयी हैं। जापान में निर्माताओं के लिए रोबो बहुत उपयोगी सिद्ध हुए हैं जिससे उन्हें श्रमिक समस्या से नहीं जूझना पड़ता। वहां विभिन्न कारखानों में 2,00,000 से अधिक रोबो नियुक्त किए गए हैं जो विश्व भर में रोबो मशीनों की संख्या का 60वां भाग है।

भारत द्वारा निर्मित रोबो

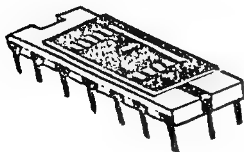


बड़े-बड़े कारखानों में भारी तादाद में एक जैसी वस्तुएं

बनती हैं। उदाहरण के लिए मोटरकार का कारखाना लीजिए—मोटरकार के विभिन्न भागों को बनाने के लिए अलग-अलग असैम्बली-लाइनें होती हैं—अर्थात् किसी भी एक भाग को कई हिस्सों में पूरा करने के लिए कनवेयर बैल्ट का प्रयोग किया जाता है और उस बैल्ट के विभिन्न भागों को पूरा करने के लिए अलग-अलग कारीगर होते हैं। इस तरह कई कारीगरों के हाथ से निकलने पर मोटर का एक भाग पूरा होता है। कारखानों में वह काम बहुत तेजी से होता है और फिर उसका एक मानदंड भी होता है। इसलिए अब अनेक कारखानों में यह काम रोबो यंत्रों से लिया जाता है। रोबो एक यंत्र है और यंत्र आदमी की अपेक्षा थकता नहीं और एक तरह का काम करते-करते उकताता भी नहीं। वह हफ्तों बिना रुके काम कर सकता है। इससे उत्पादन भी बढ़ता है।

वैज्ञानिकों ने वर्षों के प्रयत्न से रोबो का आविष्कार तो कर दिया और मानव के स्थान पर उससे अनेक काम भी करवा लिये, परन्तु वे रोबो को आदमी नहीं बना पाए। आदमी उंगलियां, कलाई, कोहनी और बगल आदि हिस्सों को जिस प्रकार घुमा-फिरा सकता है, जितने काम ले सकता है, रोबो ऐसा कुछ नहीं कर सकता—परन्तु हां, वह भारी भरकम और जान-जोखिम के काम बखूबी करता है और बिना बोरीयत के करता रह सकता है। रोबो चांद पर उतरा, वह समुद्र की उन गहराइयों में भी पहुंचा जहां मानव नहीं जा सकता।

सिलिकान चिप



सिलिकान चिप

सिलिकॉन तत्व के छोटे-छोटे चौकोर टुकड़े सिलिकॉन चिप कहलाते हैं, जिन्हें विद्युत संकेत प्रेषण के लिए प्रयोग में लाया जाता है। एक सेंटीमीटर वर्ग वाले चिप में कई हजारों छोटे-छोटे विद्युत सैल होते हैं। ये कई सर्किट बनाते हैं जो संग्रहण और सूचना एकत्र करते हैं। सम्पूर्ण चिप को सूक्ष्म परिपथ कहा जाता

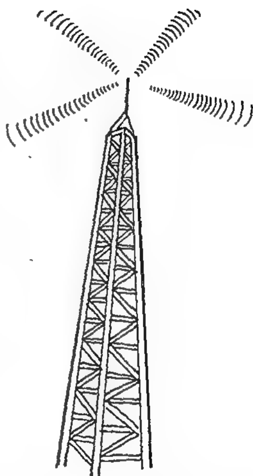
है। सुरक्षा की दृष्टि से इन्हें प्लास्टिक कवर में बंद रखा जाता है।

सिलिकॉन चिप का विशेष रूप से रोबो, कम्प्यूटरों, संगणकों तथा घड़ियों आदि में प्रयोग किया जाता है। ये अपेक्षाकृत सस्ते होते हैं और बिजली की खपत भी कम करते हैं। सिलिकॉन चिप टिकाऊ और भरोसेमंद भी होते हैं। इनका सबसे अधिक निर्माण जापान में होता है। अब भारत भी इस दिशा में कदम रख रहा है। यहां भी निर्माण होने लगा है। सिलिकॉन चिप के क रण ही संगणक आदि इतने छोटे बनने लगे हैं जिन्हें जेब में रख सकते हैं।

सूक्ष्म तरंगें

रेडियो प्रसारण में प्रयोग की जाने वाली विद्युत चुम्बकीय सूक्ष्म तरंगें कहलाती हैं। ये प्रकाश के वेग से चलती हैं, यानी इनका वेग 1,86,000 मील प्रति सेकंड होता है।

आपका स्थानीय दूरभाष केन्द्र माइक्रोवेव लिंक द्वारा असंख्य टेलीफोन संकेतों को एक विशेष कोड में बदलता है। सूक्ष्म तरंगें एक बार में हजारों टेलीफ़ोन संदेश ले जा सकती हैं। दूसरे स्टेशन पर यह विशेष कोड पढ़े जाते हैं और मूल निर्दिष्ट संदेश अलग छांटकर गन्तव्य स्थान तक पहुंचा दिए जाते हैं ताकि वे दूसरे संकेतों में बाधा न डालें। संचार माध्यमों में इन तरंगों और आप्टिक फाइबर का विशेष योग है।



दूरसंचार के क्षेत्र में सूक्ष्म तरंगों का महत्व सर्वविदित है। इन्हीं की सहायता से सैकड़ों-हजारों कि० मी० की दूरी से संदेश क्षणों में ही प्राप्त हो जाते हैं।

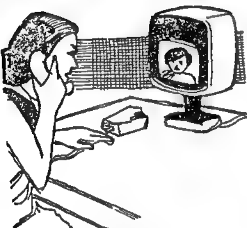
वीडियो

वीडियो आज के मनोरंजन की दुनिया का एक प्रमुख और बढ़िया साधन है। इसका प्रचलन भी बहुत है। वीडियो वास्तव में टेलीविजन और टेप रिकार्डर का मिश्रित स्वरूप है। इसका कार्य यह है कि टेलीविजन के किसी भी कार्यक्रम को वीडियो में रिकार्ड किया जा सकता है और जब चाहे उसे टेलीविजन पर फिर देखा-सुना जा सकता है।

वीडियो के रिकार्डर में एक टेप होती है। उसमें एक पुर्जा

होता है जिसे 'पिक-अप' कहते हैं। उसके द्वारा कोई प्रोग्राम टेप पर रिकार्ड होता है। जब आपका टेलीविजन सामान्य रूप से टेलीविजन स्टेशन से प्रसारित कार्यक्रम को ग्रहण कर रहा होता है, तो यदि आप उसका वीडियो रिकार्डर से सम्बन्ध जोड़ देंगे तो 'पिक-अप' उन्हें ग्रहण करके टेप पर रिकार्ड कर देगा। इस प्रकार आपके पास अपना एक प्रोग्राम तैयार हो जाता है, जिसे आप जब चाहें टेलीविजन पर देख सकते हैं।

वीडियो टेप सामान्य टेप नहीं होता। उस पर लाखों की संख्या में मैगनेट कणों का लेप होता है। इन्हीं लाखों कणों से मिलकर चित्र बनता है। पिक-अप में विद्युत के प्रवाहित होते ही इलेक्ट्रान गतिशील हो जाते हैं। विद्युत धारा यदि कमजोर है तो चित्र भी धुंधला उभरेगा। पिक-अप एक प्रकार का कायल है, जिससे टेप पर शब्द और चित्र दोनों अंकित होते हैं।



वीडियो फोन में बात करने वाले एक दूसरे का चेहरा भी देख सकते है।

वीडियो फोन

वीडियो फोन भी विज्ञान की एक नई देन है। बातचीत के साथ-साथ बातचीत करने वाले व्यक्ति का चेहरा भी रूबरू हो तो कैसा आनन्द प्राप्त हो। इस उपकरण से यह भी संभव है

प्रकाशकीय तंतु

प्रकाशकीय तन्तु (Optic fibre) एक विशेष प्रकार के शीशे के लम्बे रेशे होते हैं। उनके एक फलक पर पड़ी रोशनी बहुत दूर तक उतनी चमकदार रोशनी में परावर्तित होती है।

सूक्ष्म तरंगों की तरह आप्टिक फाइबर भी एक साथ असंख्य टेलीफोन संदेश ले जा सकते हैं। ये सन्देश उसी तरह के कोड के माध्यम से प्रसारित होते हैं और लेसर के द्वारा इन्हें प्रकाश-बिंबों में बदला जाता है। तब इन प्रकाश बिम्बों को दूसरे फलक पर पढ़ा और सुना जा सकता है।

सूक्ष्म तरंगों की तरह प्रकाशकीय तन्तु भी हमारे संचार माध्यमों, दूरभाष और दूरदर्शन के लिए बहुत लाभप्रद हैं।

राकेट

अन्तरिक्ष यात्रा, और मानव निर्मित उपग्रहों को अंतरिक्ष में स्थापित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका राकेटों की है। इनके विना यह कार्य सम्भव नहीं हो सकते थे।

आग जलाने के लिए हवा अर्थात् आक्सीजन की आवश्यकता होती है। आधुनिक जैट इंजनों में भी जो इंधन जलता है वह हवा के संपर्क से ही, परन्तु जव हम पृथ्वी के वायुमण्डल (50 से 500 मील ऊपर तक) से वाहर निकल जाते हैं तो वहां जैट इंजन भी काम नहीं करता, वहां राकेट काम करता है।

जैट और राकेट में अन्तर यही है कि जैट इंजन को अपने दहन कक्ष में इंधन को जलाने के लिए वाहर से आक्सीजन की आवश्यकता होती है और राकेट में जमे हुए तरल ऑक्सीजन से काम चलता है जिसको 'लाक्ष' (Liquid Oxygen) कहते हैं। इस प्रकार राकेट निर्वात अर्थात् वायुरहित स्थिति में भी काम करता है।

अंतरिक्ष में छोड़े जाने वाले उपग्रहों को पृथ्वी की कक्षा में स्थापित करने के लिए राकेटों का ही उपयोग किया जाता है। पृथ्वी की कक्षा में उपग्रह को स्थापित करने के लिए उसकी गति 8,000 मीटर प्रति सैकिण्ड अथवा 18,000 मील प्रति घण्टा होनी चाहिए। यह कार्य वहुस्तरीय (Multi Stage) राकेटों द्वारा ही संभव होता है। इस प्रकार अन्तरिक्षयान के साथ वहुस्तरीय राकेट होते हैं। जव एक राकेट जल जाता है तो वह स्वत: नीचे गिर जाता है और दूसरा राकेट काम करने लगता है। इस प्रकार उपग्रह को ठेल प्राप्त होती है और वह आगे वढ़ता है। जव उपग्रह को नीचे उतारा जाता है तो यही क्रिया विपरीत स्थिति में होती है और उपग्रह के ऊपर की हवाई छतरी खोल दी जाती है जिससे चाल में काफी कमी आती है और वह एकाएक पृथ्वी के साथ टकराकर चूर-चूर होने से वच जाता है।

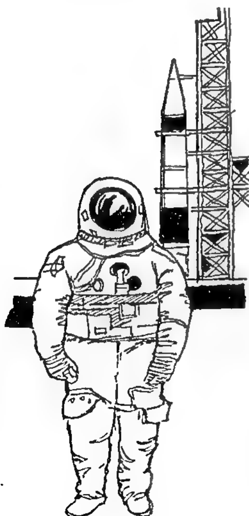
राकेटों का उपयोग अब युद्धों के लिए अधिकाधिक होने लगा है। किसी-न-किसी प्रकार के राकेट 11वीं शताब्दी से युद्धों में



राकेट

प्रयुक्त हो रहे थे, परन्तु द्वितीय विश्वयुद्ध में तो जर्मन राकेटों ने लन्दन पर बुरी तरह आक्रमण किये थे। युद्ध के बाद अब इनका उपयोग अन्तरिक्ष यात्राओं के लिए होने लगा है। रूस और अमेरिका इस दिशा में काफी कार्य कर चुके हैं। भारत भी अन्तरिक्ष युग में पहुंच चुका है।

उपग्रहों की उड़ानों अथवा उनके अन्तरिक्ष में स्थापित करने के अनेक लाभ हैं। इनसे दूरदर्शन कार्यक्रम विश्वभर में प्रसारित किये जा सकते हैं।



एक अंतरिक्ष यात्री और मानव निर्मित उपग्रह।

अन्तरिक्ष यात्रा

संभवत: मानव ने कभी सूरज, चांद, सितारों तक पहुंचने की कल्पना की हो—जैसे पहले-पहल उसने पक्षियों को आकाश में उड़ते देख उड़ान के सपने संजोये थे। जिन ग्रहों-उपग्रहों के बारे में उसकी विचित्र धारणाएं थीं, आज विज्ञान ने मानव के लिए उनके रहस्यों को खोलना आरम्भ कर दिया है। आधुनिक वैज्ञानिक इस सम्बन्ध में बहुत दिनों से प्रयत्नशील थे कि चन्द्रमा तथा दूसरे ग्रहों तक किस प्रकार यात्रा सम्भव हो सकती है। इस यात्रा में सबसे बड़ी बाधा पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति थी। पृथ्वी अपने आस-पास के सभी पिण्डों को अपनी ओर खींचती है और इसलिए सभी वस्तुएं पृथ्वी की ओर आकर्षित होकर उस पर गिर पड़ती हैं। इस विषय में राकेटों के परीक्षण बहुत दिनों से प्रारम्भ हो गये थे और यह सोचा जा रहा था कि यदि किसी पदार्थ को 7 मील प्रति सेकेण्ड की गति से फेंका जाय तो वह पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति से पूरी तरह से मुक्त हो सकता है।

अन्तरिक्ष के अन्दर से गुजरने वाली सारी वस्तुएं पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण नियम का पालन करती हैं। मुख्य अन्तर के लिए यह जानना आवश्यक है कि अन्तरिक्ष में जाने वाली वस्तु (या राकेट इत्यादि) में कितनी ताकत है तथा उसका आकार क्या है।

अन्तरिक्ष में फेंकी गई $5\frac{1}{2}$ औंस की क्रिकेट की गेंद अगर

100 फुट तक पहुंच सकती है तो इसमें निहित ऊर्जा का मान 100 फुट पौण्ड होगा। अगर यही गेंद किसी बन्दूक के द्वारा फेंकी जाय तो इसमें 4100 फुट पौण्ड की ऊर्जा होगी तथा उस दशा में पृथ्वी पर गिरने से पहले यह कुछ मील तक ऊपर जा सकती है। लेकिन क्या आप सोच सकते हैं कि चन्द्रमा में क्रिकेट की गेंद को फेंकने में कितनी ऊर्जा की आवश्यकता होगी? इसका उत्तर है लगभग 70 लाख फुट पौण्ड ऊर्जा, और इसका मतलब यह है कि वस्तु 40,000 फुट सेकेण्ड या 25000 मील प्रति घंटे की गति से जमीन से फेंकी जाय। यह क्रान्तिक 'बचाव गति' है, जिससे नीचे फेंकी गई वस्तु पृथ्वी पर वापस आ जायेगी।

किसी वस्तु को इतनी अधिक गति से फेंकने के लिए राकेटों का उपयोग किया जाता है। वैज्ञानिक कपोल कथाओं के लेखकों ने एक अन्तरिक्षयान को चन्द्रमा में भेजने के लिए उसे बन्दूक से फायर करना भी प्रस्तावित किया था।

मानव को अन्तरिक्ष में भेजने के लिए पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण के चार या आठ गुणा त्वरण की आवश्यकता पड़ सकती है। पृथ्वी के गुरुत्वाकर्पण के चार गुणा त्वरण से फायर किया अन्तरिक्ष यान 5 मिनट के बाद बचाव गति को प्राप्त करेगा, जब यह 2000 मील की ऊंचाई तक पहुंच चुका होगा।



अन्तरिक्ष में राकेट की प्रणोद प्रक्रिया का संकेत।

एक राकेट एक दिशा में प्रज्वलित होता है, तथा दूसरी दिशा में विशाल भार को फेंकता है। वास्तविक रूप में राकेट के द्वारा फेंकी गई वस्तु कुछ नहीं है बल्कि इसमें जला हुआ ईंधन है। संवेग को और अधिक बढ़ाने के लिए ईंधन को एक आक्सीकारक के साथ मिलाया जाता है। प्रज्वलन से निर्मित गर्म गैसें राकेट में लगे जेटों से बाहर निकलती हैं तथा प्रतिक्रिया से प्रणोद पैदा करती हैं।

राकेट के पृथ्वी से उठने के समय बहुत अधिक प्रणोद की आवश्यकता होती है, क्योंकि उस समय अधिक प्रणोद की आवश्यकता राकेट यान के भार के सन्तुलन के लिए होती है। इसका मतलब यह हुआ कि जनित प्रणोद पृथ्वी की गुरुत्वाकर्पण

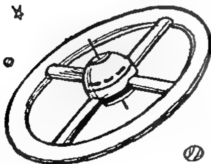
शक्ति को उदासीन करता है तथा थोड़ा-सा ही प्रणोद यान के त्वरण को बढ़ाने के लिए बचता है। जैसे-जैसे राकेट ऊपर उठता है, ईंधन का प्रयोग बढ़ता रहता है तथा इसका त्वरण पृथ्वी के गुरुत्वाकर्पण के एक चौथाई से बढ़कर चार गुना हो जाता है।

यदि चन्द्रमा तक जाना हो तो यह आवश्यक हो जाता है कि इतनी लम्बी अन्तरिक्ष यात्रा कई भागों में की जाय। इसके लिए पहले अन्तरिक्ष यान को पृथ्वी की पार्किंग कक्षा में लगभग 100 मील की ऊंचाई पर रखा जाता है, जहां पर वृत्तीय कक्षा में राकेट की गति 17,500 मील घंटे हो जाती है। इस समय राकेट का अपकेन्द्री बल पृथ्वी की गुरुत्वाकर्पण शक्ति को केवल सन्तुलित कर सकता है। अगर इसी हालत में राकेट की गति थोड़ा बढ़ा दी जाय तो अपकेन्द्रीवल तथा पृथ्वी की गुरुत्वाकर्पण शक्ति के बीच असन्तुलन पैदा हो जाता है तथा वृत्तीय कक्षा अंडाकार कक्षा में बदल जाती है। इस क्षण राकेट पृथ्वी से दूर जाता है तथा उसके बाद पृथ्वी के समीप आता है। इस अंडाकार कक्षा के सबसे समीप के विन्दु को 'पेरिजी' तथा सबसे दूरी के विन्दु को 'अपोजी' कहते हैं। पेरिजी विन्दु पर जैसे ही राकेट की गति वृत्तीय कक्षा के लिए आवश्यक गति से बढ़ती है, जिससे कि नई अंडाकार कक्षा की अपोजी अन्तरिक्ष में और बढ़ जाती है (जब तक कि 25,000 मी० प्रति घंटे की बचाव गति नहीं पहुंच जाती) उस समय अपोजी अनन्त हो जाती है तथा कक्षा अंडाकार हो जाती है।

अंतरिक्ष स्टेशन

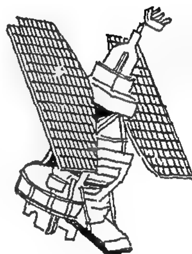
आदमी चांद पर पहुंच चुका है। अन्य ग्रहों के संबंध में उनके अत्यंत निकट पहुंचकर उनकी जानकारी भी आज उसकी मुट्ठी में है। अंतरिक्ष यात्राएं बहुत महंगी पड़ती थीं क्योंकि अंतरिक्ष यानों को ईंधन लेने अथवा उनकी मरम्मत आदि के लिए धरती पर आना पड़ता था, इसी व्यय को रोकने तथा अन्य सम्भावनाएं देखनेके लिए अन्तरिक्ष स्टेशनों का निर्माण किया गया।

अन्तरिक्ष बस्तियां अंतरिक्ष स्टेशन का काम भी दे सकती हैं।



अन्तरिक्ष में घूमते हुए प्लेटफार्म या अन्तरिक्ष यान अन्तरिक्ष स्टेशनों का सृजन करते हैं। अन्तरिक्ष स्टेशनों का वर्गीकरण निम्न तरीकों के किया जा सकता है :—

कृत्रिम उपग्रह भी एक प्रकार के अन्तरिक्ष प्लेटफार्म होते हैं। ये पृथ्वी की निम्न कक्षा तथा उच्च कक्षा दोनों में ही स्थापित किये जाते हैं। इनमें मनुष्य नहीं भेजे जाते। इनकी पृथ्वी से अधिकतम दूरी 36,000 कि० मी० होती है। इनका नियन्त्रण पृथ्वी के स्टेशनों के द्वारा किया जाता है। इन उपग्रहों का प्रयोग संचार, सुदूर संवेदन तथा मौसमी कार्यों के लिए किया जाता है। इन उपग्रहों का जीवन काल कुछ महीनों से लेकर लगभग सात साल तक के लिए होता है। इस प्रकार के कृत्रिम उपग्रह अन्तरिक्ष में विचित्र प्रकार और आकारों के होते हैं।



अंतरिक्ष प्रयोगशाला

स्पेस स्टेशन एक प्रकार की अन्तरिक्ष प्रयोगशालाएं होती हैं जो पृथ्वी की कक्षा में चक्कर लगाती हैं। इन प्रयोगशालाओं का प्रयोग अन्तरिक्ष से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार के अध्ययनों के लिए किया जाता है। ये स्पेस स्टेशन अन्तरिक्ष की विभिन्न कक्षाओं में स्थापित किये जाते हैं। कुछ अन्तरिक्ष स्टेशन कुछ अन्य ग्रहों के अध्ययनों के लिए भी प्रयुक्त होते हैं। इसके लिए वे पृथ्वी से काफी दूर पर स्थित किये जाते है। कुछ स्पेस स्टेशन मानवयुक्त होते हैं तथा अन्य मानव रहित। मानवयुक्त अन्तरिक्ष स्टेशनों के अन्दर का पर्यावरण इस प्रकार का होता है जिससे कि मनुष्य उसके अन्दर उसी तरह रह सके जिस प्रकार वह पृथ्वी के पर्यावरण में रहता है।

एक अन्य स्पेस स्टेशन 15000 पौण्ड वजन वाला होता है। इसमें काम करने वाले चालक अथवा वैज्ञानिकों को 3 महीने बाद बदल दिया जाता है। उन्हें एक यान धरती से उस घूमते हुए स्पेस स्टेशन तक ले जाता है जो वहां जाकर उससे जुड़ जाता है और नया दल उसमें प्रवेश कर जाता है और पहले वाले लोग उसी यान से लौट आते हैं।

अंतरिक्ष स्टेशनों की आंतरिक संरचना

अन्तरिक्ष स्टेशनों के आन्तरिक ढांचे के निर्माण में कई बातों का ध्यान रखना पड़ता है। उपकरणों के प्रचालन में यह ध्यान रखना पड़ता है कि कौन-सा उपकरण प्रचालन के लिए कितने व्यक्तियों की आवश्यकता को जन्म देगा। यह भी ध्यान में रखना पड़ता है कि कुछ विशेप प्रकार के गतिज प्रचालन (जैसे अन्तरिक्ष यान डाकिंग, डाटा उगलब्धि, कैप्सूल पृथक्करण तंत्र, अभिवृत्ति नियन्त्रण तंत्र इत्यादि) तंत्र सूक्ष्मग्राही उपकरणों से दूर रखे जाने वाले कक्ष में होते हैं तथा टेलीस्कोप और कैमरा जैसे सूक्ष्मग्राही यन्त्र अन्तरिक्ष यान के पिछले हिस्से में होते हैं।

एक अन्तरिक्ष स्टेशन के कई हिस्से होते हैं जो एक-दूसरे से अलग-अलग होते हैं। आपातकालीन परिस्थितियों में एक अकेले कक्ष से सारे अन्तरिक्ष यात्रियों का बचाव किया जा सकता है। इसके लिए सभी कक्षों से गुजरती हुई एक केन्द्रीय सुरंग बनाई जाती है। अन्तरिक्ष की ठंडी दिशाओं में मनुष्य तभी जीवित रह सकता है जब कक्ष के अन्दर पर्याप्त ऑक्सीजन की सप्लाई हो तथा कक्ष का तापमान आरामदेह हो।

अन्तरिक्ष स्टेशनों के डिजाइन में अन्तरिक्ष यात्रियों की सुरक्षा तथा उनकी सकुशल वापसी बहुत आवश्यक है। अन्तरिक्ष स्टेशनों का प्रत्येक हिस्सा बड़े सुरक्षात्मक ढंग से निमित किया जाता है। मानवयुक्त अन्तरिक्ष यानों के डिजाइन में इस बात का विशेष ध्यान रखा जाता है कि एक तंत्र की खराबी अन्तरिक्ष यात्रियों की सुरक्षा को खतरा न पैदा कर दे। इसके लिए अतिरिक्त तंत्रों और अवयवों का प्रयोग किया जाता है जिससे कि एक तंत्र अथवा एक अवयव की खराबी के कारण उसकी जगह दूसरा तंत्र एवं अवयव लगाया जा सके। मानव-युक्त अन्तरिक्ष स्टेशनों के लिए भी इस प्रकार के आपातकालीन उपायों का प्रस्ताव किया गया जिसके अन्तर्गत अन्तरिक्ष स्टेशन के लिए आपातकालीन वापसी यान अन्तरिक्ष यान में रखे रहेंगे।■

